टकसाली हिन्दी

शब्द-निरूपण

उक्ति-निरूपण

दोष-निरूपण

साहित्य-निरूपण

अनुवाद-निरूपण

शब्द-संचय

सूर्यकान्त

प्रकाशक
गौरीशंकर शर्मा, मैनेजर,
एस० चन्द एण्ड कम्पनी,
फ़व्वारा—दिल्ली ।

प्रथम बार : १६५०
मूल्य
साढ़े चार रुपये
४॥)

मुद्रक
ईश्वर चन्द, बी० ए०
स्वतन्त्र भारत प्रेस,
४२३, कूचा बुलाकी बेगम,
एस्प्लेनेड रोड, दिल्ली ।

दो शब्द

देश को आज़ादी मिलते ही हिन्दी ने अपना स्थान स्वयं बना लिया और आज वह राष्ट्र-भाषा बनती दीख रही है। उसके विकास और प्रचार के लिये भाँति-भाँति की आयोजनाएँ बन रही हैं और जगह-जगह इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये संस्थाएं खुल रही हैं। तेज़ी के साथ बढ़ती और फैलती हिन्दी को उचित मार्ग पर चलाना आवश्यक-सा बन गया है इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर टकसाली हिन्दी भाषा-क्षेत्र में उतरी है।

स्वाभाविक है कि उस युग में, जबकि नौसिखिये या पराये किसी भाषा को अपनावें, उस भाषा की शब्दावलि बेतुकी बन जाय और उसकी सरणि तथा शैली में कुछ अजनबीपन या भोंडापन आ जाय। अंग्रेज़ी पढ़े लिखे तेज़ी से हिन्दी-क्षेत्र में घुसे, उन्होंने अंधा-धुन्ध अंग्रेज़ी का हिन्दी में अनुवाद किया और अनदेखे ही बाह्य भाषा के परिधान हिन्दी को पहरा दिये। अब आई परप्रान्तियों की बारी; वे भी तेज़ी के साथ हिन्दी के भक्त बने और उन्होंने भी अपनी भक्ति के फूल इसके चरणों में चढ़ाये, किंतु तेज़ी में फूलों का चुनाव न बन पड़ा और उतावलेपन से इन फूलों की उसके चरणों में उठबैठ भी ठीक न हो पाई। हिन्दी की इस अनोखी पूजा को बरसों से देखता आ रहा था—किंतु वैदिक और संस्कृत साहित्य से छुट्टी न मिल पाई थी; सोचता था कि कल लिखूँगा, परसों लिखूँगा; कल और परसों करते-करते पिछड़ता गया और यह दिन आ लगा।

फिर छात्रों की अनुसंधान-संबन्धी पुस्तकें [illegible] को मिलीं; दिल बैठता गया और मन में कुछ निराशा-सी छाती दीखी। सोचा, बीमारी बढ़ रही है! यह बेतुकी पूजा तो हिन्दी-रमणी के रुचिर शरीर को

भौंडा बना डालेगी; इसका प्रतीकार होना चाहिये और वह भी तुरन्त। इसी संकल्प में टकसाली हिन्दी का अवतार हुआ है। हिन्दी के सेवक इसे किस दृष्टि से देखते हैं यह देखना है।

मानता हूँ कि भाषा को व्याकरण की शुष्क प्रक्रिया में बांधना उस पर अत्याचार करना है; किंतु एक सीमा तक बन्धन भी रमणीय होते हैं, फिर व्याकरण के बन्धन तो भाषा पर कनक-कुण्डल का काम देते हैं। उनमें बंधकर भाषा खिल उठती है और उसमें एक अजीब उमङ्ग और जान पड़ जाती है। मैं कहता हूँ कि हिन्दी-लेखकों में व्याकरण की भावना कम रही है; वे अब तक उच्छृङ्खलता को ही आज़ादी मानते रहे हैं और आपाधापी ही को सच्ची हिन्दी-शैली गिनते रहे हैं। टकसाली हिन्दी इस प्रवृत्ति का विरोध करती है और लेखकों के सामने एक ऐसी शैली पेश करती है जो उनकी हिन्दी को सचमुच सोहनी हिन्दी बना देगी, उनकी कलम में सरस्वती का मन्त्र फूक देगी। तब हिन्दी को चार चांद लग जायंगे और तब उसे भारत के सारे प्रान्त चाहने लगेंगे और वह सहज ही अपने आसन पर शोभायमान हो जायगी।

हिन्दी में इस प्रकार की रचनाएं बहुत-सी हैं; किंतु उनमें से किसी ही का दृष्टिकोण वैज्ञानिक होगा। उनके प्रवर्तक लेखक हैं तो वैयाकरण नहीं, वैयाकरण हैं तो लेखक नहीं; टकसाली हिन्दी के स्रोत में दोनों बातें उचित मात्रा में संमिलित हैं और इसीलिये इसमें जहां मन्थरता है वहां साथ ही चमक भी है, ओज भी है और सौन्दर्य भी है।

हिन्दी तेज़ी के साथ फल-फूल रही है, इसका प्रचार भी हो रहा है। यह वह माता है जिसे उसका आसन जीवन में पहली बार मिला है। उस जीवन के पहले दिन मैं इसे अपनी टकसाली हिन्दी भेंट करता हूँ। आशा है इसे पाकर मां मुझे आशीष देगी।

जलंधर
१-२-१९५०

सूर्यकान्त

विषय सूची

शब्द-निरूपण

१

रचना को सफल बनाने के लिये नीचे लिखी बातें अपेक्षित हैं :—

भाव— भाषा का आधार भाव है। जो हम सोचते हैं वही लिखते हैं। जैसे हमारे भाव होंगे वैसी ही भाषा होगी। भाव सच्चे और सबल हुए तो भाषा भी खरी और चलती होगी। भाव निर्बल हुए तो भाषा भी लचर होगी। अच्छी भाषा के लिये उत्कृष्ट भाव आवश्यक हैं।

भावार्जन के लिये सूक्ष्म निरीक्षण, व्यापक पठन और निगूढ़ अनुभूति अपेक्षित हैं। यह जगत् हर समय चलता रहता है, इसकी चाल को आँख खोल कर देखना ही सूक्ष्म निरीक्षण है। जिधर देखो आदमी अपने व्यापार में रत है; उसके उत्थान और पतन का नाटक चल रहा है। चेतन को रिझाने के लिये अचेतन प्रकृति यत्नशील है; फूल खिलते हैं, वनस्पति झूमते हैं, नदियां खिलखिलाती हैं, नक्षत्र दमकते हैं; दिन-रात का चक्र घूमता है, अशेष विश्व किसी तत्त्व की खोज में लालायित है। इस महान् नाटक को ध्यान से देखना ही सूक्ष्म निरीक्षण है।

विश्व-मञ्च पर नाटक खेलने वाले मानव की बहुमुखी लीलाओं को पारखी पण्डितों ने साहित्य के रूप में मुखरित

किया है। इन पण्डितों की चुनी हुई रचनाओं को ध्यान से पढ़ना चाहिये और उन पर मनन करना चाहिये। साहित्य एक समुद्र है; इसमें जितना पैठोगे उतने ही रत्न पाओगे।

देखते सभी हैं; पर देखना उन्हीं का है जो देख कर कलेजे में धर लेते हैं, जो देख कर अनुभव करते हैं। संसार में यातना का ताण्डव सभी खेलते और देखते हैं, पर किन्हीं के मन में इसे देख अनुभूति जग जाती है और उनका दिल बह निकलता है; उनके दिल का बहना ही वाणी का रूप धारण कर साहित्य बन जाता है। साहित्य के स्रष्टा को अपने हृदय में अनुभूति जगानी चाहिये; दृश्य के साथ एक बन कर उसका रागात्मक अनुभव करना चाहिये। हृदय में राग आते ही भीतर की तन्त्री बज उठती है और आत्मा अपने भावों को जीवित भाषा में प्रकट करने लगता है।

भाषा— भावों को प्रकट करने का उत्तम साधन भाषा है। भाषा के दो भाग हैं; शब्द और वाक्य-रचना।

शब्द— जिस प्रकार भाव का भूषण सरलता है इसी प्रकार शब्द का भूषण भी सरलता है। सफल रचना में शब्द सुबोध होने चाहियें, सजीव होने चाहियें, चलते और व्यञ्जक होने चाहियें। जटिल शब्द रचना को दुरूह बना देते हैं, निर्जीव शब्द रचना को बेजान बना देते हैं और निःसार शब्द उसे थोथी बना देते हैं। शब्द सुन्दर, सरस और सुघटित होने चाहियें। लचर शब्दों में लोच नहीं होता; और लोच ही जीवन का प्रधान लक्षण है।

वाक्य-रचना— वाक्य-रचना ऋजु होनी चाहिये। जटिल या मिश्रित वाक्य-रचना दुरूह बन जाती है।

शब्दों की उठबैठ ठीक होनी चाहिये, उनका मेल समञ्जस होना चाहिये। शब्द-योजना में व्याकरण पर ध्यान रखना चाहिये; क्योंकि रचना की रीढ़ व्याकरण के नियम हैं।

शैली— हम अपने भावों को अपने शब्दों में किसी शैली में व्यक्त करते हैं। इस शैली ही को मर्यादा या स्टाइल कहते हैं। भाव और भाषा प्राञ्जल हुए तो शैली अपने आप निखर जायगी।

हर भाषा की अपनी शैली अलग होती है। हिन्दी की भी अपनी निराली शैली है। हिन्दी में बंगला, मराठी, गुजराती या अंग्रेजी शैली का समावेश करना उसे बहु-रूपी बना देना है। शैली एक होनी चाहिये और खरी होनी चाहिये।

भाव, भाषा और शैली में चलतापन लाने के लिये अभ्यास अपेक्षित है। बहुधा आज के विद्यार्थी हिन्दी को आसान समझ इसमें लिखने का अभ्यास नहीं करते और समय आने पर बेतुका लिखने लगते हैं। यह अनुचित है। प्राञ्जल हिन्दी लिखना भी उतना ही कठिन है जितना चलती अंग्रेजी लिखना। हिन्दी में मुहावरों, लोकोक्तियों और चमत्कार के दूसरे उपकरणों की उतनी ही प्रचुरता है जितनी किसी और सबल भाषा में; इनको जानना और ठीक जगह बैठाना सिद्ध-हस्त लेखकों का काम है।

हर छात्र अभ्यास के द्वारा एक दिन हिन्दी का प्रशस्त लेखक बन सकता है। इसके लिये उसे प्रतिदिन किसी सफल हिन्दी लेखक की रचना को पढ़ना चाहिये और उसके आधार पर कुछ न कुछ लिखते रहना चाहिये। लिखते-लिखते भाषा मंजती जायगी और शैली पकती जायगी।

जिस प्रकार सरलता व सामञ्जस्य मनुष्य के अलंकार हैं उसी प्रकार वे भाषा के भी हैं। भाषा और शैली के दुर्बोध होने पर भाव अच्छी तरह नहीं खिलते और लेखक की रचना अध-खिली रह जाती है।

आख्यानों, जीवनियों और पत्रों की भाषा स्वभावतः आसान होती है। साहित्य की इन विधाओं में मनुष्य के भाव घरेलू होते हैं, फलतः इनकी भाषा भी घरेलू रहती है। उदाहरण के लिये:—

"रात चांदनी थी। मलयानिल बह रहा था। इस निशीथ में रात की रानी महक रही थी, गौतम का मन भर आया। उसे दिल की रानी याद आ गई; उसे अपने हृदय का टुकड़ा याद आ गया। वह लौटा। फूल की नांई यशोधरा चाँदी जैसे पलंग पर पड़ी थी; पास ही नन्हा फूल खिला हुआ था। इस फूल पर यशोधरा का हाथ रखा हुआ था। निर्मल यशोधरा के अवदात मस्तक पर अलकावलि के कुछ बाल उड़ रहे थे, और राहुल पर रखा हुआ उसका अरुण हाथ बार-बार मीठी हिलोरी के लिये हिलता था। चाँदनी भरी आधी रात का यह दृश्य सचमुच मनोरम था। गौतम ने चाहा कि एक बार सोते हुए सौन्दर्य से मिल ले और अपने जिगर के टुकड़े को छाती से लगाले। किंतु ऐसा करने पर उसका अर्धाङ्ग जाग जाता और उसकी प्रणय-बेड़ियां अटूट हो जातीं। गौतम ने मन मसोस लिया; उसने आह भरी; और वह सदा के लिये घर की चाँदनी को छोड़ सच की चाँदनी की खोज में चल दिया।"

कितने ऋजु भाव हैं और कैसी सरल भाषा में रखे गये हैं। गद्य क्या है बहता हुआ रस का सोता है। हर शब्द पाठक के मन में पैठता जाता है और हर वाक्य गौतम की उदात्त जीवनी को उसके लक्ष्य की ओर आगे बढ़ाता है।

भाषा भाव की चेरी है। जीवनी के भाव सरल होते हैं, फलतः उसकी भाषा भी सरल रहती है। इसके विपरीत विषय गहन हुआ तो भाषा भी गम्भीर बन जायगी। जैसे:—

"कविता का मर्म है आदर्श को उद्भावित करना, अपनी कल्पनामय दृष्टि से अन्ध जगत की तली में छिपे विन्यास तथा सौन्दर्य की, सत्य तथा ऋत की उत्थापना करना और अपनी निर्माणमयी वृत्ति द्वारा उसे कांदिशीक मर्त्य-समाज के संमुख ला खड़ा करना। कविता चरम सत्य का उत्थापन करके निराशा का प्रतीकार करती है; वह जीवन के संकुल प्रवाह की तली में निहित हुए सौन्दर्य की झांकी दिखाती है। वह शीर्ण हुए जीवनपट को फिर से बुन देती है, वह उसके विकीर्ण तन्तुओं में भी पीयूष का संचार कर देती है; वह जीवन के आशय तथा लक्ष्य में नवीनता ला देती है।"

उक्त संदर्भ में कविता के लक्ष्य का वैज्ञानिक निरूपण है; और क्योंकि यह विषय निगूढ है, इसलिए इसे व्यक्त करने वाली भाषा और शैली भी गहन बन गई हैं।

रचना का परिष्कार उसके सामञ्जस होने में अर्थात भाव और भाषा के परस्पर अनुकूल होने में है। यह सामञ्जस्य, सतत अध्ययन और निरन्तर अभ्यास से आता है।

पुस्तक पढ़ते समय शब्दों के रूप और अर्थ पर ध्यान देना चाहिये और समान ध्वनि वाले शब्दों की उनके अर्थों के साथ तालिका बना लेनी चाहिये। ऐसा करने से छात्रों का शब्द-भण्डार बढ़ेगा और उनकी रचना में विविधता और चमत्कार पैदा होगा।

छात्रों की सुविधा के लिए नीचे कुछ शब्दों की सूची दी जाती है। इसे ध्यान से पढ़ना चाहिये और इन शब्दों का अपने लेखों में समझ कर प्रयोग करना चाहिये।

शब्दों का अध्ययन

२

अकड़ = ऐंठ : आँकड़ा = हिसाब, अंक
अकाण्ड = असमय : प्रकाण्ड = महान्
अगार = घर : पगार = कीचड़
अग्र = आगे : उग्र = कठोर
अघ = पाप : अघाय = तुष्ट होना
अघाना = संतुष्ट होना : औंघना = आलस्य में ऊंघना
अचर = न चलने वाला : अनुचर = नौकर
अचिर = जल्दी : अजिर = आँगन
अज्ञ = न जानने वाला : विज्ञ = विद्वान्
अटा = बुर्ज : आटा = चूर्ण
अतीत = बीता हुआ : अतीत = दीखा हुआ
अतुल = जिसकी तुलना न हो सके : अतल = गहरा, महान्
अथवत = अस्त होता है : अर्थवत् अर्थवाला
अधन = निर्धन : निधन = मृत्यु
अधित्यका = पहाड़ के ऊपर की जगह : उपत्यका तराई
अध्यवसाय = सतत श्रम : व्यवसाय = धन्धा
अध्वर = यज्ञ : अधवर = आधा रास्ता
अनघड़ = बेडौल : सुघड़ = तमीज़ वाला
अनल = अग्नि : अनिल = वायु
अनिष्ट = जो इष्ट न हो : अभीष्ट = जो इष्ट हो

अनी=फौज : घना=संकुल
अनुनय=विनय : अभिनय=नाटक खेलना
अनुभूत=जिसका अनुभव किया हो : पराभूत=जिसका तिरस्कार किया हो
अनुमान=तखमीना : उपमान=सादृश्य
अनुराग=प्रेम : अनुरूप=अनुकूल
अन्तराय=विघ्न : अन्तराल=बीचमार्ग
अन्न=भोज्य : अन्य=दूसरा
अपत्य=संतान : अपथ्य=जो बीमार के अनुकूल न हो
अपेक्षा=निस्बत : उपेक्षा=अवहेलना
अभिज्ञ=जानने वाला : अभिन्न=एक, जो भिन्न न हो
अमली=नशा करने वाला : अमल=निर्मल
अमित=जो नपा न हो : अमात्य=मन्त्री
अरु=और : उर=छाती
अरुण=लाल : करुण=दयनीय
अरूप=जिसका रूप न हो : अनुरूप=अनुकूल
अर्पण=सौंपना, देना : दर्पण=शीशा
अर्वाचीन=हाल का : समीचीन=अच्छा
अलक=घुंघराले बाल : अलीक=असत्य
अवज्ञा=अपमान : आज्ञा=हुक्म
अवतरण=उतरना : संतरण=तैरना
अवदात=सफेद : उदात्त=ऊंचा, उत्कृष्ट
अवनति=नीचे गिरना : उन्नति=ऊपर चढ़ना
अवरोधन=अन्तःपुर : आराधन=पूजन
अवसान=अन्त : आसान=सरल

अवस्था=हालत : व्यवस्था=प्रबन्ध, तरतीब
अविरत=लगातार : रत=लगा हुआ, मस्त
अव्यय=जो व्यय न हो : अपव्यय=फ़ज़ूलख़र्ची
अशन=भोजन : वसन=वस्त्र
अशेष=सारा : विशेष=ख़ास
असल=यथार्थ : नस्ल=जाति
अहि=साँप : आहि=है, अस्ति
आखात=खाड़ी : आस्वाद=स्वाद
आख्यात=धातु : ख्यात=प्रसिद्ध
आगाह=सावधान : गवाह=साक्षी
आचार=आचरण : उपचार=इलाज; मङ्गल-क्षेम पूछना
आड़=परदा : राड़=दङ्गा
आतप=धूप : परिताप=चिन्ता
आदेश=आज्ञा : प्रदेश=जगह
आधार=सहारा : उधार=ऋण
आपत्ति=मुसीबत : संपत्ति=धन
आपद=आपत्ति : आस्पद=स्थान, योग्य, पात्र
आभरण=गहना : आहरण=हरना, ले जाना
आमिष=मांस : निमिष=क्षण
आयत=लम्बा : आयात=आना
आर्त=दुखी : आर्द्र=गीला
आलाप=बोलना : विलाप=रोना
आलोक=प्रकाश : विलोक=देखना
आवर्तन=लौटना : परिवर्तन=तबदीली
आविल=गदला : आवलि=पंक्ति

आविष्कार=खोज : परिष्कार=सजाना
आवृत्ति=दुहराना : निवृत्ति=हटना
आवेश=जोश : निवेश=रखना, प्रवेश
आसन=बैठने की जगह : आसन्न=पास
आसन्न=पास : प्रसन्न=खुश
आसानी=सरलता : लासानी=अनुपम
आहार=भोजन : विहार=घूमना
उचटा=खिन्न : उलटा=विपरीत
उछाह=उत्साह : बिसाह=विश्वास
उठान=उठना : उड़ान=उड़ना
उत्कण्ठा=इच्छा : कण्ठा=गले का हार
उथल=उलटा : कुथल=खराब जगह
उतङ्ग=ऊंचा : पतङ्ग=सूर्य, गुड्डी
उदधि=समुद्र : दधि=दही
उद्यत=तैयार : उद्धत=उद्दण्ड
उद्यम=मेहनत : ऊधम=फिसाद
उपकार=भलाई : अपकार=बुराई
उपवास=व्रत रखना : प्रवास=परदेश-गमन
उर्वर=उपजाऊ : बर्बर=असभ्य
ऋत=सत्य : ऋतु=मौसम
औसर=अवसर : ऊसर=वह धरती, जिसमें कुछ न हो; देखो उर्वर
कजरी=काली गौ : काजल=आँख में डालने का सुरमा
कटक=सेना : खटक=शब्दानुकर खटका ; कटुक=कडुआ
कटुक=कडुआ : वटुक=विद्यार्थी

ऋण=उधार : उऋण=जिसने ऋण चुका दिया हो

कटि=नितम्ब प्रदेश से ऊपर का भाग : कोटि=सीमा

कमेरी=काम करने वाली : घुमेरी=घूम

कञ्जर=नीच पुरुष : कुञ्जर=हाथी

कर=लगान : कारा=जेल

कमठ=कछुआ : कर्मठ=कर्म करने वाला

कल=चैन : कला=भाग

कला=भाग : काल=समय

कलेवर=शरीर : कलेव=प्रातराश

कादर=कायर : बादर=बादल

काष्ठ=लकड़ी : काष्ठा=दिशा

किरण=रश्मि : करुण=दयनीय

कुञ्ज=लताप्रतान : कूज=कूजना

कृपण=दयनीय, गरीब : कृपाण=तलवार

कृमि=कीट : कृषि=खेती

क्रम=तरतीब : श्रम=मेहनत

कुशल=चतुर : कोसल=अयोध्या के पास का देश

क्षण=लहमा, उत्सव : रण=संग्राम

क्षत्र=राज्य : क्षेत्र=खेत, रकबा

क्षय=नाश : क्षपा=रात

क्षीर=दूध : क्षुर=उस्तरा

क्षेम=मङ्गल : हेम=सोना

खग=पक्षी : मग=मार्ग

खर्व=छोटा, तुच्छ : गर्व=अभिमान
खल=दुष्ट : खिल=टुकड़ा
खाँड=चीनी : खाँडा=तलवार
खारी=खार : ख्वारी=खराबी
खाल=चमड़ा : खल=दुष्ट
खेद=दुःख : स्वेद=पसीना
ख्याति=यश : स्वाति=नक्षत्रविशेष
गयन्द=हाथी : मयङ्क=चाँद
गरिष्ठ=सब से भारी, गुरुतम : वरिष्ठ=श्रेष्ठ
गर्व=अभिमान : वर्ग=जमात
गागर=घड़ा : सागर=समुद्र
गाजी=गर्जने वाला : गज=हाथी
गुनाह=पाप : पनाह=शरण
गुत्थी=गाँठ : गाती=पीठ पर डाली धोती
गीत=गान : गीता=गाई हुई रचना
गुर=उपाय : गुड़=रस का बना गुड़
ग्रन्थ=पुस्तक : ग्रन्थी=पुस्तक वाला, सिखों का पुरोहित
घट=घड़ा : घटा=समूह, बादलों की घटा
घटक=अवयव : घट=घड़ा
घटना=घट जाना : घोटना=पीसना
घालक=घातक : पालक=पालने वाला
चक्र=चाक, पहिया : वक्र=बाँका, टेढ़ा
चर्पर=चटपटा : चपल=तेज, चञ्चल
चर्म=चमड़ा : चरम=अन्तिम
चारण=भाट : कारण=हेतु

चारु = सुन्दर : चारा = उपाय, करने की चीज
चिकुर = केश : चिबुक = ठोढ़ी
चिता = जलने की समाधि : चिन्ता = फिक्र
चित्त = मन : वित्त = धन
चूर्ण = पिसा हुआ : पूर्ण = भरा हुआ
चैत्य = बौद्ध मन्दिर : दैत्य = दानव; दितिपुत्र
चौपाल = पञ्चों की बैठक : चौगान = पोलो का खेल
छपा = रात, क्षपा : छत्रा = पशु का बच्चा
छार = धूलि : खार = खारा
जघन = स्त्री का कटिप्रदेश : जघन्य = नीच
जलधि = उदधि, समुद्र : जलोदर = पेट में पानी पड़ने की बीमारी
जीर्ण = जरा हुआ : शीर्ण = टूटा-फूटा
जोखम = खतरा : जख्म = घाव
जोहत = देखना, जोहना : नौबत = नगाड़ा
ज्येष्ठ = सब से बड़ा : श्रेष्ठ = सब से अच्छा
ज्वाला = लपट, जलना : जाला = मकड़ी का जाला
झगा = चोला : झाग = फागा
टट्टी = ओट : ठट्ठा = हँसी
टेव = आदत : टेवा = ब्याह की चिट्ठी
डरा = डेला : डेरा = ठहरने की जगह
ढिलाई = ढील : ढुलाई = ढोना
ढीठ = धृष्ट : डीठ = दृष्टि
तकदीर = भाग्य : तदबीर = उपाय
तटिनी = तटों वाली, नदी : नटिनी = नट की स्त्री
तम = अंधेरा : तोम = समूह

तप=तपस्या : तय=पूरा करना
तरुण=जवान : तरण=तैरना
तल=निचला प्रदेश : तरी=नौका
ताप=तपिश, ज्वर : पात=गिरना, पतन
तूर=तुरही : त्वरा=जल्दी
तैल=तेल : शैल=पहाड़, शिलाओं वाला
तोय=पानी : तोर=तेरा
तोष=तुष्टि, : पोष=पुष्टि
दमन=दबाना : दामन=लँहगा, मदन=कामदेव
दर्भ=अभिमान : दर्व=चम्मच
दहन=जलन, आग : दशन=दाँत
दाम=रस्सी : उद्दाम=उच्छृङ्खल, उत्+दामन्
दारा=स्त्री : दर=दरवाजा
दानी=दान देने वाला : दीन=दयनीय, गरीब
दिवाकर=सूर्य : निशाकर=चन्द्र
दीप=दिया : द्वीप=जजीरा
दाप=दर्प, अभिमान : पाद=पैर
दुर्ग=किला : दुर्गम=जहाँ जा न सके
दुरुखी=दोरुखा का भाव : बेरुखी=उपेक्षा
दुर्भाग्य=बुरा भाग्य : दौर्भाग्य=दुर्भागी का भाव
दुष्ट=नीच : दृष्ट=देखा हुआ
दूजा=द्वितीय : जादू=वश में करने वाला
दौत्य=दूतभाव : दैत्य=पिशाच
धन=द्रव्य : धुन=दृढ़ विचार
धरणी=धरती : धारणा=ख्याल
धरा=पृथ्वी : धारा=प्रवाह

धुन=दृढ़ विचार	: धुनि=ध्वनि
धेनु=गौ	: धनु=धनुष
नख=नाखून	: खनि=खान
नगर=शहर	: नागर=शहर का
नष्ट=जिसका नाश हो गया हो	: अनिष्ट=जो इष्ट न हो
नवल=नया	: नेवला=नकुल
नागर=नगर का	: नाहर=शेर
नाकलोक=स्वर्ग	: नागलोक=पाताल
निकेत=घर	: संकेत=इशारा
निदान=अन्त में, कारण	: नादान=नासमझ
निबरै=निबटना	: उबरै=उभरना
निमित्त=कारण	: सचित्त=चित्त-सहित
नियत=निश्चित	: नियति=भाग्य
नियुक्त=लगा हुआ	: वियुक्त=अलग हुआ, √युज्
निरवलम्बी=अवलम्बन-रहित	: स्वावलम्बी=अपने पैरों खड़ा होने वाला
निराधार=बेसहारा	: निराहार=भोजन-रहित
निर्धन=धन-रहित	: निधन=मृत्यु
निर्बल=बल-रहित	: बर्बर=असभ्य
निर्वचन=शब्दों की व्युत्पत्ति	: निर्वाचन=चुनाव
निवास=बसना, बसने की जगह	: निबाह=निर्वाह
निश्चित=पक्का	: निश्चित्त=समाधि-विशेष
निषाद=नीच जाति	: विषाद=खेद
निष्ठा=लगन	: विष्ठा=गन्दगी, टट्टी

निसर्ग=स्वभाव	: विसर्ग=विसर्जनीय
निहित=रखा हुआ	: विहित=बनाया हुआ
निष्कासित=निकाला हुआ	: प्रकाशित=चमकाया हुआ
नीति=नय	: नेति=यह नहीं
नेह=स्नेह	: नेगी=मित्र; स्नेही
नेक=अच्छा	: नेकु=जरा
पञ्जर=कङ्काल	: पिंजरा=पक्षी रखने का पिंजरा
पठौती=भेजती	: हठौती=हठ करती
पक्ष=हिस्सा	: क्षपा=रात
पत=प्रतिष्ठा	: पति=स्वामी
पतङ्ग=सूर्य, गुड्डी	: पलंग=चारपाई
पताका=झण्डी	: पटाखा=शब्दानुकरण
पन्नग=साँप	: पद्ग=पैर
पराया=दूसरे का	: प्रायः=अकसर
परिजन=नौकर-चाकर	: पर्जन्य=बादल
परिघ=भाला, बरछी	: परिधि=सीमा
परिणाम=नतीजा	: परिमाण=मात्रा
परीक्षा=इम्तहान	: प्रतीक्षा=इन्तजार
पवन=हवा	: पावक=आग
पवन=हवा	: पावन=पवित्र करने वाला
पश्चात्=पीछे	: पाश्चात्य=पश्चिमीय
पाग=पगड़ी	: फाग=होली
पाणि=हाथ	: फणी=साँप
पाली=प्रान्त, तट	: पली=पली हुई
पुष्ट=बढ़ा हुआ	: पृष्ट=पूछा
पूत=पवित्र	: सूत=सारथि

पोत=जहाज	: पोता=पौत्र
पैंड़ा=रास्ता	: पिण्ड=शरीर
प्रकार=तरीका	: प्राकार=दुर्ग
प्रण=प्रतिज्ञा	: व्रण=घाव
प्रक्रम=आगे चलना	: पराक्रम=बहादुरी
प्रणाम=नमस्कार	: परिणाम=नतीजा
प्रथा=रिवाज	: संस्था=इंस्टिट्यूट
प्रभा=चमक	: प्रभु=परमात्मा
प्रभाव=असर	: पराभव=बेइज्जती
प्रशस्त=सुन्दर, अच्छा	: विशस्त=काटा गया
प्रसन्न=खुश	: विषण्ण=दुःखी
प्रवञ्चक=धोखेबाज	: प्रव्रजित=छोड़ा हुआ
प्रसाद=प्रसन्नता	: प्रासाद=महल
फाट=नदी का चौड़ाव	: फेंट=कमरबन्द
बटेर=पक्षी	: बटोरू=इकट्ठा करने वाला
बढ़ें=बुझने पर, बड़ा होने पर	: बारे=जलाने पर, बचपन में
बताना=जताना	: बिताना=गुजारना
बधिर=बहरा	: बधिक=व्याध
बयार=वायु	: सियार=शृगाल
बर्बर=असभ्य	: बबूर=कीकर
बल=शक्ति	: बलि=भेंट
बाँका=वक्र	: बाँचा=पढ़ा
बाँझ=वन्ध्या	: सांझ=सन्ध्या
बानक=वेष	: वणिक्=बनिया
बाट=रास्ता	: बटोही=रास्तागीर
बाध्य=बाधित	: वध्य=मारणीय

बावला=वातुल	: फावड़ा=खोदने का औजार
बिट=खल	: वट=बड़
बिहग=पक्षी	: मग=मार्ग; पडग=पैर
बैन=वचन	: रैन=रजनी, रात
भक्त=भजन करने वाला, भात	: भुक्त=भोगा
भय=डर	: भायप=भाई-संबन्धी
भर=भार	: निर्भर=आश्रित
भरण=भरना, पोषण करना	: भ्रमण=घूमना
भव=संसार	: भाव=विचार
भाजन=पात्र	: भञ्जन=तोड़ने वाला
भाषण=व्याख्यान	: भीषण=डरावना
भीत=डरा हुआ	: मीत=मित्र
भीम=भीषण	: भूमि=पृथ्वी
भोग=भुक्ति	: भाग=टुकड़ा
मढ़ी=मण्डप	: गढ़ी=गढ़, दुर्ग
मञ्जु=सुन्दर	: मुञ्ज=मूँज
मञ्जुल=सुन्दर	: मांसल=मांस वाला
मत=सलाह	: मति=बुद्धि
मथुरा=नगर विशेष	: मन्थर=धीरे-धीरे काम करने वाला
मद=मस्ती	: मादा=स्त्री
मद्य=शराब	: मोदक=लड्डू
मनुज=आदमी	: मनोज=काम; दनुज=दानव
मंत्रणा=सलाह	: निमन्त्रण=न्यौता
मरण=मरना	: रमण=रमना; मारण=मारना
मरु=रेत	: मेरु=पर्वत-विशेष, सुमेरु

मर्म=नरम स्थल, जहाँ चोट लगने पर मर जाय। : वर्म=कवच
मलिन=मैला : म्लान=मुरझाया हुआ
मसान=श्मशान : मसृण=चिकना
महिला=स्त्री : मदिरा=शराब
महिष=भैंसा : महेश=महादेव
मारू=निर्जल प्रदेश : मदिर=मद देने वाली वस्तु
मितभाषी=अल्पभाषी : बहुभाषी=वाचाल
मिष=बहाना : विष=जहर
मीच=मृत्यु : नीच=पतित
मूक=गूंगा : शुक=तोता
मूल=जड़ : शूल=दर्द
मृग=हिरण : मार्ग=रास्ता
मोघ=वृथा : मोह=लगन
मोत=मुक्ता : मोती=ओतिम
मोद=खुशी : मोदक=लड्डू
रक्त=लाल, खून : रिक्त=खाली
रक्षण=रखवाली : शिक्षण=शिक्षा
रजनी=रात : रमणी=स्त्री
रङ्क=गरीब : राका=रात
रदन=दाँत : सदन=घर
रश्मि=किरण : श्मश्रु=मूछ
राह=रास्ता : राहु=ग्रसने वाला तारा
ललना=महिला : लालन=पालन, प्रेम करना
रिस=क्रोध : रिपु=दुश्मन
रुष्ट=नाराज़ : रिष्ट=टूटा हुआ, बीमार

लपट = ज्वाला : लिपट = मिलना
लब्ध = पाया हुआ : लुब्धक = लोभी, व्याध.
ललाट = माथा : ललाम = सुन्दर
लोटना = लेटना : लौटना = वापस आना
लेख = लिखना : लेखा = हिसाब
वक्ष = छाती : वृक्ष = पेड़
वञ्चित = छला गया : संचित = इकट्ठा किया हुआ
वदन = मुँह, शरीर : वदान्य = उदार
वपन = बोना : विपिन = वन
वर्जित = निषिद्ध : सज्जित = तैयार
वर्ण = रूप : वर्णन = बयान
वहन = रथ, सवारी : सहन = सहना
वर्ष = साल : वर्षा = बारिश
वसन = कपड़ा : वासना = गन्ध
वार = आक्रमण : परिवार = वंश, परिजन
वितान = फैलाव : संतान = संतति
वित्त = धन : वृत्त = चरित्र
वासुकि = सर्प, जिस पर पृथ्वी टिकी है : वासव = इन्द्र
विद्यालय = स्कूल : विश्वविद्यालय = यूनिवर्सिटी
विपद् = आपद : विशद = स्वच्छ
विपन्न = विपद्ग्रस्त : संपन्न = धनी
वृत्ति = जीविका : आवृत्ति = दुहराना
विकल = खण्डित, दुःखी : सकल = सारा
विरद = उपाधि : वारिद = बादल
विवरण = बयान : संवरण = ढकना

विविध = भाँति-भाँति के : व्याधि = शारीरिक बीमारी
व्यक्त = प्रकट : व्यक्ति = शख्स, आदमी
शयन = सोना : शय्या = नींद, चारपाई
शशी = चाँद : शिशु = बालक
शस्त्र = हथियार : शास्त्र = दर्शन
शुभ = अच्छा : शोभा = खूबसूरती
श्याम = काला : वामा = स्त्री; देखो व्योम = आकाश
शान्ति = चुप्पी : श्रान्ति = थकावट
शुक = तोता : शोक = दुःख
सकल = सारा : सफल = फल-समेत
संक्षेप = थोड़े में कहना : विक्षेप = गिरावट, क्षिप
सत्र = भण्डारा सदन = घर
सत्त्व = ताकत, वीर्य : स्वत्व = अपनापन
सनी = मिली : सानी = उपमा
संतत = लगातार : संतति = संतान
संदेश = संदेसा : आदेश = आज्ञा
सन्मति = अच्छी मति : संमति = सलाह
समर्थ = शक्त : सामर्थ्य = शक्ति
सरपट = तेज : चरपट = चरकटा, गंठकटा
समस्त = सारा : व्यस्त = अलग-अलग
सरवर = बराबरी : सरोवर = तालाब
सरूप = रूप-समेत : विरूप = भद्दा, कुरूप
सरोज = कमल : उरोज = छाती
सहनीय = सहा जाने योग्य : दयनीय = दया-योग्य
सामंत = भट : हेमन्त = ठण्डी ऋतु
सामुहे = संमुख : दुमुहे = दो मुँह वाले

सीकर—आसार, पानी की छींटों का आसार : शेखर=शिरोभूषण
सुगम=सरल : अगम=अज्ञेय
सुगन्ध=खुशबू : सौगन्द=शपथ
सुजन=अच्छा आदमी : स्वजन=अपना आदमी
सुमन=फूल : सुमति=अच्छी मति
सुर=देवता : स्वर=आवाज; उदात्त, अनुदात्त और स्वरित
सुरा=शराब : सुराई=शूरता
स्तवक=गुच्छा : स्तव=प्रशंसा
स्थान=जगह : प्रस्थान=यात्रारम्भ; स्थिति ठहरना
स्नात=न्हाया हुआ : निष्णात=प्रवीण
हिय=हृदय : हय=घोड़ा
होड़=स्पर्धा : हेकड़ी=उद्दण्डता

अभ्यास

भेद बताओः—

अलभ्य—अप्राप्य
अलौकिक—लोकोत्तर
आचरण—व्यवहार
आदर्श—दृष्टान्त
आंधी—तूफान
उछलना—कूदना
उत्तेजन—प्रोत्साहन
काटना—कतरना
कौशल—योग्यता
खेल—खिलवाड़
गलना—सड़ना
गोल—वर्तुल
घिसना—रगड़ना
घोड़ा—टट्टू
चीज—सामान
चीरना—फाड़ना

छज्जा—बरामदा
टहलना—चलना
तात्कालिक—तत्कालीन
थाना—कोतवाली
दया—अनुग्रह
ध्यान—विचार
नाती—पोता
नियम—विधान
निरर्थक—व्यर्थ
निश्चय—विश्वास
परामर्श—संमति
पीना—निगलना
पेड़—पौधा
प्रयोग—व्यवहार
प्रजा—निवासी
प्रशंसा—स्तुति
बनाना—गढ़ना
बलवान्—प्रबल
बाजार—हाट
बोली—भाषा
मकान—कोठी
मलना—मसलना
मारना—पीटना
राजा—शासक
राजस्व—कर
लिपि—भाषा
लेख—लिखावट
लोटना—लेटना
लौटना—उलटना
विवेक—आत्मा
शिक्षा—अध्ययन
संदेह—आशङ्का
संपत्ति—वैभव
स्वीकार—स्वीकृति
हटाना—निकालना

उक्ति-निरूपण

मुहावरे और लोकोक्तियां

शब्दों का एक प्रत्यक्ष अर्थ होता है दूसरा व्यङ्ग्य। "थोड़ा दौड़ता है" इस वाक्य में दौड़ने का प्रत्यक्ष अर्थ है बहुत जल्दी-जल्दी और बड़े-बड़े डिग रखते हुए आगे की ओर चलना। 'देवदत्त भागता है, मैं भागता हूँ' इन वाक्यों में 'भागने' का यही अर्थ है। किंतु "साइकल दौड़ती है, रेल दौड़ती है" इन वाक्यों में दौड़ने का कुछ दूसरा ही अर्थ है। साइकल के और रेल के पैर नहीं होते; फिर भी हम उनके पहियों की गति को दौड़ना कहते हैं। इतना ही नहीं, साहित्यिक भाषा में "बादल दौड़ते हैं, मन दौड़ता है, और अक्ल के घोड़े दौड़ते हैं।" ऐसे अवसरों पर "दौड़ने" का प्रयोग करते समय हम यह नहीं सोचते कि बादलों के, मन के और कल्पना के पैर या पहिये नहीं हैं; और बादलों को हम आगे सरकता देखते भी हैं, किंतु मन और कल्पना तो सरकते तक नहीं; क्योंकि वे तो वास्तव में अमूर्त पदार्थ हैं। शब्दों का यह व्यङ्ग्यार्थ ही मुहावरों तथा लोकोक्तियों का आधार है।

हम कहते हैं "अपराधी ने हाकिम की मुट्ठी गरम कर दी", "उसका जोश ठण्डा हो गया"। इन वाक्यों में 'गरम' और 'ठण्डा' होने का कुछ और ही अर्थ है, जिसका सामान्य प्रकार की गरमी और ठण्डक से कोई संबन्ध नहीं है। हम कहते हैं "अन्धे की लकड़ी", "अपना उल्लू सीधा करना"। पहले का

अर्थ है "एक-मात्र सहारा" और दूसरे का अर्थ है, "अपना मतलब साधना"। इन दोनों ही अर्थों का अन्धे से, लकड़ी से, उल्लू से, और सीधा करने से कोई संबन्ध नहीं है। फिर भी यह अर्थ इन्हीं शब्दों से निकले हैं। शब्दों का यह अर्थ व्यङ्ग्य अर्थ कहाता है और शब्दों की इसी प्रकार की रचना को हम मुहावरा या लोकोक्ति कहते हैं।

मुहावरा और लोकोक्ति भाषा में चमत्कार लाते हैं और शैली में जान डाल देते हैं। अन्धेरे में दीपक की नाईं ये रचना में चमकते हैं और कथनीय अर्थ में चार चाँद लगा देते हैं। हिन्दी भाषा में मुहावरों और लोकोक्तियों की भरमार है। कुछ मुहावरे और लोकोक्तियां नीचे दी जाती हैं:—

———

मुहावरे

अकाण्ड ताण्डव—बेमौके उछलना कूदना; अकाण्ड ताण्डव क्यों कर रहे हो; समय आने दो; देख लेंगे।

अङ्ग छूना—कसम खाना।

अङ्ग-अङ्ग ढीला होना—थक जाना; सारा दिन काम करने से अङ्ग-अङ्ग ढीला हो रहा है।

अँगारे उगलना—क्रोध में कठोर वचन बोलना।

अँगारे बरसना—तेज धूप पड़ना; जेठ तप रहा था और आसमान से अंगारे बरस रहे थे।

अँगूठा दिखाना—देने या काम करने से इनकार करना।

अण्ट सण्ट बकना—जो जी में आवे सो कहना।

अन्त करना—समाप्त करना।

अन्त पाना—रहस्य जानना; भाई! धर्म का अन्त किसने देखा है।

अन्त बिगाड़ना—परलोक बिगाड़ना; बुढ़ापा सिर पर है; क्यों अपना अंत बिगाड़ रहे हो?

अन्धे की लकड़ी—एकमात्र सहारा; श्रवण को मार कर दशरथ ने अन्धे की लकड़ी छीन ली।

अन्धे के हाथ बटेर लगना—अयोग्य को बिना श्रम अच्छी वस्तु मिल जाना; राम श्रेणी में फिसड्डी था, पर परीक्षा में प्रथम पास हो गया। भाई, अन्धे के हाथ बटेर लग गई।

अंधेरे घर का उजाला—एकमात्र पुत्र।

अकल का पुतला—असाधारण बुद्धिमान्। एडीसन अक्ल का पुतला था; जहां भी हाथ रखता था, काम बना देता था।

अक्ल का दुश्मन—मूर्ख।

अक्ल के घोड़े दौड़ाना—तरह-तरह के विचार करना; दिनरात अक्ल के घोड़े दौड़ाते हो; कुछ काम भी कर लिया करो।

अक्ल के पीछे लट्ठ लिये फिरना—समझाने पर भी न मानना; दुर्योधन तो अक्ल के पीछे लट्ठ लिये फिर रहा है।

अक्ल चकराना—समझ में न आना।

अक्ल चरने जाना—बुद्धि भ्रष्ट होना। कोई भी सवाल ठीक नहीं निकाला; अक्ल तो चरने नहीं गई है?

अक्ल पर पत्थर पड़ना—समझ जाती रहना; मेरी अक्ल पर तो पत्थर पड़ गए हैं; जो भी काम करता हूँ, उलटा ही पड़ता है।

अटकल-पच्चू—अन्दाज; अटकल-पच्चू जवाब मत दो; समझ से काम लो।

अठखेलियां सूझना—मजाक करना; मेरा घर जल रहा है और तुम्हें अठखेलियां सूझ रही हैं।

अड़चन डालना—रोड़े अटकाना।

अड्डा जमाना—हर समय डटे रहना; सोहन ने तो ससुराल में अड्डा ही जमा लिया है।

अपना उल्लू सीधा करना—अपना मतलब साधना; दुनिया बने या बिगड़े, वह धूर्त तो अपना उल्लू सीधा करना जानता है।

अपना-सा मुँह लेकर रह जाना—असफलता से सिर नीचा होना। कालिदास अपनी स्त्री को जवाब न दे सका और अपना-सा मुँह लेकर रह गया।

अपनी खिचड़ी अलग पकाना—गाँव के साथ थोड़े ही चलोगे? तुम्हें तो अपनी खिचड़ी अलग पकाने की टेव पड़ गई है।

अपने पाँव पर आप ही कुल्हाड़ी मारना—अपने हाथों अपना नुकसान करना। तुलना करो, "अपने हाथों पाँव काटना।"

अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनना—अपनी प्रशंसा करना।

अरण्य-रोदन वृथा प्रयत्न; गांधी जी के सारे प्रयत्न अरण्य रोदन सिद्ध हुए।

अरमान निकालना—इच्छा पूरी करना; अच्छी तरह अरमान निकाल लीजिए; कल मेरी भी बारी आने वाली है; तब देख लूंगा।

अवधि बदना—अवधि निश्चित करना; कैकेयी ने राम-बनवास के लिए चौदह बरस की अवधि बदी।

आँख उठाना—बराबरी करना, हानि पहुँचाना; किसकी हिम्मत है जो लक्ष्मण के सामने आँख उठावे।

आँख उठा कर न देखना— घमण्ड करना; भिखारी ने बहुतेरी मिन्नत की, पर सेठ ने आँख उठा कर न देखा।

आँख मारना—इशारा करना; श्रीकृष्ण के आँख मारते ही भीम ने दुर्योधन की टाँग पर गदा दे मारी।

आँखें चार होना— आँख से आँख मिलाना; आँखें चार होते ही शकुन्तला दुष्यन्त को चाहने लगी।

आँखें चुराना—नजर बचाना।

आँख तरसना—देखने के लिये ललायित होना।

आँखें दिखाना—क्रोध करना; एक तो काम नहीं करते; उस पर आँख दिखाते हो।

आँखें फेर लेना— प्रतिकूल होना; मुसीबत में सभी आँखे फेर लेते हैं।

आँख बिछाना—प्रेम से स्वागत करना; राम के लिये दुनिया आँख बिछाये खड़ी थी।

आँखें सेकना—सुन्दर वस्तु देख कर तृप्त होना; मेले में आँख सेकने के सिवाय क्या धरा है?

आँखों का तारा—बहुत प्यारा।

आँखों के आगे अन्धेरा होना—संसार सूना दीखना; राम के बन जाने पर दशरथ की आँख के आगे अन्धेरा हो गया।

आँख पर परदा पड़ना—धोखा खाना; मेरी आँख पर परदा पड़ गया था जो मैंने लड़के को एयर फोर्स में भरती कराया।

आँखों में खटकना—बुरा लगना; ज्यादे बढ़ोगे तो दुनिया की आँखों में खटकने लगोगे।

आँखों में धूल झोंकना—धोखा देना; बहुत से लड़के माँ-बाप की आँखों में धूल झोंक कर पैसा मँगाते हैं।

आँखों में समाना—ध्यान में चढ़ना; उनकी मूर्ति मेरी आँखों में समा गई है।

आँखों से गिरना—आदर घटना; कांग्रेस जनता की आँखों में गिर गई है।

आँच न आने देना—नुकसान न होने देना; तुम्हारे पीछे मैं राम को आँच न आने दूंगा।

आँसू पोंछना—दिलासा देना; अरे, भाई, आँसू पोंछने के लिये इसे भी छोटा-मोटा इनाम दे दो।

आकाश पाताल का अन्तर—भारी भेद; तुलना करो "कहां राजा भोज कहां गंगू तेली।"

आकाश से बात करना—अधिक उछलना; आपे में रहो; आकाश से बातें मत करो।

आग बबूला होना—क्रुद्ध होना; कर्ज चुका दूंगा; आग बबूला क्यों हो रहे हो।

आग में घी डालना—क्रोध बढ़ाना; भीम पहले ही जला भुना बैठा था; दुःशासन की डींग ने आग में घी डाल दिया।

आगा-पीछा सोचना—बहुत विचार करना; ज्यादह आगा पीछा मत सोचो, काम तो करने ही से होगा।

आटे दाल का भाव मालूम होना—कठिनाई अनुभव करना; नौकरी छूटते ही श्याम को आटे-दाल का भाव मालूम हो गया।

आड़े हाथों लेना—खरी-खोटी सुनाना; आने दो दुष्ट को; आड़े हाथों लूंगा।

आदमी बनना—शिष्टता सीखना; आदमी बन जाओ; नहीं तो मुंह की खाओगे।

आन की आन में—तुरन्त; उसकी माया अजब है; वह आन की आन में रङ्क को राजा बना देता है और राजा को रङ्क कर देता है।

आपाधापी करना—मनमानी करना; शान्त रहो; आपाधापी में सभी की हानि है।

आपे से बाहर होना—बहुत क्रोध करना; आपे से बाहर क्यों हो रहे हो; संभल कर बात करो। तुलना करो "जामे से बाहर होना"।

आसमान पर चढ़ना— तुलना करो "आकाश से बातें करना"।

आस्तीन का साँप—धोखेबाज मित्र; आस्तीन के साँप से बचो; घर का भेदी लङ्का ढाता है।

इज्जत दो कौड़ी की करना—आदर घटाना; देख लूंगा; आज तुमने मेरी इज्जत दो कौड़ी की कर दी है। तुलना "किरकिरी करना"

इधर की दुनिया उधर होना—अनहोनी बात होना; इधर की दुनिया उधर हो जाय; मैं झूठ नहीं बोलूंगा।

ईंट से ईंट बजाना—तोड़ फोड़ देना; तब लीगियों ने अमृतसर की ईंट से ईंट बजादी।

ईद का चाँद होना—बहुत दिन बाद दीखना; दोस्त; तुम तो ईद के चाँद हो गये हो; कभी आ तो जाया करो।

उँगली उठाना—दोष मढ़ना।

उंगली पकड़ कर पहुँचा पकड़ना—धीमे-धीमे अधिक लेना;

मुसलिम लीग तो उंगली पकड़ कर पहुँचा पकड़ना चाहती है।

उंगली पर नचाना—बस में करना; जवान स्त्री बूढ़े पति को उंगली पर नचाती है।

उठ जाना—मर जाना; तुलना करो "अन्त करना", "आँख मींचना"; "आँख खुली रह जाना"

उधार खाये बैठे रहना—ताक रहना; तुम तो मुझे घर से निकालने के लिये उधार खाये बैठे हो।

उधेड़बुन करना—सोच विचार करना; तुलना करो "आगा पीछा देखना"।

उल्टी गङ्गा बहाना—विपरीत काम करना; भाई, तुम तो उल्टी गंगा बहाते हो; कहीं झूठ से भी स्वर्ग मिला है।

एड़ी चोटी एक करना—कठोर श्रम करना; एड़ी चोटी एक करोगे तभी बड़े बन सकोगे; तुलना करो "एड़ी चोटी का पसीना एक करना"।

एक पन्थ दो काज—तुलना करो "ग्रामं गच्छन् तृणं स्पृशति"

कञ्चन बरसना—खूब लाभ होना; आज कल तो कांग्रेसियों पर कञ्चन बरस रहा है।

कफन सर से बाँधना—मरने को उद्यत रहना। तुलना करो "हथेली पर जान रखना।"

कटे पर नोन छिड़कना—दुख पर दुख देना; मैं तो पहले ही दुखी हूँ; कटे पर नोन क्यों छिड़कते हो।

कब्र में पैर लटकाए बैठना—मरने के लिये तैयार; कुछ तो देखो; कब्र में पैर लटकाए बैठे हो।

कमर सीधी करना—थकावट दूर करना; नैपोलियन घोड़े की पीठ पर ही कमर सीधी कर लेता था।

कल पड़ना—चैन पड़ना; अमृताञ्जन लगाते ही मुझे कल पड़ गई।

कलम तोड़ना—बढ़िया लिखना; कहानी लिखने में प्रेमचन्द ने कलम तोड़ दी है।

कलेजा चलनी होना—दिल दुखना; सास के तानों से बहू का कलेजा चलनी हो गया है।

कलेजा ठण्डा होना—संतोष होना; जब अकबर चला तब सलीम का कलेजा ठण्डा हुआ।

कलेजा थामना—जी कड़ा करना; कलेजा थाम कर सुन लो; गांधी जी चल दिये हैं।

कलेजे पर हाथ रखना—अपने दिल से पूछना; कलेजे पर हाथ रख कर कहो कि मैं ठीक कहता हूं या गलत !

कसौटी पर कसना—"बिपत कसौटी जे कसे ते सच्चे धनवान्"।

कहीं का न छोड़ना—भ्रष्ट कर देना; लोगियों ने भारत को कहीं का न छोड़ा।

काँटा लगी ओस—बहुत दुर्बल; छह महीने का चारपाई पर पड़ा है; बेचारा काँटा लगी ओस है।

काँटा बोना—विघ्न डालना; "जो तोको काँटा बुवै ताहि बोइ तू फूल"।

काँटा दूर होना—विघ्न हटना; बिचारा छह महीने से यहां पड़ा था; अब हाकिम की बदली हो गई है, और उसका काँटा दूर हो गया है।

कागजी घोड़े दौड़ाना—खाली कलम चलाते रहना। सारा दिन कागजी घोड़े दौड़ाते हो; कुछ करते भी हो ?

काटो तो खून नहीं—भयभीत होना; साँप को देख देवदत्त सन्न रह गया; काटो तो खून नहीं।

कान देना—ध्यान से सुनना; साधुओं की बात पर कान दो; कल्याण होगा।

कान पर जूँ न रेंगना—बात पर ध्यान न देना; मैंने सारा दिन मिन्नत की; पर उसके कान पर जूँ तक न रेंगी।

कान भरना—चुगली करना; मेरे कान भरने से मेरा क्या बिगड़ता है।

काम आना—संग्राम में "खेत रहना"

काम तमाम करना—मारना; डाकू उसका काम तमाम कर गये।

काया पलट होना—बदल जाना; जब से घर में नाती जी आये हैं, बहू का कायापलट हो गया है।

काला अक्षर भैंस बराबर—बेपढ़ा-लिखा आदमी; कहने को तो साधु है; सच पूछो तो काला अक्षर भैंस बराबर है।

कालिख पोतना—बदनाम करना; श्याम ने चोरी करके अपने पिता के मुँह पर कालिख पोत दी।

किताब की किताब—किताब ही; तुमने मेरी किताब की किताब रख ली और उलटा मुझे चोर बना रहे हो।

किनारा करना—साथ छोड़ना; मुसीबत में सगे भी किनारा कर जाते हैं।

किस खेत की मूली—नाचीज़; मैंने बड़े पहलवान देखे हैं; तू तो किस खेत की मूली है।

किस मर्ज़ की दवा—किस मतलब के; इतना भी नहीं करोगे तो किस मर्ज़ की दवा हो?

किस्मत खुलना—भाग्य खुलना; तुलना करो "किस्मत फूटना"

कुआँ खोदना—हानि पहुँचाना; हाकिम से लड़ना अपने लिये कुआँ खोदना है।

कुत्ता काटना—पागल होना; मुझे कोई कुत्ते ने काटा है कि मैं काम पर जाऊं।

कुत्ते की मौत मरना—बुरी तरह मरना; दुर्भिक्ष से लोग कुत्ते की मौत मरने लगे।

कुप्पा होना—रोष होना; शेखी से कुप्पा हो रहे हो; जरा धीरजे से सोचो।

कोई दिन का मेहमान—जल्दी चल बसने वाला; मरणासन्न।

कोख की मुच्ची—जिसका बच्चा न मरा हो। तुलना करो "कोख की आँच"

कोरा रखना—कुछ न देना; मैंने सेठ जी के यहां चार महीने काम किया; फिर भी उन्होंने मुझे कोरा ही रखा।

कोल्हू का बैल—दिन-रात काम करने वाला; तुलना करो "ज्यों कोल्हू के बैल को घर ही कोस पचास"

कौड़ी काम का नहीं—निरर्थक; बड़ा तो इतना है, पर कौड़ी काम का नहीं।

कौड़ी को न पूछना—निकम्मा; घर में शेर हो, बाहर कोई कौड़ी को भी नहीं पूछता।

कौड़ी-कौड़ी को मुहताज—अत्यन्त निर्धन; आज के साहब कौड़ी-कौड़ी को मुहताज हो रहे हैं। तुलना करो "छदाम के नहीं।"

क्या मुंह दिखाना—लज्जित होना; मेरी छान फूककर दुनिया को क्या मुंह दिखाओगे ?

खटाई में डालना—खराब करना; इसकी सौहबत में पड़कर उसने अपनी पढ़ाई खटाई में डाल दी।

खरी-खोटी सुनाना—बुरा बोलना; ज्यादा बोलोगे तो मुझसे भी खरी-खोटी सुनोगे। तुलना करो "खरी-खरी सुनाना"

खाक छानना—मारे-मारे फिरना; आज के साधु धरती पर खाक छानते फिरते हैं।

खाने को दौड़ना—गुस्से में भर जाना; तुम्हारे भले की कहता हूं और तुम खाने को दौड़ते हो।

खाला जी का घर—आसान काम; पढ़ना कोई खाला जी का घर थोड़ा ही है। तुलना करो "तलवार की धार"

खिचड़ी पकाना—छिपकर काम करना; घर में पड़े-पड़े क्या खिचड़ी पकाते रहते हो ?

खिल्ली उड़ाना—मजाक उड़ाना।

खुशामदी टट्टू—जी-हुजूर; टोडी बच्चा।

खून का प्यासा—मारने की इच्छा वाला।

खून खौलना—"पारा चढ़ जाना"

खून बहाना—मार डालना।

खेत रहना—संग्राम में "काम आना"

खेलना-खाना—आनन्द लेना; यही उम्र तो खेलने-खाने की है।

खेल बिगाड़ना—बनी बात बिगाड़ना; तुमने आकर सारा खेल बिगाड़ दिया।

गङ्गा-लाभ—मरना; "तुलना करो "स्वर्ग-लाभ"

गजब करना—अचरज का काम करना। हनुमान ने गजब कर दिया, उसने सारा पहाड़ ही उठा लिया। तुलना "गजब ढाना"

गड़ जाना—लज्जित होना; अपने पाप पर वह धरती में गड़ गया।

गड़े मुर्दे उखाड़ना—बीती बात को फिर याद दिलाना; आगे की सुध लो; गड़े मुर्दे उखाड़ने में क्या रखा है ?

गत बनाना—पीटना; तुलना करो "गति होना"

गरदन उठाना—सामना करना; तुलना करो "आँख उठाना"

गरदन झुकाना—आज्ञाकारी होना; तुलना करो "सिर माथे"

गरदन पर सवार होना—पीछे पड़े रहना; जवान बहू बूढ़े पति की गरदन पर सवार रहती है।

गरम होना—नाराज होना; तुलना करो "आग बबूला होना, आपे से बाहर होना"

गला घोटना—जबरदस्ती करना; मेरे पास क्या रखा है; क्यों मेरा गला घोटते हो ?

गले का हार—अति प्रिय।

गले डालना—जबरदस्ती देना; तुलना करो "गले मढ़ना"

गहरी छनना—नशे की-सी हालत में होना; प्रेम में होना; तब उन दोनों की गहरी छनी।

गाँठ का पूरा—मालदार; "अन्धा पर गाँठ का पूरा"

गाँठ बाँधना—याद रखना; "कस करि बाँधो गाठरी उठकर चालो बाट"

गागर में सागर—थोड़े में बहुत; पाणिनि ने अष्टाध्यायी में गागर में सागर भर दिया है।

गाल बजाना—शेखी मारना; कुलाचें मारना।

गुड़-गोबर करना—बनी बात बिगाड़ना; तुलना करो "खेल बिगाड़ना"

गुदड़ी का लाल—छिपा गुणी; अष्टावक्र गुदड़ी का लाल था। जब बोला तब जनक की सभा दङ्ग रह गई।

गुरु-घण्टाल—चालाक। सचमुच वह गुरु-घण्टाल है;। बचे रहना।

गुल खिलना—पता चलना; तुलना करो "नया गुल खिलना"

गुलछर्रे उड़ाना—मौज लेना; उड़ा लो गुलछर्रे; कल परीक्षा होगी तब पता चलेगा।

गूँगे का गुड़—अवर्णनीय सुख; "गूंगे का गुड़ है भगवान् बाहर भीतर एक समान।"

गाढ़े का साथी—संकटका मित्र;कृष्ण सुदामाका गाढ़े का साथी था।

घड़ों पानी पड़ना—अत्यन्त लज्जित होना; जब अविनाश को मालूम हुआ कि सामान उठाने वाला व्यक्ति गांधी है तब उस पर घड़ों पानी पड़ गया।

घर उजड़ना—घर बिगड़ना; स्त्री के मर जाने पर घर उजड़ जाता है। तुलना करो "खाक फुकना"

घर का शेर—घर में बल दिखाना; घर के शेर हो; बाहर जाओ तो पता चले।

घर का रास्ता लेना—चले जाना; काम होते ही उसने घर का रास्ता लिया।

घर फूक तमाशा देखना—अपनी हानि कर खुश होना; विवाह शादी पर बनिये घर फूक तमाशा देखा करते हैं।

घर बसना—घर की दशा सुधरना; यार, शादी कर लो, घर बस जायगा।

घर सिर पर उठाना—शोर मचाना; पैसा ही तो खो गया है; घर सिर पर क्यों उठा रहे हो।

घर में गङ्गा—बिना परिश्रम प्राप्ति; तुम्हारे तो घर में गङ्गा बह रही है, जो चाहो ले लो।

घात में रहना—ताक में रहना; शिकारी शेर की घात में बैठा है।

घाव पर नमक छिड़कना—तुलना करो "कटे पर नमक डालना"

घाव हरा करना—दुःख की याद दिलाना; मेरे लड़के की बात चलाकर तुमने मेरा घाव हरा कर दिया।

घास खोदना—समय गंवाना; तुलना करो "भाड़ झोंकना"

घी के दीवे जलाना—प्रसन्न होना; १५ अगस्त १९४७ के दिन जिन्ना के घर घी के दीवे जले।

घुल-घुल कर मरना—कष्ट भोग कर मरना; तुलना करो "तिल तिल मरना"

घुटना टेकना—सुस्ताना; तुलना करो "घुटने टेकना" = अधीनता स्वीकार करना।

घोड़े बेच कर सोना—निश्चिन्त होकर सोना; तुलना करो "चैन की नींद सोना"

चम्पत होना—खिसक जाना; मुसीबत पड़ते ही दोस्त चम्पत हो गए।

चकमा देना—धोखा देना; गुरु-घंटाल है; चकमा देना उसके बाएं हाथ का काम है।

चङ्गुल में फंसना—काबू में आ जाना; आज शिकार चङ्गुल में फंसा है।

चट कर जाना—सब साफ कर जाना; दस सेर लड्डू थे; सारे चट कर गया।

चल निकलना—काम में सफल होना।

चल बसना—मरना; तुलना करो "आँख मींचना"

चहल पहल करना—रौनक करना; तुलना करो "चहल-कदमी करना"

चाँद पर थूकना—तुलना करो "सूरज पर धूल फेंकना"

चादर से पैर बाहर निकालना—आय से अधिक खर्च करना, तुलना करो "तेते पाँव पसारिये जेती लाँबी सौर"।

चारों खाने चित्त—परास्त होना।

चाल में आना—धोखे में आना; तुम कैसे हो, जो उसकी चाल में आ गये।

चाँद गञ्जी होना—परेशान होना; मारे खर्च के चाँद गञ्जी हो गई।

चाल सुधारना—आचरण ठीक करना; तुलना करो "चाल चलना"

चिउँटी के पर लगना—मरणासन्न होना; तुलना करो "चार दिन का मेहमान है।"

चिकना घड़ा—जिस पर कुछ असर न हो।

चिकनी-चुपड़ी बातें करना—मीठी बातें बनाना; तुम उस गप्पी की चिकनी चुपड़ी बातों में आ गये।

चिराग़ बुझना—इकलौते पुत्र का चल बसना; तुलना करो "अन्धे की लकड़ी"

चुप साधना—मौन रहना; चुप्पी साध लो; दुनिया तुम्हारा क्या बिगाड़ लेगी।

चुल्लू भर पानी में डूब मरना—अति लज्जित होना; इतने पर भी जिन्दा हो; चुल्लू भर पानी में डूब मरो। तुलना करोः—

लुटिया डूब गई चौड़े में सौ सौ कोस पुकरवा नाहिं

एकां लज्जां परित्यज्य त्रिलोके विजयी भवेत्॥

चूँ न करना—कुछ न कहना।

चूड़ियां पहरना—कायर बनकर स्त्रियों का वेश धारण करना; तुलना करो "चुनरी ओढ़ना"

चूल्हा न जलना—अत्यन्त निर्धन होना; तुलना करो "घर पर फाके रखना"

"छैल फिरें गली-गली, जेब में नहीं खाक की डली"

चेहरा उतरना—उदास होना; तुलना करो "होश फाकता होना"

चेहरे पर हवाइयां उड़ना—भयभीत होना; तबादले का हुक्म मिलते ही थानेदार के चेहरे पर हवाइयां उड़ने लगीं।

चैन की बंसी बजाना—आराम से दिन काटना; तुलना करो "गुलछर्रे उड़ाना"

चोला बदलना—नया रूप धारण करना; तुलना करो "काया पलट करना"

चौकड़ी भूलना—तेजी खो जाना; ऐसे फंसोगे कि चौकड़ी भूल जाओगे।

चौका लगाना—नाश करना; तुलना करो "चाल फूकना"

छक्के छुड़ाना—परास्त करना।

छक्के छूटना—हिम्मत हारना।

छठी का दूध याद आना—भारी संकट पड़ना।

छप्पर फाड़कर देना—बिना परिश्रम देना; तुलना करो "घर में गङ्गा बहना"

छाती पर पत्थर रखना—चुपचाप दुःख सहना।

छाती पर मूँग दलना—दुःख देना; मैं तो यहीं रहकर तुम्हारी छाती पर मूंग दलूंगा।

छाती पर साँप लोटना—ईर्ष्या करना; मेरी उन्नति देख तुम्हारी छाती पर साँप क्यों लोटते हैं?

छान मारना—अच्छी तरह ढूंढना।

छोटे मुँह बड़ी बात—हैसियत से बढ़ कर बात करना; तुलना करो:—"थोथा चना बाजै घना", "ओछी गगरिया छलकत जात"

जबान पर लगाम न होना—उचित-अनुचित का विचार न करना; उसकी जबान पर लगाम नहीं है, जो मन में आता है बक देता है।

जबानी जमा खर्च करना—बातें बनाना; जबानी जमा ख़र्च तो सभी कर लेते हैं; काम करके दिखाओ तो जानें।

जमीन पर पैर न रखना—बहुत आराम से रहना; अच्छा घर मिल गया है; अब जमीन पर पैर क्यों रखने लगे?

जलभुन कर कोयला होना—ईर्ष्या से पागल होना; तुलना करो "छाती पर साँप लोटना"

जहर का घूँट पीना—क्रोध दबाना; मन में तो आया था कि उसके टिका दूं; पर जहर का घूंट पीकर रह गया।

जान के लाले पड़ना—संकट आना; तुलना करो "लेने के देने पड़ गये" "चौबे चले थे छब्बे बनने रह गए दूबे"

जान खाना—तङ्ग करना; तुलना करो "जान छुड़ाना", "जान छूटना"।

जान देना—बहुत चाहना; मैं तुम पर जान देता हूँ।

जान पर खेलना—खुशी से प्राण देना; चाँदबीबी के लिये उसकी फौज जान पर खेल गई।

जान में जान आना—जी ठिकाने होना; मित्र के आते ही उस की जान में जान आ गई।

जान लड़ाना—बहुत मेहनत करना; काम में जान लड़ा दो, सफलता तुम्हारी है।

जामे से बाहर होना—आपे से बाहर होना।

जिन चढ़ना—क्रोध आना; तुलना करो "आपे में न रहना।"

जी उचटना—मन न लगना।

जी को मारना—इच्छाओं को दबाना; पैसा पास नहीं है, जी मार कर रह जाता हूँ।

जी खोल कर—खुले हाथ; लड़की के विवाह में जी खोल कर खर्च करना हमारी प्रथा है।

जी छोटा होना—उत्साह घटना; जी छोटा मत करो; करम करना तुम्हारा काम है, फल देना भगवान् का।

जी जलना—कुढ़ना; तुलना करो "जूती खाना", "तप चढ़ना"

जी-जान से—पूरे ध्यान से; चर्चिल ने जी-जान से लड़ाई की; परिणाम यह हुआ कि विश्वयुद्ध में इङ्गलैण्ड की विजय हुई।

जी टूटना—निराश होना; जी मत तोड़ो; काम करते चलो; फल अवश्य मिलेगा।

जीती मक्खी निगलना—सरासर बेईमानी करना; कुछ कह

गा न करूं, पर जीती मक्खी तो नहीं निगली जाती।

जी में बैठना—भरोसा होना।

जूत लगना—हानि होना; इस मुकदमे में मेरे सिर एक हजार का जूत लग गया।

जूतियां चटखाते फिरना—इधर उधर भटकना; आज धरती पर पैर नहीं धरते; कल जूतियां चटकाते फिरते थे।

जोड़-तोड़ करना—उपाय करना; सौ जोड़-तोड़ करके उसने एक हजार कमाया था।

झख मारना—व्यर्थ समय गंवाना; हजार झख मारी, पर काम कुछ न हुआ।

झाड़ू फिरना—सफाया हो जाना।

टकटकी बाँधना—अपलक देखना।

टकसाली बोली—शिष्ट भाषा।

टका-सा जवाब देना—साफ इनकार।

टक्कर का—जोड़ का; यह पहलवान मेरी टक्कर का है।

टट्टी की ओट शिकार खेलना—छिपे-छिपे घात करना "दूसरे के कन्धे पर बन्दूक चलाना।

टस से मस न होना—जरा भी न हिलना, अडिग बने रहना।

टाँग अड़ाना—दखल देना; हर बात में टाँग अड़ा देते हो।

टाँग पसार कर सोना—तुलना करो "घोड़े बेचकर सोना"।

टाँय टाँय फिस—निष्फल; सब कुछ किया पर अन्त में टाँय-टाँय फिस।

टेढ़ी खीर—कठिन काम; तुलना करो "खाला जी का घर नहीं है।"

टोपी उछालना—निरादर करना।

ठनठन गोपाल—अकिंचन; तुलना करो "ढोल का पोल"।

ठिकाने आना—असलियत पर आना; इतनी देर बाद ठिकाने पर आये हो।

ठिकाने लगना—काम में आ जाना; भोजन था तो बहुत, पर सारा ठिकाने लग गया।

ठिकाने लगाना—मार डालना; उस बहादुर ने विरोधियों को ठिकाने लगा दिया।

ठोकना-बजाना—जाँचना; बाजार में हर चीज ठोक बजा कर लो।

डङ्का बजाना—शासन होना; "गुरुकुल का ब्रह्मचारी डङ्का बजा रहा है।"

डण्डे बजाते फिरना—निकम्मा फिरना; तुलना करो "जूतियां चटखाते फिरना।"

डकारना—हजम कर लेना; भाई के मरते ही सारी संपत्ति डकार गये।

डींग मारना—आत्म-प्रशंसा करना; तुलना करो "गाल बजाना, गप्प हाँकना"

डूबती नाव को पार लगाना—संकट से छुड़ाना।

डूबते को तिनके का सहारा—मुसीबत में छोटी-सी सहायता बहुत होती है।

"A drowning man catches at a straw"

डोरी ढीली छोड़ना—देख-रेख कम करना; मां बाप ने जरा डोरी ढीली की कि बालक बिगड़ा।

ढंढोरा पीटना—किसी बात को फैलाना; ढंढोरा पीटने से दान की महिमा जाती रहती है।

ढाई दिन की बादशाहत—तुलना करो "चार दिन की चाँदनी"

ढेर करना—मार गिराना; उसने दुश्मनों को ढेर कर दिया।

तलवार की धार पर चलना—कठिन काम करना; धर्म-पालन तलवार की धार पर चलना है।

तलवे चाटना—चापलूसी करना; तुलना करो "झूठी पत्तल चाटना।"

तवे की बूँद होना—शीघ्र नष्ट होना; तुलना करो "काँटा लगी ओस"

ताक में रहना—मौका देखना; तुलना करो "घात में रहना।"

तान कर सोना—निश्चिन्त सोना; तुलना करो "घोड़े बेचकर सोना।"

तिनका दाँतों से दबाना—दीनता से विनती करना; नैपोलियन के पहुँचते ही शत्रुओं ने तिनके दाँतों से दबा लिये।

तिल का ताड़ करना—छोटी बात को बढ़ाना; तुलना करो "तूल देना"

तिलाञ्जलि देना—छोड़ देना।

तीन तेरह करना—तितर-बितर करना; वह बाहर क्या गया, तुमने उसकी सारी पुस्तकें ही तीन तेरह कर दीं।

तीन-पाँच करना—झगड़ना; ज्यादह तीन-पाँच करोगे तो चपेट खाओगे।

तीसमार खाँ—दिग्गज; छोटा हो या बड़ा हिन्दी में सभी तीसमार खाँ हैं।

तूती बोलनी—तुलना करो "बोल बाला होना"

तेवर चढ़ना—क्रुद्ध होना; तुलना करो "तेवर बदलना, त्यौरी चढ़ाना।"

तोते की तरह आँखें बदलना—तुलना करो "तोता-चश्मी"

थाह लेना—पता लगाना; ईश्वर की थाह किसने ली है।

थूक कर चाटना—घृणा करना; तुलना करो "वान्ताशन"; "दियो दान किमि लीजिये।"

दङ्ग रह जाना—चकित होना।

दबे पाँव आना या निकलना—चुपचाप चले जाना।

दम फूलना—थक जाना।

दम भरना—मित्रता का विश्वास होना।

दम साधना—तुलना करो "चुप्पी साधना"

दम लगाना—गाँजे या चरस का धुँआ खींचना; "चरसी यार किसके दम लगाया खिसके"

दम मारने की फुरसत न होना—काम में बहुत अधिक व्यग्र होना।

दम के दम में—बहुत जल्दी।

दम में दम आना—शान्ति प्राप्त होना।

दर-दर मारा फिरना—तुलना करो "जूटी चटखाते फिरना।"

दाँत खट्टे करना—पराजित करना; तुलना करो। "छक्के छुड़ाना"

दाँत निकालना—व्यर्थ हंसना।

दाँत पीस कर रह जाना—तुलना करो "जहर की घूंट पी जाना।"

दाँतों तले उंगली दबाना—आश्चर्य प्रकट करना; हिटलर की वीरता को देख फ्रांसीसी लोग दाँतों तले उंगली दबाने लगे।

दाई से पेट छिपाना—जानने वाले से भेद छिपाना; ठीक ठीक बता दो, दाई से पेट छिपाने में क्या रखा है?

दाल में काला होना—संदेह होना; वह आजकल मारा-मारा फिर रहा है; हो न हो कुछ दाल में काला है।

दाल न गलना—काम न होना; अब वहां होशियार हाकिम आ गया है; तुम्हारी दाल नहीं गलेगी।

दाहिने होना—अनुकूल होना; "राम भये जेहि दाहिने सबै दाहिने ताहिं"।

दिन दहाड़े—दिन के समय; तुलना करो "भरी दुपहरी"

दिन दूनी रात चौगुनी—तेजी से उन्नति होना।

दिन पूरे होना—अन्त समय पास आना; "दो दिन का महमान"

दिन फिरना—अच्छे दिन आना; दिन फिरते देर नहीं लगती।

दिमाग चढ़ना—अधिक घमण्ड करना; तुलना करो "दिन में तारे तोड़ना"

दिल की दिल में रहना—आशाएं पूरी न होना;

"उत्थाय हृदि लीयन्ते दरिद्राणां मनोरथाः"

दिल भरना—अघाना; मीठी चीजों से मेरा दिल भर गया है।

दिल में फफोले पड़ना—बहुत दुःखी होना।

दीन-दुनिया को भूल जाना—बेखबर होना; धन की मार में आदमी दीन दुनिया को भूल जाता है।

दीया लेकर ढूँढना—बहुत खोजना; तुलना करो "दुनिया छानना"

दुकान बढ़ाना—दुकान बन्द करना; तुलना करो "दीया बढ़ाना"

दुनिया से चल बसना—मर जाना।

दुम दबा कर भागना—डर कर भागना; स्वामी जी के आते ही सारे पाखण्डी दुम दबा कर भाग गये।

दूज का चाँद—तुलना करो "ईद का चाँद"

दूध के दाँत टूटना—अनुभव न होना; अभी तो तुम्हारे दूध के दांत भी नहीं टूटे; बढ़ चढ़ कर बातें क्यों करते हो?

दूर की बात—आगे की बात; तुलना करो :—

"द्राघीयांसमनु पश्येत पन्थाम्"

देखते रह जाना—तुलना करो "हक्का-बक्का रह जाना"

दो नावों पर पैर रखना—दो पक्षों का सहारा लेना; तुलना करो "धोबी का कुत्ता घर का न घाट का"

धज्जियां उड़ाना—खण्डन करना; स्वामी जी ने अपने ग्रन्थों में पोपों की धज्जियां उड़ाई हैं।

धता बताना—आगे लगाना; मैंने आते ही गुरु-घंटाल को धता बता दी।

धाक जमाना—प्रभावित करना।

धुन का पक्का—लगन से काम करने वाला।

धूप में बाल सफेद करना—अनुभव न प्राप्त करना। तुलना करोः—"दिल्ली में रह कर भाड़ झोंका"

धोखे की टट्टी—असार बात; यह दुनिया धोखे की टट्टी है।

धोती ढीली होना—डर जाना; तुलना करो "पानी-पानी होना"

नज़र करना—भेंट करना।

न तीन में न तेरह में—गिनती में न होना; आप न तीन में न तेरह में, बातें बहुत बनाते हो।

नदी-नाव-संयोग—संयोग से मिलना। तुलना करोः—

"सब से हिल मिल कर रहो नदी-नाव-संयोग"

नमक खाना—किसी का खाकर कृतज्ञ होना; भीष्म ने दुर्योधन का नमक खाया था; इसलिये उन्हें उसकी ओर से लड़ना पड़ा।

नमक-मिर्च लगाना—बढ़ा कर कहना।

नाक कटना—अपमान होना; लड़की की शादी में पैसा लगा दो; नहीं तो नाक कट जायगी।

नाक की सीध में—बिलकुल सीधे।

नाक पर मक्खी न बैठने देना—अपने पर आँच न आने देना।

नाक में दम करना—दिक़ करना। गरमी के मारे मेरा नाक में दम है।

नाक रख लेना—इज्जत रख लेना; तुलना करो "पत रखना"।

नाक रगड़ना—खुशामद करना; तुलना करो "तलवे चाटना"

नाकों चने चबाना—खूब तङ्ग करना। अभी क्या देखा है? नाकों चने चबा दूंगा।

नादिरशाही—कठोर अत्याचार; लीग ने लाहौर में नादिरशाही मचा दी।

नानी मर जाना—मुसीबत आ पड़ना; तुलना करो "नानी याद आना"

नानी याद आना—दुःख अनुभव करना; अभी से नानी याद आ गई।

नाम कमाना—यश पाना; दुनिया में नाम कमाओ यही मेरा आशीष है।

नाम चलाना—यादगार छोड़ना; दुनिया में नाम चलाना है तो अच्छे काम कर चलो।

नाम डुबोना—कीर्ति खोना; तुलना करो "कालिख पोतना"

निन्यानवे के फेर में पड़ना—धन जोड़ने में लगना; खाये कैसे? निन्यानवे के फेर में पड़ गया है।

नुक्ताचीनी करना—दोष निकालना; नुक्ताचीनी करना भले आदमियों का काम नहीं है।

नौ दो ग्यारह होना—एक दम चले जाना; पोलिस के पहुंचते ही चोर नौ दो ग्यारह हो गये।

नौबत बजना—उत्सव होना; स्वराज्य मिलने पर घर-घर नौबत बजी।

नौ मुट्ठी का ऊत—बिलकुल बेवकूफ; तुलना करो नौ मुट्ठी के ऊत हो; काम क्या जानो?

पगड़ी उछालना—अपमान करना; तुलना करो "टोपी उछालना"

पगड़ी रखना—मान रखना; तुलना करो "लाज रखना"

पट पड़ना—मन्दा पड़ना; तुलना करो "चौपट होना"

पते की कहना—रहस्य की बात कहना।

पत्थर की लकीर—अमिट; मेरा वचन पत्थर की लकीर है।

पत्थर का कलेजा—अत्यन्त कठोर; तुलना करो:—

"वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि"।

परदा डालना—छिपा देना; जो हो गया सो हो गया; इतने ही पर परदा डाल दो।

पल्ला भारी होना—पक्ष बलवान् होना; जो भी कहो सच है; भाई, तुम्हारा पल्ला भारी है।

पल्ला छुड़ाना—छुटकारा पाना; उस नीच से पल्ला छुड़ाना भारी हो गया।

पल्ले पड़ना—बुरी चीज मिलना; यह भैंस उसके पल्ले पड़ी है।

पाँचों उंगल घी में होना—अत्यन्त लाभ होना; तुलना करो "दोनों हाथ लड्डू"

पाँव धरती पर न रखना—घमण्ड में चूर रहना "आसमान से बातें करना"

पाँव धोकर पीना—बहुत आदर करना।

पानी का बुलबुला—क्षणिक।

पानी के मोल—बहुत सस्ता।

पानी फिरना—बरबाद होना; तुलना करो "पानी फेरना", "पानी में फेंकना"।

पाप काटना—झगड़ा दूर करना; तुलना करो "झगड़ा मिटा, पाप कटी"

पापड़ बेलना—दुःख में दिन काटना; उसने पचासों जगह पापड़ बेले हैं, बिचारा आज भी कोरा ही है।

पार लगाना—पूरा करना; इस काम को तो पार लगा दूंगा, आगे भगवान् जाने।

पाला पड़ना—काम पड़ना; किससे पाला पड़ा है ! जान खा गया।

पीछे पड़ना—किसी बात के लिए बार-बार कहना।

पीठ ठोकना—उत्साह बढ़ाना।

पीठ दिखाना—लड़ाई से भाग निकलना।

पुराना घाघ—पहुंचा अनुभवी; पुराने घाघ हैं, कैसे हारते ?

पुल बाँधना—शेखी बघारना; बढ़ाकर कहना।

पेट काटना—कम खाना; पेट काटकर जोड़ने से क्या लाभ ? धन तो बहता पानी है।

पेट में चूहे दौड़ना—खूब भूख लगना।

पेट में दाढ़ी होना—देखने में छोटा पर अनुभव में पक्का।

पेट में बात न पचना—कोई बात छिपा न रखना। उसके पेट में बात नहीं पचती।

पैर उठना—आगे बढ़ना; तुलना करो "कदम बढ़ाना"

पैरों तले से जमीन निकल जाना—होश उड़ जाना; तुलना करो "धरती सरक जाना"

पोल खोलना—दोष दिखाना; तुलना करो "ढोल की पोल"

पौ बारह होना—प्रसन्नता होना। क्या कहने ! उसकी तो पौ बारह है; नौकरी भी भारी और फिर मोटर चढ़ने के लिये।

प्राण पखेरू उड़ जाना—मर जाना (प्राणपत्ती उड़ जाना)

प्राण हथेली पर लिये रहना—जीवन की परवाह न करना।

प्राणों पर बीतना—जान पर बीतना।

फूक देना—कान भरना।

फूक-फूक कर कदम रखना—सोच समझ कर काम करना।

फूट-फूट कर रोना—बहुत रोना।

फूल सूंघ कर रहना—बहुत कम खाना; आजकल की लड़कियां फूल सूंघ कर रहती हैं।

फूला न समाना—अत्यन्त प्रसन्न होना; तुलना करो "बाग-बाग होना"

फेर में आना—घाटा उठाना; मैं इस बरस तो लाख के फेर में आ गया।

बगलें झाँकना—उत्तर न दे सकना; अब बोलो, बगलें क्यों झाँकते हो ?

बगुला भगत—कपटी; आजकल के साधु निरे बगुला भगत हैं।

बट्टा लगाना—दाग़ लगाना; तुलना करो "कालिख पोतना"

बढ़ाना—देखो "दीया बढ़ाना," "दूकान बढ़ाना;" तुलना करोः "दीपो नन्दितः"

बरस पड़ना—क्रोध में बोलना; अजी ज़रा सोचकर बोलो; इतने क्यों बरस रहे हो ?

बल्लियों उछलना—खूब खुश होना।

बाँसों कलेजा उछलना—तुलना करो "बल्लियों उछलना"

बाएँ हाथ का खेल—अति सुगम

बाग-बाग होना—तुलना करो "फूला न समाना"

बाछें खिल जाना—प्रसन्न होना; गरीब को पैसा मिलते ही उस की बाछें खिल गईं।

बाज़ार गर्म होना—अधिक प्रचार होना; चारों ओर रिश्वत का बाज़ार गर्म है।

बात का बतङ्गड़ करना—बात बढ़ाना; "तूल देना"।

बात की बात में—जल्दी; बात की बातमें सारा मैदान साफ़ हो गया।

बाल की खाल उतारना—सूक्ष्म विचार करना। संस्कृत के पण्डित बाल की खाल उतारा करते हैं; मतलब नहीं समझते।

बाल पकना—बूढ़ा हो जाना; पक्खित होना; पढ़ाते-पढ़ाते बाल पक गये, आज मुझे सिखाने आये हो।

बाल-बाल बचना—नुकसान होते-होते उससे बचना।

बाल भी बाँका न होना—तनिक भी नुकसान न होना।

बीड़ा उठाना—जिम्मेदारी लेना। क्या तुमने दुनिया को सुधारने का बीड़ा उठाया है।

बे-सिर पैर की बात—बेमानी की बात।

बे-पर की उड़ाना—झूठी बात उड़ाना।

बोलना—स्पष्ट होना; जादू वह जो सिर पर चढ़कर बोले।

बोलबाला होना—उन्नति होना।

भण्डा फोड़ना—पोल खोलना; तुलना करो "भण्डा फोड़ करना"

भाड़ झोंकना—व्यर्थ समय खोना; तुलना करो "जूतियां चटखाना"

भाड़े का टट्टू—गुलाम; भाड़े के टट्टू क्या कर सकते हैं?

भिड़ के छत्ते में हाथ देना—झगड़ालू आदमी को छेड़ना; उसे छेड़ कर तुमने वृथा ही भिड़ के छत्ते में हाथ डाला।

भीगी बिल्ली बनना—भय से दब जाना।

भेड़िया-धसान—अन्ध परंपरा; देखोः—

"एक परै जेहि गाड़ में सबै जाहिं तेहि गाड़"

मक्खीचूस—अधिक कंजूस; "कंजूस मक्खीचूस"

मलियामेट करना—मट्टी में मिलाना।

मंगलना—जलना; होली मंगल गई; चूल्हा मंगल रहा है।

माई का लाल—बली; आज तो माई का लाल ही झण्डा उठावेगा।

माथा ठनकना—शङ्का होना; छींकते ही मेरा माथा ठनका।

माथे पर बल पड़ना—तेवर चढ़ना; मेरी बात सुनते ही उसके माथे पर बल पड़ गए।

मारे—कारण; लड़का मारे डर के भाग गया।

मिट्टी का माधो—मूर्ख; तुलना करो "नौ मुट्ठी का ऊत"

मिट्टी खराब करना—दुर्गति करना; तुमने लड़की को पढ़ा कर उसकी मिट्टी खराब कर दी।

मीनमेख निकालना—दोष निकालना; तुलना करो "नुक्ता चीनी करना"

मुँह की खाना—परास्त होना; बलवान् से भिड़ोगे तो मुँह की खाओगे।

मुँह तोड़ जवाब देना—खरी-खरी सुनाना; अकाट्य उत्तर देना।

मुँह पकड़ना—बोलने से रोकना; मेरा मुँह क्यों पकड़ते हो?

मुँह मीठा कराना—मिठाई खिलाना; खुश करना; एम. ए. पास हुए हो; मुँह तो मीठा करा दो।

मुँह में पानी भर आना—खाने को जी ललचाना; लड्डू देखते ही पण्डित के मुँह में पानी भर आया।

मुँह लगाना—बहुत आजादी देना; बच्चों को मुँह लगाना अच्छा नहीं है।

मुट्ठी गरम करना—रिश्वत लेना; काम कराने के लिये पहले उसकी मुट्ठी गरम करो।

मुट्ठी में होना—वश में होना।

मैदान मारना—लड़ाई जीतना; तुलना करो "मैदान हाथ आना"

मोम का होना—दयार्द्र होना।

मौत सिर पर खेलना—मरणासन्न होना; रावण के सिर पर मौत खेल रही थी; उसने सीता को हर लिया।

रङ्ग उतरना—चेहरा पीला पड़ना।

रङ्ग में रँगा जाना—प्रभावित होना; तुलना करो :—

"खरबूजे को देख खरबूजा रङ्ग बदलता है।"

रङ्ग जमना—प्रभाव पड़ना; थियेटर का खूब रङ्ग जमा है।

रङ्ग में भङ्ग पड़ना—मजा किरकिरा होना।

रँगासियार—धोखेबाज व्यक्ति। वह रंगा सियार है; बचकर रहना।

राई का पहाड़ बनाना—"तूल देना"

रामबाण—अचूक औषधि।

रामकहानी—अपनी कहानी; तुलना करो "कुछ आप बीती कुछ जग-बीती"

रास्ते का काँटा—बाधा; सलीम को अपना बाप रास्ते का काँटा दीखने लगा।

रास्ता नापना—चल देना।

रोंगटे खड़े होना—डर जाना; रोमाञ्चित होना।

लकीर का फकीर—प्रथावादी।

लत पड़ना—टेव पड़ना।

लहू की घूँट पीना—तुलना करो "जहर की घूँट पीना"।

लाल-पीला होना—क्रुद्ध होना।

लाले पड़ना—तरसना; रोटी के लाले पड़े हैं, तुम्हें सिनेमा सूझता है!

लोहा बजना—हथियार खड़कना।

लोहा मानना—प्रभुत्व मानना।

लोहा लेना—युद्ध करना।

शहद लगा कर चाटना—निरर्थक वस्तु को संभाल कर रखना; प्रवेश का दिन ही निकल गया; अब इन चिट्ठियों को शहद लगा कर चाटो।

सब एक थैली के चट्टे-बट्टे—सब एक से।

सब्ज बाग दिखाना—लोभ देकर बहकाना; उसकी बातों में न

आना; वह तो केवल सब्ज बाग दिखाता है।

समझ पर पत्थर पड़ना—बुद्धि भ्रष्ट होना; तुलना करो :—

"विनाशकाले विपरीतबुद्धिः।"

साँप छछूँदर की दशा—दुविधा; तुलना करो; "भाड़ से भट्ठी में"

सात घाट का पानी पीना—जगह-जगह का अनुभव लेना; उसे कैसे धोखा दोगे; उसने सात घाट का पानी पिया है। तुलना करो "पुराना घाघ"

सात-पाँच—छल कपट; ज्यादह सात-पांच करोगे तो मार खाओगे।

सिक्का बिठाना—धाक जमाना।

सिर आँखों पर—आदर सहित मंजूर।

सिर उठाना—विद्रोह करना।

सिर चढ़ाना—गुस्ताख बनाना; सिर भेंट देना; आप के लाड़-प्यार ने लड़के को सिर चढ़ा दिया है। भक्त ने देवी को अपना सिर चढ़ा दिया। तुलना करो "सिर देना"

सिर पर खून सवार होना—जान लेने को तैयार होना।

सिर पर पैर रख कर भागना—जल्दी भाग जाना; उधर शेर दीखा, इधर दोस्त सिर पर पैर रख कर भाग निकले।

सिर पर सवार रहना—पीछे पड़े रहना; हाथ धोकर पीछे पड़ना।

सिर पर हाथ धरना—मदद करना।

सिर मढ़ना—जिम्मे लगाना। हत्या का दोष मेरे सिर क्यों मढ़ते हो?

सिर से कफन बाँधना—"जान हथेली पर रखना"।

सिर से बला टालना—सिर से मुसीबत दूर करना। जाने दो कम्बख्त को; सिर से बला टली है।

सींग कटा कर बछड़ों में मिलना—बच्चों जैसा व्यवहार करना; क्या सूझी है ! सींग कटा कर बछड़ों में मिल रहे हो !

सीधे मुंह बात न करना—घमण्ड करना; जायदाद क्या मिल गई; सीधे मुंह बात करना भी छोड़ दिया।

सुख की नींद सोना—तुलना करो "घोड़े बेचकर सोना"

सुदामा के तन्दुल—गरीब की भेंट।

सूरज को दीया दिखाना—प्रसिद्ध व्यक्ति की प्रशंसा करना; गांधी की प्रशंसा करना सूरज को दीया दिखाना है।

सौ बात की एक बात—सार; सौ बात की एक बात; मैं यह काम नहीं करूंगा।

सोने की चिड़िया हाथ से निकलना—लाभ बन्द हो जाना; ऐसा आदमी हाथ न आयगा; सोने की चिड़िया को हाथ से न जाने दो।

हँसी उड़ाना—तुलना करो "हंसी में उड़ाना"; "हंसी होना"; "हिजो करना"

हँसी में खसी—रङ्ग में भङ्ग; मजाक मत करो; कहीं हंसी में खसी न हो जावे।

हक्का-बक्का रह जाना—भौचक्का रह जाना; घर में अपने भाई को न पा भरत हक्का-बक्का रह गया।

हजामत करना—ठगना; विलायत में हमारे विद्यार्थियों की खूब हजामत बनती है।

हराम होना—मुश्किल होना; मुझे तो खाना-पीना भी हराम हो गया है।

हवाई महल बनाना—हवाई किले बनाना; मनके लड्डू फोड़ना।

हवा पलटना—समय बदलना; दुनिया की हवा पलट गई है

हवा बाँधना—झूठी बड़ाई करना; जब तक हवा बंधी है सब कुछ ठीक है। हवा उखड़ी तो जग उखड़ा।

हवा लगना—असर होना; "तुमको लागी जगतगुरु जगनायक जगवाय"

हवा से बातें करना—बहुत तेज चलना।

हवा हो जाना—भाग जाना।

हांडी पकना—गुप्त परामर्श होना; इतने दिनों से भीतर ही भीतर हांडी पक रही थी; इसका सरकार को भान तक न था।

हाथ आना—मिलना; क्या नहीं किया; पर क्या हाथ आया।

हाथ उठाना—मारने लगना; तुलना करो "हाथ छोड़ना"

हाथ का मैल—मामूली चीज; रुपया पैसा हाथ का मैल है।

हाथ को हाथ न सूझना—घना अंधेरा होना; बाहर अंधेरा है; हाथ को हाथ नहीं सूझता।

हाथ खाली होना—रुपया-पैसा न होना; आजकल हाथ खाली है, सिर पर लड़की की शादी है।

हाथ खींचना—सहायता बन्द कर देना; पढ़ाई के बीच में हाथ खींच लोगे, लड़के का क्या होगा?

हाथ डालना—काम शुरू करना; तुलना करो "काम छेड़ना"।

हाथ धो बैठना—खो देना; गंवा देना; ज्यादा तंग करोगे तो लड़के से भी हाथ धो बैठोगे।

हाथ धोकर पीछे पड़ना—बुरी तरह पीछे पड़ना; जान बख्शो; क्यों मेरे पीछे हाथ धोकर पड़े हो?

हाथ-पांव फूलना—भयभीत होना; तुलना करो 'दम फूलना, सांस फूलना', मुंह फूलना।

हाथ पैर मारना—कोशिश करना; तुलना करो 'एड़ी चोटी एक करना'।

हाथ मलते रह जाना—पछताना; "काफला तो चल दिया मैं हाथ मलता रह गया"

हाथ में होना—वश में होना।

हाथ साफ करना—मारना; अनायास पा लेना, बच्चों पर ही हाथ साफ कर लेते हो; मेरी ओर बढ़े तो छक्के छुड़ा दूंगा। आँख बचते ही कुत्ता दूध पर हाथ साफ कर गया।

हाथों के तोते उड़ना—होश खो जाना, सामने दारोगा को आते देख अपराधी के हाथों के तोते उड़ गए।

हुलिया बिगड़ना—दुर्दशा होना; सामने रीछ को देख उसकी हुलिया बिगड़ गई।

———

लोकोक्तियाँ

अन्त बुरे का बुरा—तुलना करो "बोवे पेड़ बबूर को आम कहां ते खाय ?

अन्त भले का भला—तुलना करो, "जो तोकू काँटा बुवै ताहि बोइ तू फूल। तोको फूल के फूल हैं वाको हैं तिरसूल ॥

अन्धा क्या चाहे दो आँखें—अनायास इष्ट वस्तु मिलने पर कहा जाता है।

अन्धा बाँटे रेवड़ी फिर-फिर अपने ही को दे।

अन्धा सिपाही कानी घोड़ी विधि ने खूब मिलाई जोड़ी—तुलना करोः—उभावप्यकृतात्मानौ उभावपि जडात्मकौ। अहो मोहस्य माहात्म्यं तत्रैकः शिष्यतां गतः ॥

अन्धी पीसे कुत्ता खावे—काम कोई करे फल किसी को मिले।

अन्धे के हाथ बटेर लगी—अयोग्य को भाग्यवश कुछ मिल जाना।

अन्धों में काना राजा—तुलना करो "निरस्तपादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते। In tho land of the blind, the one-eyed is king"

अन्धेर नगरी चौपट राजा टके सेर भाजी टके सेर खाजा—"सब धान पसेरी मिलते हैं।"

अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता।

अक्ल बड़ी या भैंस—तुलना करो "स्थूलेषु कः प्रत्ययः ?"

अटका बनिया देय उधार—

अध-जल गगरी छलकत जात ।

अधेला न दे अधेली दे—तुलना करो, penny wise pound foolish.

अनमाँगे मोती मिलें माँगे मिले न भीख ।

अपना लाल गंवाय के दर-दर माँगे भीख—अपना पैसा खो देना; दूसरों से मांगना ।

अपनी करनी पार उतरनी—जैसा करोगे वैसा भरोगे ।

अपनी पगड़ी अपने हाथ ।

अपनी दही को खट्टा कौन कहे—अपनी चीज को कौन बुरा बताता है ।

अब पछताए क्या होत है जब चिड़िया चुग गई खेत ।

अमीर को जान प्यारी गरीब को जान भारी—अमीरी में जीवन सुखद है गरीबी में भारी बन जाता है ।

अशरफियां लुटें और कोयलों पर मोहर—एक ओर अंधाधुन्ध खर्च और छोटी-सी बात में कंजूसी ।

आँख बची माल दोस्तों का ।

आँखों के अन्धे नाम नैनसुख ।

आँखों से दूर दिल से दूर—out of sight out of mind.

आ गई तो ईद बरात नहीं तो काली जुम्मे रात—पैसा हुआ तो ऐश इशरत, नहीं तो फाकाकशी ।

आगे कुआँ पीछे खाई—दोनों तरफ विपत्ति ।

आगे दौड़ पीछे छोड़—आगे पढ़ना, पिछला भूल जाना ।

आटे के साथ घुन भी पिसता है ।

आदमी की दवा आदमी है ।

आदर मेरा चादर का आव-बैठ मेरे गहने की ।

आधा तीतर आधा बटेर—बेजोड़ मेल ।

आप-काज महाकाज।

आप भला तो जग भला।

आप मरै जग परलै।

आप मियाँ माँगते द्वार खड़े दरवेश—स्वयं भूखे हैं, बाहर मंगते खड़े हैं।

आम के आम गुठली के दाम।

आम खाने से काम पेड़ गिनने से क्या काम?

आमों की कमाई नीबू में गँवाई—एक वस्तु की आय दूसरी पर लगाना।

आए थे हरि-भजन को ओटन लगे कपास।

आया है सो जायगा।

आसपास बरसे दिल्ली पड़ी तरसे।

इक तिगिन अरु पङ्क लगाई—करेला, फिर नीम चढ़ा।

ईश्वर की माया, कहीं धूप कहीं छाया।

उलटा चोर कोतवाल को डाटे।

उलटे बाँस बरेली को—उलटा काम करना।

ऊँची दूकान फीका पकवान—नाम बड़े गुण थोड़े।

ऊँट किस करवट बैठता है—देखें, क्या परिणाम होता है।

एक और एक ग्यारह होते हैं—मेल में बड़ा बल है।

एक तन्दुरुस्ती हजार न्यामत।

एक चोरी दूसरे सीना जोरी।

एक म्यान में दो तलवार नहीं समा सकतीं।

एक हाथ से ताली नहीं बजती।

ओखली में सिर दिया तो मूसलों का क्या डर?

ओछे की प्रीत बालू की भीत।

ककड़ी के चोर को कटार की सजा।

ओस चाटे प्यास नहीं बुझती।

कगों हाथ संदेसड़े चिड़ियों हाथ सलाम।

कङ्गाली में आटा गीला—छिद्रेष्वनर्था बहुलीभवन्ति।

कढ़ाई से निकल चूल्हे में पड़े—from the frying pan into the fire.

कभी घी घना कभी मुट्ठी चना, कभी वह भी मना।

कभी नाव गाड़ी में, कभी गाड़ी नाव में—समय पर एक दूसरे की सहायता अपेक्षित होती है।

कहाँ राजा भोज कहां गङ्गू तेली।

कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा भानमती ने कुनबा जोड़ा।

कागज़ की नाव नहीं चलती।

काठ की हाँडी दुबारा नहीं चढ़ती।

काम जो आवै कामरी का ले करे कुमाच ?

काम प्यारा है चाम नहीं।

का वर्षा जब कृषी सुखाने।

काला अक्षर भैंस बराबर।

कै हंसा मोती चुगे कै फाके मर जाय।

कोयला होय न ऊजला सौ मन साबुन धोय।

कोठी वाला रोवे छप्पर वाला सोवे।

कोयलों की दलाली में हाथ काले।

खरी मजूरी चोखा काम।

खाइये मन-भाता, पहनिये जग-भाता।

खिलाये का नाम नहीं रुलाये का नाम हो जाता है।

खुदा गञ्जे को नाखून नहीं देता।

खेती खसम सेती—खेती मेहनत चाहती है।

खोदा पहाड़ निकली चुहिया-मेहनत बहुत की, फल थोड़ा मिला।

गये विचारे रोजड़े, रह गए नौ औ बीस।
गाडर पाली ऊन को लागी चरन कपास॥
गुड़ चाहिये मक्खियां बहुत आ जायंगी।
गुड़ दिये मरे तो जहर क्यों दे ?
गोद में बैठकर आँख में उंगली।
गोद में लड़का शहर में ढँढोरा।
घड़ी में तोला घड़ी में माशा—अव्यवस्थित चित्त।
घर की मुर्गी दाल बराबर—घर की चीज का आदर नहीं होता।
घर का जोगी जोगड़ा आन गाँव का सिद्ध।
घर का भेदी लङ्का ढावे।
घी बनावे तोरियां नाम बहू का होय।
चलती का नाम गाड़ी है—सफलता में वाह-वाह है।
चिकने घड़े पर पानी नहीं ठहरता।
चिराग़ तले अंधेरा।
चूल्हा फूकना और दाढ़ी रखना।
चूहे के चाम से क्या नगाड़े मढ़े जाते हैं ?
चोर की दाढ़ी में तिनका।
चोर के पैर नहीं होते।
चोरी का माल मोरी में—अनुचित तरीके से कमाया धन बुरे कामों में लगता है।
चोर से कहे चोरी कर और शाह से कहे जागते रहो।
चौबे गये छब्बे होने दुबे रह गये।
छछूँदर के सिर में चमेली का तेल—अयोग्य व्यक्ति का मान।
जने जने की लाकड़ी एक जने का बोझ।
जब तक साँसा तब तक आसा।

जबरदस्त मारे और रोने न दे।

जवान ही हाथी चढ़ावे जवान ही सिर कटावे।

जल में रह कर मगर से बैर।

जस दूल्हा तस बनी बराता।

जहां न पहुँचे रवि तहां पहुँचे कवि—कवि की पहुँच सूरज से ज़्यादा है।

जहां मुर्गा नहीं होता वहां क्या सवेरा नहीं होता?

जादू वह जो सिर पर चढ़ कर बोले।

जान बची लाखों पाये।

जान मारे बानिया पहचान मारे चोर।

जाय लाख रहे साख।

जितने मुँह उतनी बातें।

जिसका ब्याह उसी के गीत।

जिसके पैर न फटी बिवाई सो क्या जाने पीर पराई?
The wearer knows where the shoe pinches.

जिसकी लाठी उसकी भैंस—might is right.

जिस थाली में खाना उसी में छेद करना।

जीभ भी जली और स्वाद भी न आया।

जैसा देस वैसा भेस।

जो गरजते हैं वे बरसते नहीं।

जो बोले सो कुण्डी खोले।

जो न देखा वही भला।

झूठ के पाँव कहां?

ठण्डा लोहा गरम लोहे को काटता है।

ठोकर लगे पहाड़ की तोड़े घर की सिल—बाहर बस न चले अपनों पर गुस्सा उतारे।

ढाक के वही तीन पात।

तख्त पर बैठें या तख्ते पर लेट जाँय।

तलवार का घाव भर जाता है बात का नहीं।

तबेले की बला बन्दर के सिर—एक का अपराध दूसरे के सिर पर मढ़ना।

तिनके की ओट पहाड़।

तिरिया तेल हमीर हठ चढ़ै न दूजी बार।

तीर न सही तो तुक्का ही सही।

ज्यों तेली के बैल को घर ही कोस पचास।

थोथा चना बाजे घना।

दमड़ी की गुड़िया टका ढोली का।

दान की बछिया के दाँत नहीं देखे जाते।

दिये तले अँधेरा।

दीवार के भी कान होते हैं।

दुविधा में दोनों गये माया मिली न राम।

दूध का जला छाछ को भी फूक फूक कर पीता है।

दूध का दूध पानी का पानी।

देनो पड़े बुनाई घटा बतावे सूत।

घी विवाही आँख लजाई—लड़की वालों को दबना ही पड़ता है।

धोबी का कुत्ता घर का न घाट का।

नक्कारखाने में तूती की आवाज़—बड़ों के आगे छोटों की बात नहीं सुनी जाती।

न रहेगा बाँस न बजेगा बाँसुरी—तुलना करो "न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी"।

नाच न जाने आंगन टेढ़ा।

नेकी और पूछ पूछ।

नौ नक़द न तेरह उधार।

नौ सौ चूहे खाय के बिल्ली हज को चली।

पहले लिख और पीछे दे, भूल पड़े कागज से ले।

पाँचों उंगलियाँ बराबर नहीं होतीं।

पानी मथने से घी नहीं निकलता।

बन्दर क्या जाने अदरक का स्वाद।

बगल में छुरी मुँह में राम-नाम।

बड़े बरतने की खुरचन भी बहुत होती है।

बद अच्छा बदनाम बुरा।

बनिये की सलाम भी बेगरज़ नहीं होती।

बावन तोले पाव रत्ती—बिलकुल ठीक।

बिंध गया सो मोती रह गया सो सीप।

बिना रोये तो माँ भी दूध नहीं पिलाती।

बिल्ली के भागों छींका टूटा।

बिस्मिल्लाह ही गलत है—प्रथमग्रासे मक्षिकापातः।

बूढ़ी घोड़ी लाल लगाम।

बैठे से बेगार भली।

भागते भूत की लँगोटी भली—न मिलने से कुछ मिलना भला है।

भैंस के आगे बीन बजाई भैंस पड़ी पगुराय।

मँगनी के बैल के दाँत नहीं देखे जाते।

मन चङ्गा तो कठौती में गङ्गा—मन शुद्ध है तो घर ही तीर्थ है।

मरता क्या न करता।

मांगे हरद दे बहेड़ा—आम्रान् पृष्टः कोविदारानाचष्टे।

मान न मान मैं तेरा मेहमान।

मानो तो देव नहीं तो पत्थर।

मियाँ की जूती मियाँ के सिर—जिसकी सिरोही सिर उसी का।
मुफ्त की शराब तो काजी को भी हलाल है।
मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक।
मेढकी को जुकाम हुआ है
म्याऊँ का ठौर कौन पकड़े ?
यथा राजा तथा प्रजा।
रस्सी जल गई पर बल नहीं गया।
रातों रोई एक न मरा—परिश्रम करके भी कुछ न मिलना।
रोज कुआँ खोदना रोज पानी पीना।
लंगड़ी कलटो आसमान में घोंसला।
लातों के भूत बातों से नहीं मानते।
लाल गुदड़ी में नहीं छिपते।
लेना एक न देना दो—बिना मतलब "दाल भात में मूसलचन्द"
वा सोने को जारिये जासों टूटे कान।
शक्करखोर को शक्कर मिल ही जाती है।
सदा नाव कागज की बहती नहीं।
सब दिन होत न एक समान।
सस्ता रोवे बार बार महँगा रोवे एक बार।
साँच को आँच नहीं।
साँप भी मर जाय और लाठी भी न टूटे।
सारी उमर भाड़ ही झोका।
सावन हरे न भादों सूखे।
सर मुँडाते ही ओले पड़े।
सीधी उँगली घी नहीं निकलता।
सूखे धानों पानी पड़ा।
सौ सुनार की एक लुहार की।

हँसा थे सो उड़ गये कागा भये दीवान।

हथेली पर सरसों नहीं जमती—बात कहते ही काम नहीं होता।

हाकिम के अगाड़ी और घोड़े के पिछाड़ी।

हाथ कङ्गन को आरसी क्या ?

हाथ सुमरनी बगल कतरनी।

हाथी के दाँत खाने के और दिखाने के और।

होत की जोत है।

होनहार बिरवान के होत चीकने पात।

३

दोष-निरूपण

छात्रों को चाहिये कि वे अपनी रचना को नीचे लिखे दोषों से बचावें। ये दोष किसी भी भाषा की रचना में आ सकते हैं और जिस रचना में भी ये आ जाते हैं उसे लचर और निर्जीव बना देते हैं।

अपनी रचना को बार-बार ध्यान से पढ़ो और देखो कि उसमें इन दोषों में से कोई दोष तो नहीं आ गया है।

१ अपूर्णता

हमारा आशय तभी स्पष्ट होता है, जब कि उसे व्यक्त करने के लिये रचना में शब्द पूरे हों। कभी-कभी जल्दी में लेखक आवश्यक शब्दों को छोड़ जाते हैं, जिसका परिणाम यह होता है कि वाक्य या अर्थ पूरा नहीं हो पाता और आकांक्षा बनी रह जाती है। नीचे लिखे वाक्यों में अभिप्रेत अर्थ स्पष्ट नहीं होता:—

अशिष्ट	शिष्ट
१ देश की जितनी दुर्दशा हो रही है उतनी पहले कभी नहीं हुई।	—आजकल या इस समय—
२ संस्कृत में जो स्थान वाल्मीकि की रामायण का है वही तुलसी की रामायण का है।	—वही हिन्दी में तुलसी की—

३	निशा के तमसान्धकार पर उषा का असीम आलोक प्रसरित हो इसी प्रकार —	जिस प्रकार निशा—
४	नदी-तट पर जब उसने सुना था कि ब्राह्मण विष्णुगुप्त नन्दराज का अपमान कर उसके गया है तब पहले तो उसके हृदय में धक्का लगा। नरेन्द्र देव के क्रोध से कुचले गये।	"धक्का लगा" के बाद दूसरे...अपेक्षित है।
५	उन्होंने उपदेशक को चोट पहुँचाई और समाज से अलग हो जाने के लिये धमकाया।	—चोट पहुँचाई और उसे धमकाया यदि तुम समाज से अलग न होगे तो तुम्हारे लिये अच्छा न होगा
६	स्वतन्त्रता के साथ इस देश की गरीबी का अन्त हो जायगा।	—स्वतन्त्रता मिलते ही इस देश की—

(२) कठिन शब्द

जहां तक हो सके भाषा को जटिलता से बचाना चाहिये—जटिल शब्दों की अपेक्षा सरल शब्द और जटिल वाक्य रचना की अपेक्षा सरल वाक्य-रचना अधिक मनोहर होती है। जब पाण्डित्य दिखाने के लिये कठिन शब्दों का प्रयोग किया जाता है तब भाषा भद्दी हो जाती है और शैली खटकने लगती है। उदाहरण के लिये:—

जटिल	सरल
१. तेरे मरे हुए स्वजनों की स्मृति तुझे दग्ध कर रही है।	—जला रही है।

२. मन्द प्रकाश प्रसरित करता हुआ दीपक।	—फैलाता हुआ—
३. हमें अपने धर्म पर आचरण करना चाहिये।	—धर्म पर चलना चाहिये।
४. छोटी सी चोला परिधान के द्वारा आभरण आच्छादित कर अधो मुखी बैठी थी।	चोला के गहने उसके कपड़ों में छिपे हुए थे। वह नीचा मुंह किये बैठी थी।
५. संभ्रम और भय उसके अवयवों को पुनराच्छादित करने का व्यर्थ प्रयत्न करने लगे।	संभ्रम और भय से उसका शरीर स्तब्ध होने लगा।
६. श्रीमती मालती पांडे ने भी अपना नृत्य प्रदर्शित किया।	—अपना नाच दिखाया।
७. आज हमारा उदर परिपूर्ण है।	—पेट भरा है।
८. मन भर कर उसका अवलोकन कर लो।	—उसे देख लो।
९. चारों ओर से फव्वारों से वेष्टित चबूतरा है।	—फव्वारों से घिरा हुआ।
१०. वह आज प्रस्थित हो रहा है।	—जाने वाला है।
११. उसकी नौका भ्रमिगत हो गई।	—भंवर में पड़ गई।
१२. मेरी श्रवणेन्द्रिय में दर्द है।	—कान में।
१३. मैं अपने पैर परिचालन कर रहा हूँ।	— हिला या चला रहा हूँ।
१४. मैं अल्प समय पश्चात् बाहर जा रहा हूँ।	—थोड़ी देर बाद—
१५. पक्षी अपना नीड़ निर्माण कर रहा है।	—घोंसला बना रहा है

बहुधा लेखक विद्वत्ता दिखाने के लिये अपनी रचना में रक्ताभ, नातिस्थूल, औद्धत्य, औन्नत्य, याथार्थ्य, काठिन्य, ईषत्, धूमायित, प्ररोचित, गड्डलिका प्रवाह-आदि कठिन शब्दों का प्रयोग करते हैं। इससे हिन्दी बिगड़ जाती है और पाठकों के हाथ पल्ले कुछ नहीं पड़ता। विद्यार्थियों को कठिन शब्दों के प्रयोग से दूर रहना चाहिये।

(३) अस्वाभाविक शब्द

भाषा स्वाभाविक होनी चाहिये। स्वाभाविक भाषा ही चलती भाषा कहलाती है। इसके विपरीत कृत्रिम भाषा लचर बन जाती है और उसका वेग मारा जाता है। ध्यान रखो कि तुम्हारी रचना में लचरपन, खटक या रुकावट न आने पावे और तुम्हारे शब्द आसानी से अभिप्रेत अर्थ का बोध कराते जांय।

नीचे लिखे वाक्यों में घुमा फिरा कर अर्थबोध कराया गया है:—

अशिष्ट	शिष्ट
१. उसने सामान की तोड़ फाड़ की।	—सामान तोड़ फोड़ डाला।
२ उसने लाल रङ्ग के पुष्प का विक्रय किया।	—रङ्ग का फूल बेचा।
३ इसे दङ्गा कह कर पुकारना अनुचित है।	—इसे दङ्गा कहना ठीक नहीं है
४ बहुत से लोग इस धारणा के बन गये हैं।	—लोगों की यह धारणा है।
५ बहुत से शब्द लेखकों की लेखनी की नोक पर अशुद्ध हो गये हैं।	—लेखकों के प्रयोग से।
६ प्रेत सदृश्य जीवन यापन करने से जीव का मृत्यु श्रेयस्कर है।	—बेकाम जीने से मरना अच्छा है।

७ उन्होंने इस विषय में अपने अनुराग का परिचय दिया।	—अनुराग दिखाया।
८ आपने जलंधर जाते समय यहां यात्रा भङ्ग की थी।	—आप जालंधर जाते समय यहां ठहरे थे।
९ जो चोटें उन्हें सहनी पड़ी थीं उनके फल-स्वरूप वे बुरी तरह से घायल हो गये हैं।	—उनके कारण वे बुरी तरह घायल हो गये हैं।
१० अभी महीनों तक यह कार्य जारी रहेगा।	—काम—
११ हिन्दी की ऐसी खिचड़ी बन जावेगी जो किसी की समझ में नहीं आवेगी।	—किसी काम की न होगी।
१२ इस समस्या की औषध उनके पास है।	—समस्या का हल।
१३ फव्वारों की कलकल ध्वनि के साथ अपने आनन्द की मौन ध्वनि का सम्मिश्रण करने के लिये उसे नीरव वातावरण की ही आवश्यकता होगी।	—दूषित वाक्य का नमूना; ध्यानदो "मौन ध्वनि"

(४) अनुपयुक्त तथा बेमेल शब्द

भाषा में सौन्दर्य लाने के लिये शब्दों के ठीक-ठीक अर्थ का ज्ञान होना आवश्यक है। बहुधा लेखक शब्दों का भण्डार तो बढ़ा लेते हैं, किंतु उनके ठीक-ठीक अर्थ को नहीं समझ पाते और मनमाने ढङ्ग से उनका प्रयोग कर बैठते हैं। अच्छा

लेखक वही है जो शब्द भी जानता है और अर्थ भी; और साथ ही इस बात पर भी ध्यान रखता है कि किस शब्द का किस अर्थ में और किस अवसर पर प्रयोग होना चाहिये। इस ज्ञान के बिना भाषा नहीं सजती और अर्थ का अनर्थ हो जाने का डर बना रहता है। नीचे लिखे वाक्यों में कुछ शब्दों का अनुचित प्रयोग हुआ है:—

१. उद्यान के दो विभागों में से ऊपर का भाग जनाने उपयोग में आता था।	—ऊपर का विभाग अन्तःपुर था; या—स्त्रियों के काम में आता था।
२. कवि, चित्रकार, शिल्पी कोई भी उन्मुख नहीं जाता था।	—पराङ्मुख—; हताश नहीं लौटता था।
३. एक दिन किसी ने बादशाह से चुगली खाई कि ये मधुर गाना गाते हैं।	—से कहा —
४. इसने मेरे जीवित मृतक शरीर को अनुप्राणित कर दिया।	—इसने मेरे मुर्दा शरीर में जान डाल दी।
५. प्रतिव्रता को छूने का उत्साह कौन करेगा।	— छूने का दुःसाहस—
६. उनके प्रभुत्व की जो धाक जमी थी उसके लिये वही उत्तरदायी थे।	—उसका श्रेय उन्हीं को था।
७. कश्मीर की समस्याओं की आँखों-देखी कहानी।	—आँखों देखा हाल या विवरण।
८. राम-नाम कह कर साधु ने अपनी जान गंवाई।	—पुकार कर साधु ने जान दे दी।
९. गिलहरी पेड़ की छत पर चढ़ गई।	—की चोटी पर—
१०. इस मकान में नगर की सारी	

जन-संख्या आराम कर सकती है।	—के सारे आदमी।
११. यदि नदी का पानी कुछ और बढ़ा तो सारे गाँव के डूब जाने का संदेह है।	—और बढ़ गया तो सारे गाँव के डूब जाने की आशङ्का (या भय) है।
१२. तभी से देश के गले में पराधीनता की बेड़ियां पड़ गईं।	—पैरों में बेड़ियां—
१३. इस विषय में मेरे विचार प्रकट कर चुका हूँ।	—अपने विचार—
१४. स्वतन्त्रता लड़कर मिलेगी।	—लड़ने में—
१५. आँसू-गैस छोड़कर उपद्रवी पकड़े गये।	—उपद्रवियों को पकड़ा।
१६. घोड़े मरणतुल्य हो गये।	—मरणासन्न—
१७. एक तो यहां सिंचाई की व्यवस्था की जाय दूसरे वन लगाये जांय।	—वन पैदा किये जांय या पेड़ लगाये जांय।
१८. उनकी बातें सुनकर मैं कम्पायमान हो गया।	—काँप गया।

(५) व्याकरण-भङ्ग

भाव और शब्द दोनों के होने पर भी यदि व्याकरण के नियमों का उचित पालन नहीं हुआ तो समझो तुम्हारी रचना पङ्गु बन गई और उसका सामर्थ्य जाता रहा। बहुधा अच्छे लेखक भी जल्दी में व्याकरण पर ध्यान नहीं देते और उनके वाक्य लचर बन जाते हैं। नीचे दिये उदाहरणों में व्याकरण के नियमों का भङ्ग स्पष्ट है:—

१. मैंने उन्हें अनेकों बार समझाया।	—अनेक बार—
२. वहां अनेकों आदमी इकट्ठे हो गये।	—अनेक आदमी—

३. ऋषि मुनि इत्यादियों का मत है।	—मुनि आदि का—
४. लाल किला में उपद्रव।	—किले में—
५. यह पुस्तक उस छापाखाना में छपी है।	—छापेखाने में—
६. इसके अच्छापन का मुझ पर प्रभाव पड़ा।	—अच्छेपन का—
७. उन्हें चार घोड़े और एक बैल का दाम मिला है।	—घोड़ों और एक—
८. स्नेहसिच्य स्वर में मैनाकी ने कहा।	स्नेहसिक्त—
९. जिसने इस चर्म वैर को भेद दिया है।	—चरम वैर—
१०. आक्रंदन करते हुए नर नारियां पास आयें।	—करती हुई नर-नारियां पास आईं।
११. बिना अच्छा भोजन के अच्छा स्वास्थ्य असंभव है।	—अच्छे भोजन के—
१२. इस समय उसे अपना प्रताप और नन्द का निर्माल्य—दोनों को अपनी अपनी पराकाष्ठा पर देखा।	—उसने—
१३. यहां चक्रवर्ती नंद के पिता के समय का एक महान् संमानप्राप्त प्रतापी शकटाल एक छोटे से घर में क्षुद्र जीवन बिता रहे थे।	—बिता रहा था।
१४. जो जो विचार मन में चल रहे थे, वे सब भूलकर......	—उन्हें या उन सबको—

१५. लेकिन सौ धनुर् से।	—सौ धनुषों से।
१६. नूरजहाँ भी काल के गाल में विलीन हो गई।	—काल की गाल में—
१७. इतने में दूसरी ओर से कुछ आदमी आ पहुँचे और उपद्रव करने की चेष्टा की।	—आ पहुँचे और उन्होंने—
१८. उसने उधर देखा और बोला।	—और वह बोला
१९. जलूस कचहरी गया और वहां प्रदर्शन किया।	—वहां उसने प्र—
२०. वह वहां जाकर बैठ गया और कहा—	—और उसने कहा।
२१. जहां मैं चूकता हूँ, वहां पैर टूटे।	—टूटते हैं; या—चूका वहां पैर टूटे।
२२. उन्होंने गोले और तोपों से आक्रमण किया।	—गोलों और—
२३. सभी श्रेणी के लोग वहां आये थे।	—श्रेणियों के—
२४. उनके पास दो दासियां और पद्मावती थीं।	—पद्मावती थी।
२५. हमको बहुत सी बातों को सीखना पड़ता है।	—हमें बहुत सी बातें सीखनी पड़ती हैं।
२६. वह हंस पड़ा और कहा।	—और उसने कहा।
२७. इस बात को सुन वह क्रोधित हो उठा।	—क्रुद्ध हो—
२८. इस दवा से सब रोग नाश हो जाते हैं।	—रोग नष्ट—

२९. उसमें नशा की अपेक्षा ठंडई की ही मात्रा अधिक रहती है। —नशे की-;-ठण्डई ही की—

३०. गुरु अर्जुनदेव के रक्त का सींचा हुआ। —रक्त से सींचा—

३१. दिलीप, दशरथ, कृष्ण और भीष्म के त्राण हो। —भीष्म का त्राण—

३२. उसके पैर की आठ अंगुलियां गल कर गिर गईं। —पैरों की—

(६) दूषित वाक्य-रचना

भाषा का प्रवाह ठीक रखने के लिये आवश्यक है कि शब्दों का चुनाव ठीक हो; उनका उपन्यास व्याकरण के नियमों के अनुसार हो; विभक्ति और अव्यय आदि का उपयोग उचित हो और भाव तथा भाषा में सामञ्जस्य हो। सरल वाक्य रचना में इन बातों का निभाना आसान है, किंतु मिश्र वाक्य-रचना में ये बातें दुःसाध्य हो जाती हैं; और बहुधा मँजे लेखक भी इन बातों के विषय में मुँह की खा बैठते हैं। निम्न-लिखित वाक्यों में दोष स्पष्ट है :—

अशिष्ट	शिष्ट
१. कांग्रेसियों को चन्दों के विषय में जागरूक रहना चाहिये, लेकिन उनकी यह जागरूकता अपनी सीमा को न लांघ जाय जिससे कि हम किसी पर ऐसे अभियोग और छींटे न फेंकें, जिन्हें हम प्रमाणित नहीं कर सकते।	—चन्दों के उपयोग के बारे में सावधान रहना चाहिये। किंतु इतनी सावधानी भी अच्छी नहीं कि हम किसी पर ऐसा अभियोग लगावें, जिसे हम प्रमाणित न कर सकें। (उद्धृत वाक्य भ्रष्ट भाषा का बोलता नमूना है)

२. स्टर्लिङ्ग के मूल्य में कोई संभावितर कमी करने के प्रश्न पर जब भारत के दृष्टिकोण के संबन्ध में पूछा गया—	स्टर्लिङ्ग के मूल्य में किसी तरह की कमी करने के बारे में जब भारत की राय पूछी गई तब—
३. कांग्रेसियों को यह अनुभव करना चाहिये कि उनकी कदर उनकी वर्तमान कार्रवाइयों पर निर्भर करती है।	कांग्रेसियों को यह समझ लेना चाहिये कि उनकी कदर उन की मौजूदा कार्रवाइयों पर निर्भर है। (कार्रवाइयों के के साथ वर्तमान नहीं सजता)।
४. गुरु के पास रह कर अधिकार कैसे जमा लेना यह वह जानता था।	—कैसे जमाया जाता है यह—
५. गौरी दुष्प्राप्य होती दीखी और स्वयं कोई स्थूल और क्षुद्र अपराधी हो जैसा दीखा।	निरर्थक वाक्य का नमूना !
६. तुझे ही निश्चय करने का है।	—निश्चय करना है।
७. इस सार्वजनिक अधीरता से अस्पर्श्य शकटाल दृष्टिविहीन आँखें खोले मौन माला जप रहे थे।	दुष्ट वाक्य का बोलता नमूना !
८. तास ने ग्रीस यूगोस्लाव सीमा पर ग्रीस की एकतन्त्र की पक्षपाती सेनाओं द्वारा सशस्त्र उत्तेजनाओं की एक तालिका प्रकाशित की है।	—एकतन्त्रवादी सेनाओं द्वारा दी गई धमकियों की—

९. इसके स्वर में मिठास थी अथवा तिरस्कार यह निश्चयात्मक नहीं (कहा) जा सकता	—मिठास था या तिरस्कार यह निश्चय से—
१०. युद्धकाल में देश के संमुख जो आर्थिक विषमता उत्पन्न हुई थी वह लुप्त होकर आज रक्तबीज के रूप में देश का संहार कर रही है।	—वह से आगे वाक्य निरर्थक है।
११. एक ही दिन में जब यह स्थिति हो गई है तो इसे गुरुपद पर स्थापित कर दिया जाय, तो जाने क्या होगा।	—तो यदि इसे गुरुपद पर बिठा दिया जाय तो न जाने क्या होगा।
१२. इन सबों ने भी एक एक दो दो महल बनवाये थे।	—सब ने भी—
१३. थक कर शेष के मुंह से आग निकलने लगी।	शेष थक गया और उसके मुंह से—
१४. हम लोगों का कर्तव्य है कि जहां तक हो सके गरीबों की सहायता की जाय।	—सहायता करें।
१५. वहां जंगली फल और झरनों का पानी पीकर हम आगे बढ़े।	—फल खाकर और झरनों—
१६. इससे उन्हें आशा थी कि इस्लाम का भविष्य उज्वल है।	—भविष्य उज्वल होगा।
१७. तब शायद यह काम जरूर हो जायगा—	शायद और जरूर विरोधी हैं।

१८.	प्रायः ऐसे अवसर आते हैं, जिन में लोगों को कभी-कभी अपना विचार बदलना पड़ता है।	प्रायः और कभी-कभी विरोधी हैं।
१९.	यदि भारत गुलाम न होता तो कभी का स्वतन्त्र हो चुका होता।	गुलाम न होता और स्वतन्त्र होना दोनों एक हैं।
२०.	हम उनका मुंह उन्हें सौ रुपये देकर बन्द करना चाहते हैं।	उन्हें सौ रुपये देकर उनका—
२१.	अगले दो दिनों में मन्त्रियों की जो बातचीत चल रही है उसका निपटारा हो जायगा।	मन्त्रियों की जो बातचीत चल रही है उसका अगले—
२२.	वे पुराने कपड़े के व्यापारी हैं।	कपड़े के पुराने व्यापारी हैं।
२३.	विदेशी सिलाई के तागे।	सिलाई के विदेशी तागे।
२४.	सरकार के पास प्रान्त भर से जो समाचार मिले हैं।	समाचार आये हैं।
२५.	हमें ऐसा प्रबन्ध करना चाहिये कि हम अपनी स्वतन्त्रता न खो सकें।	स्वतन्त्रता खो न बैठें।
२६.	वह मैं ही हूँ जिन्होंने तुझे बचाया था।	—जिसने तुझे—
२७.	मैंने उन्हें अनेकों बार समझाया	—अनेक बार—
२८.	जैसे भक्तिपूर्ण कुटिल शब्दों से राम को समझाकर विभीषण झटपट समुद्र का पुल बंधवाकर उन को लड़ाई के लिये चढ़ा ले गया वैसे ही रामराय ने औरंगजेब के कान भर भर कर उसको गुरु तेग के सामने के लिये उद्यत कर दिया।	जैसे भक्तिपूर्ण कुटिल शब्दों से राम को समझाकर विभीषण ने झटपट समुद्र का पुल बंधवाकर उन्हें लड़ाई के लिये चढ़ा दिया था वैसे ही रामराय ने औरङ्गजेब के कान भर-भर कर उसे गुरु तेग पर आक्रमण करने के लिये उद्यत—

(७) व्यर्थ शब्द

लिखते समय ध्यान रखो कि रचना में व्यर्थ शब्द न आने पावें। जिन वाक्यों में व्यर्थ शब्द आ जाते हैं, वे भद्दे तो रहते ही हैं, कभी-कभी इन शब्दों के कारण वे अशुद्ध भी हो जाते हैं। नीचे लिखे वाक्यों में व्यर्थ शब्द खटक रहे हैं:—

	व्यर्थ शब्द
१. युद्ध मैदान में होकर हुआ।	होकर
२. यह भी संभव खयाल किया जाता है कि वर्षा होगी।	संभव
३. इस काम से तो उनकी निगाह में शासन की कोई प्रतिष्ठा शेष न रह जायगी।	शेष
४. निशात भी एक रमणीय और नयनाभिराम उद्यान है।	नयनाभिराम
५. समाज-सेवा में भी वह एकमात्र सबसे पुराने रह गये।	एकमात्र
६. शरणार्थी अपने पांवों पर स्वयं खड़े हों।	स्वयं
७. इन उपवनों की जोड़ के उद्यान कश्मीर में तो क्या अन्य किसी भी स्थान में प्राप्य नहीं है।	अन्य
८. मैं दो दिन दिल्ली में रहकर आगरा गया था।	में
९. आज तुमने अपनी नई चालाकी का नया नमूना दिखाया है	नई, नया

१०. एक घर जो खाली पड़ा था, उसे जलाकर राख कर दिया गया।	उसे
११. उनके साथ उचित न्याय किया जायगा।	उचित
१२. वह सुन्दर शोभा धारण कर रहा था।	सुन्दर
१३. यह सिद्धान्त ऐसा है जिसकी कि सत्यता में मुझे संदेह है।	कि
१४. मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता हूं।	हूं
१५. इस काम के लिये ऐसा व्यक्ति चुना जाना चाहिये जो किसी समय इस पद पर रह चुका हो।	किसी समय
१६. वे अपनी प्रतिज्ञा के शब्दों पर अटल रहे।	के शब्दों
१७. ऐसे अवसरों के लिये राजा बहादुर के यहां उनका नित नेवता रहता है।	नित
१८. उनके पत्ते असमय ही में क्यों नहीं गिर जाते ?	में

(८) पुनरुक्ति

अच्छी रचना वह है, जिसमें उतने ही शब्द आवें जो अर्थ-बोध कराने के लिये आवश्यक हों। कभी-कभी लेखक एक ही अर्थ को प्रकट करने के लिये दो शब्दों का प्रयोग कर बैठते हैं, जो अनुचित है। ध्यान रहे कि हमारे वाक्यों में एक ही अर्थ या भाव प्रकट करने वाले एक साथ दो शब्द न आने पावें। नीचे लिखे वाक्यों में पुनरुक्तिदोष स्पष्ट है:—

अशिष्ट	शिष्ट
१. उन्होंने अपनी कविता स्वयं आप पढ़कर सुनाई थी।	—अपनी कविता आप या स्वयं पढ़कर—
२. वे अपनी चतुरता और चालाकी से सबको प्रसन्न रखते हैं।	चतुरता से या चालाकी से
३. इधर आजकल यह देखने में आ रहा है—	इधर या आजकल—
४. सिवा आपको छोड़कर कोई ऐसी बात नहीं कह सकता।	सिवा आपसे या आपको छोड़कर
५. सारे देश भर में यह बात फैल गई।	सारे देश में या देश भर में—
६. मैं पूरी शक्ति भर यह काम करूँगा।	पूरी शक्ति से या शक्ति भर—
७. उसके मन की थाह का पता नहीं चलता था।	थाह या पता—
८. किसी और दूसरे आदमी को वहां भेजो।	और या दूसरे—
९. आप अपनी ताकत के बल पर।	—ताकत से या बल से
१०. मैं आज प्रातःकाल के समय वहां गया था।	प्रातःकाल या प्रातः समय।
११. वे लोग परस्पर एक दूसरे को संदेह की दृष्टि से देखते थे।	परस्पर या एक दूसरे को—
१२. वह इस काम की व्यवस्था का कोई प्रबन्ध नहीं कर सका।	इस बात की व्यवस्था या इस बात का प्रबन्ध—

१३. हमारे यहाँ किशोर नवयुवकों की शिक्षा का प्रबन्ध नहीं है।	किशोरों की या नवयुवकों की—
१४. कृपया आप यह बताने का अनुग्रह करें।	कृपया आप यह बतावें या आप यह बताने का अनुग्रह करें।
१५. उन्हें अपने अहंकार का गर्व है।	उन्हें अहंकार है या गर्व है
१६. उन्हें मृत्यु दण्ड की सजा मिली है।	उन्हें मृत्यु-दण्ड मिला है या मृत्यु की सजा मिली है।
१७. यह ऐसा काम है जो मुझ से संभव नहीं हो सकता।	मुझ से संभव नहीं है या मुझ से नहीं हो सकता।
१८. यह काम क्योंकर और कैसे हुआ।	क्योंकर या कैसे; अथवा यह काम क्यों और कैसे हुआ।
	क्यों कारण बताता है और कैसे प्रकार।
१९. उन्हें व्यर्थ रुपये देने से कोई लाभ नहीं है।	उन्हें रुपये देना व्यर्थ है या उन्हें रुपये देने से कोई लाभ नहीं है।
२०. उसके बाद वे वापस लौट आये—	उसके बाद वे लौट आये या इसके बाद वे वापस आये।
२१. वह ठंडी बरफ खाता है।	वह बरफ खाता है।
२२. गरम आग जल रही है।	आग जल रही है।
२३. वह विलाप करके रोने लगा।	वह बिलपने लगा या रोने लगा।

(९) संदेह

रचना का प्रयोजन भाव प्रकट करना है। इसके लिये आवश्यक है कि वाक्य-रचना सरल हो और उसमें इष्ट अर्थ झलकता हो। ऐसा न हो कि अभिप्रेत अर्थ के सिवा हमारे वाक्य का दूसरा अर्थ भी निकले और पढ़ने या सुनने वाला इस अर्थ के विषय में भ्रम में पड़ जाय। नीचे लिखे वाक्यों में वक्ता का आशय स्फुट नहीं होता; यही इन में दोष है।

संदिग्ध	स्पष्ट
१. एक साथ सर्वशक्तिमान् की कला का और मनुष्य की परिमित शक्तियों से अद्भुत कला का आनन्द लाभ करने का यह साधन उद्यान निर्माताओं के कला प्रेम का द्योतक है।	निरर्थक शब्दाडंबर का नमूना है।
२. स्थान-स्थान पर ऊंचाई से गिरने और फव्वारों को घेर कर बहने के कारण उद्यान की शोभा अद्वितीय हो गई है।	यह नहर के विषय में कहा गया है; किंतु उसका वाक्य में जिक्र तक नहीं है।
३. आप इसी काम के लिये विशेषतः हरिद्वार से आये थे।	आप विशेषतः इसी—
४. नेहरू जी ने बिहारियों से कहा कि मुसलमानों को छूने से पहले वे उन्हें मार डालें।	—कि मुसलमानों पर हाथ उठाने से पहले आप मुझे मार डालें।
५. आपने एक छात्रों की सभा में भाषण दिया।	—छात्रों की एक सभा में—

६. उन्होंने बर्मा से शस्त्र भेजने का प्रबन्ध किया था, पर वे बीच ही में पकड़ लिये गये।	—प्रबन्ध किया था पर उनके भेजे शस्त्र बीच—
७. भले ही फार्म निजी हो, जैसा कि अमेरिका में है, या सामूहिक हों जैसा कि सोवियत संघ में है, कृषि अर्थशास्त्र की किसी पुस्तक के अवलोकन द्वारा प्रमाणित की जा सकती है।	कृषि से आगे सारा वाक्य संदिग्ध है।
८. इस गुत्थी की गांठ वैमनस्य में भीग कर गहरी हो गई है और उनके सहज ही खुलने की आशा नहीं है।	उनके; किनके ?
९. मैं रुई का फाहा नहीं हूँ कि लोग फूक देंगे और उड़ जाऊंगी।	'फूक मारेंगे'
१०. अपने कर्तव्य की गुरुता से निस्तब्ध प्रहरी जैसे खड़े हुए—	"गुरुता से" का संबन्ध "निस्तब्ध" के साथ है या "खड़े हुए" के ?

(१०) अहिन्दी-शैली

हर भाषा के बोलने और लिखने का अपना निजी ढंग होता है। कुछ बातें तो ऐसी हैं जो अनेक भाषाओं में एक ही शैली से लिखी जाती हैं, किंतु बहुत सी ऐसी हैं जो हिन्दी वाले एक ढंग से लिखते हैं तो उर्दू या अंग्रेजी वाले दूसरे ढंग से। सफल लेखक वह है जो हिन्दी लिखते समय हिन्दी की

शैली को बरते और उसमें दूसरी भाषाओं की खिचड़ी न बना दे। बहुधा लेखक हिन्दी लिखते समय उर्दू अथवा अंग्रेजी के मुहावरों का प्रयोग कर जाते हैं जिससे हिन्दी का रूप बिगड़ जाता है। नीचे लिखे वाक्यों में अहिन्दी-शैली बरती गई है:—

१. उस समय सौन्दर्य न जाने कितने गुने अधिक हो जाता है।	—कितना अधिक हो—
२. मैं आपसे यह कहना मांगता हूँ।	—चाहता हूँ।
३. अब तो हम हमारे घर जायंगे।	—अपने घर
४. आज हमने वहां जाना है।	—हमें वहां—
५. हम आपसे कहे थे।	हमने आप से कहा था।
६. हम वहां जाने नहीं सकेंगे।	—नहीं जा—
७. उस स्त्री ने कहा कि उसका पति उसे बहुत मारता है और उसे भय है कि उसके साथ रहने में उसके प्राण न बचेंगे।	उस स्त्री ने कहा कि मेरा पति मुझे मारता है और मुझे भय है कि उसके साथ रहने में मेरे प्राण न बचेंगे।
८. नेहरू ने बिहारियों से कहा कि मुसलमानों को छूने से पहले वे उन्हें मार डालें।	—मुसलमानों पर हाथ डालने से पहले आप मुझे मार डालें।
९. सैनिकों को इन सब बातों से ऊपर रहना चाहिये।	—बातों से अलग—
१०. न केवल यही, बल्कि वे वहाँ से चले भी आये।	—यही नहीं, बल्कि वे—
११. आप कल वहाँ जायंगे, ऐसा मैं समझता हूँ—	मैं समझता हूँ कि आप कल वहाँ—

१२. बंगाल के उपद्रव को लेकर महात्माजी अनशन का विचार कर रहे हैं।	—उपद्रव के कारण—
१३. निकट भविष्य में ऐसा होने वाला है।	—जल्दी ही, शीघ्र ही ऐसा—
१४. हम उनका नाम आदर के साथ लेते हैं।	—आदर पूर्वक, या आदर से—
१५. यह बीमारी देश में लड़ाई के द्वारा फैली थी।	—लड़ाई के कारण—
१६. लड़ाई के द्वारा लोगों ने धन कमाया।	—लड़ाई में—
१७. हमने वहां जाना है।	•हमें वहां—
१८. जब मुसलमान देश में प्रवेश किये थे—	जब मुसलमानों ने देश में प्रवेश किया था।
१९. वे दोनों शाम टहलने जाते हैं।	वे दोनों समय—
२०. पूर्व इसके कि कोई हंसे, हम स्वयं हंस पड़ते हैं।	किसी के हंसने के पहले हम —
२१. बिना किसी की सहायता के यह काम नहीं हो सकता।	किसी की सहायता के बिना—
२२. इसके बदले कि आप यहाँ आवें मैं ही आपके यहाँ आ जाऊंगा।	आपके यहाँ आने के बदले मैं ही—
२३. अच्छा हो कि आप पुस्तक दे दें।	आप पुस्तक दे दें तो अच्छा हो।
२४. मैं यह काम किया चाहता हूँ।	मैं यह काम करना चाहता हूँ।

अभ्यास

निम्न वाक्य हिन्दी के धुरंधर लेखकों से लिये गये हैं। इन्हें हेतु बताते हुए शुद्ध करो:—

१. उसकी गणना गण्यमान्य मुख्य महन्तों में की जाती थी।

२. जब किसी ने भी राजा के स्वेच्छाचार में रोड़ा अटकाया।

३. वास्तविक बात का पता लगाने के लिये जाता हूँ।

४. उसने जनता की मनोवृत्ति को भांपा और रमणी की लाश के पास पहुँच गया।

५. लहू से नहाई कटार को उसने उठाया और ऊंचे स्वर से कहने लगी।

६. नगर के मुखियों की सर्वसम्मति से घोषणा दी गई।

७. शासन प्रणाली का ठीक रूप निर्णय करने के लिये हमें वहाँ जाना चाहिये।

८. वह अपनी जीत के उपाय सोचने लगा।

९. तभी उसे जान पड़ता था कि वह मर कर रहेगा।

१०. दीवार की दरारों से छन कर जो प्रकाश आता था उसे घूरने लगा।

११. उसने सिर झुका लिया और हिले डुले बिना खड़ा रहा।

१२. यद्यपि प्रत्येक पल उसे अनिर्वचनीय दुःख देता था।

१३. उसने बड़े ही अनुनय और बड़े ही करुण ढंग पर हिनहिनाना आरम्भ किया।

१४. परन्तु छुटकारे के विचार की उत्तेजना और गंभीर भय से वह सहम गया।

१५. उसने हताश स्वर में कहा।

१६. वह आफत मचायेगा।

१७. गरीबों का पेट काटने के लिये ही द्रव्याधीशों का आविष्कार हुआ है।
१८. उसने पांच रुपये महीने देने को कहा था।
१९. मैं सवेरे आपके यहां गया था; पर आप घर में नहीं थे; इसलिये हम लौट आये।
२०. गंगाजी और उसकी सहायक नदियां।
२१. महल की एक ऊंची छत पर खड़ी अहिल्या रो रही थी।
२२. महल के नीचे आकर उसने घोड़े को रोक लिया और इधर उधर देखने लगा।
२३. वह उसकी इस निर्भीकता और भोलेपन पर प्रभावित हो उठा।
२४. कमाण्डर का हुक्म है कि दुश्मनों की कोई भी निशानी बाकी न रहने दी जायगी।
२५. विचारों के तूफान उठ रहे थे।
२६. मैना के जलते हुए अधरों को मुस्कराहट ने चूम लिया।
२७. पिंजड़े में बंद शेर शेर ही होता है।
२८. कैदियों के लिये टीन लगा कर अलग बैरकें बना दी गई हैं। उन्हीं में से एक गंदी, भयानक और संकरी कोठरी में मैना डाल दी गई।
२९. वह गांव में आया और सामने घड़ी निकाल कर रख दी।
३०. उन्होंने इसको महज गप्प बतलाया।
३१. हमारी नाक में दम हो गया।
३२. कसर न उठा रखो।
३३. गीता रामायण इत्यादि का क्या होगा।
३४. तब आदमी कीड़ों-मकौड़ों की तरह भुनने लगे।
३५. आप की सहमति लेकर मैं रामपुर जाऊँगा।

३६. लोग उत्साहपूर्वक इधर-उधर घूमते गरजते चिल्लाते और लड़े हुए युद्धों के संस्मरणों की पुनरावृत्ति कर रहे थे।

३७. किसकी स्पर्धा है कि पुरुष श्रेष्ठ की आन का उल्लङ्घन करे।

३८. वीरता का प्रवाह उछाले खा रहा था।

३९. जन-समूह में जब शौर्य वातावरण व्याप जाता है।

४०. पूरे वर्ष भर में मैंने तुम्हें चालीस रुपये दिये हैं।

४१. अपने एकाकीपन में अंतर की गहराइयों में उतर कर जब मैंने सोचा तो निरा अंधेरा पाया।

४२. साश्रुनयन हो मुनि ने कहा।

४३. "पास के जंगल में आकर जब प्रतीप बस गया तो उसके मन को बड़ा सुख हुआ। पर कहीं सहस्रार्जुन कुपित न हो जायं, इसी डर से प्रतीप वहाँ बस रहा है या नहीं, उस ओर से उसने आँखों आड़े कान कर लिये।"

४४. वहां चारों ओर अस्थिपिंजर, राख, खोपड़ियां इत्यादि कापालिकों की प्रिय वस्तुएं पड़ी रहा करती थीं।

४५. इस क्षण तेरा हृदय रुधिर के प्रवाह से कांप रहा है।

४६. उस नदी से आवश्यक पानी भर कर साथ ले लेते और आगे बढ़ जाते।

४७. इस बीच में प्रत्येक सशक्त पुरुष, स्त्री और बड़े बालक का स्वधर्म निर्दिष्ट होना चाहिये।

४८. प्रतीप ने अपने हाथ का जलता हुआ लक्कड़ सूअर पर फेंक कर दे मारा।

४९. आगे आ रहे सूअरों की पंक्ति टूट गई और तुरन्त पीछे आ रहे सूअरों ने मुंह फेर लिया और प्राण लेकर भाग निकले।

५०. प्रतीप! मेरे साथ यदि कोई दूसरा होता है तो मन चाहा काम हो नहीं पाता है।

५१. भार्गव की आँखों की गहराई और भी गंभीर हो उठी ।

५२. जो हम अपनी शक्ति से न कर सके, वह यह छोकरा करेगा ।

५३. दूर पर झाड़ों के पीछे छुपे हुए आखेटक वर्तुलाकार होकर बाहर आये ।

५४. कानों के परदे फाड़ देने वाली चिल्लाहटों से वनवासी क्रंदन कर उठे ।

५५. मुँह-अँधेरे एक कोटर में से दो वनवासी नागों ने बाहर मुँह निकाल कर झांका ।

५६. अस्पष्ट स्वर में वह कुछ गुनगुना रहा था, जिसमें केवल मंत्रोच्चार का अभिनय था ।

५७. कमलावती ने पूछा "मैं क्या कुछ बदली दिखलाई पड़ती हूँ ?"

५८. नींद के मारे आँखें फूटी पड़ रही थीं ।

५९. बैजनाथ भाग कर किले के भीतर अपने घर पहुँचा और मन्ना को हड़बड़ा कर सब हाल सुनाया ।

६०. उसने काकाजू को कतर डाला और जंगल में भाग गया ।

———

साहित्य-निरूपण

४

(१) आख्यान—कहानी

जब हम किसी घटना का सिलसिलेवार बयान करते हैं, तब वह आख्यान बन जाता है। यह आख्यान अनेक प्रकार का हो सकता है; जैसेः आख्यान-उपन्यास, आख्यान-निबन्ध, आख्यान-पत्र, आख्यान-कहानी।

आख्याता का प्रमुख लक्ष्य घटना-विशेष को सिलसिलेवार श्रोता अथवा पाठक के सामने ला रखना है। अच्छे आख्यान को सुनकर श्रोता घटना को अपनी आँखों आगे देखने-सा लगता है।

आख्यान में घटनाओं के सिलसिले पर सबसे अधिक ध्यान देना अपेक्षित है। घटनाएँ जिस क्रम से घटती हैं वही क्रम आख्यान में अपनाना चाहिये। सफल आख्यान के लिये आवश्यक है कि आख्याता ने उन घटनाओं का सम्यक् निरीक्षण किया हो। ऐसा किये बिना आख्यान में जान नहीं आती और पाठक का मन उससे उचट जाता है। फलतः सफल आख्यान के लिये निरीक्षण की सबसे अधिक आवश्यकता है।

किंतु जब किसी काल्पनिक घटना का वर्णन करना हो तब सबसे अधिक आवश्यकता कल्पना या सूझ की है। आख्याता के मन में पात्र, स्थान, परिस्थिति और दृश्य साफ़-साफ़ अङ्कित

रहने चाहियें। कहना न होगा कि हम पात्र तथा घटनाओं आदि का उसी सीमा तक सफल उत्थान कर सकते हैं जिस सीमा तक कि हमने अपने जीवन में इनका निरीक्षण किया है। फलतः कल्पना का मूल सम्यक् निरीक्षण है। आख्यान की सफलता के लिये सहायक घटनाओं की उचित उठ-बैठ और उनका रोचक वर्णन अत्यावश्यक हैं। आख्यान लिखते हुए निम्न बातों पर ध्यान देना उपयोगी है:—

१. आख्यान को आरम्भ से ही रुचिर बनाओ। ध्यान रहे कि तुम्हारा शीर्षक व्यञ्जक हो जिससे पाठक की उत्सुकता बनी रहे। लम्बी भूमिका से पाठक उकता जाता है।

आख्यान में किसी स्थान पर पराकोटि होनी चाहिये। स्वभावतः हर आख्यान में एक विशेष घटना पराकोटि की होती है; इसी के परिपाक की तरफ सारे आख्यान को सरकना चाहिये।

३. घटना या कहानी के साथ सम्बन्ध रखने वाले तथ्यों का निर्देश हो चुकने पर आख्यान का उपसंहार होना चाहिये।

४. आख्यान में त्वरा होनी अपेक्षित है। अनपेक्षित बातों का विस्तार नहीं करना चाहिये और न शब्दों या मुहावरों की भरमार ही। आख्यान का हर वाक्य कथा को आगे बढ़ाने वाला होना चाहिये।

५. जहां तक संभव हो आख्यान की हर कड़ी को एक पृथक् संदर्भ मिलना चाहिये।

६. आख्यान की भाषा बोलचाल और घटनाओं के अनुरूप होनी चाहिये। उचित अवसर पर वार्तालाप लाना चाहिये; ऐसे शब्दों का उपयोग करो, जिन्हें पात्र आपस में सचमुच बोलते हों।

७. आख्यान के पात्र और स्थान स्पष्ट होने चाहियें, जिससे वे पाठक को यथार्थ प्रतीत हों। अपने वर्णन को अस्पष्ट या सामान्य मत बनाओ।

कहानी-लेखन

जब घटनाओं के सम्मिलन-विशेष से कोई आख्यान अधिक रुचिर बन जाय तब वह कहानी बन जाता है। आख्यानों की अन्य सब विधाओं की अपेक्षा कहानी में पात्रों और दृश्यों का स्पष्ट होना अधिक आवश्यक है। किसी एक घटना से कहानी नहीं बन जाती; कहानी में घटनाओं की एक शृङ्खला होती है और उन सब को किसी एक घटना में पराकोटि होती है।

दृश्यों और स्थानों के उचित वर्णन से कहानी में जान पड़ जाती है। किंतु इन स्थानों और दृश्यों का कहानी के पात्रों और घटनाओं के साथ सीधा सम्बन्ध होना चाहिये। मानलो एक कहानी का आरम्भ इस तरह है:—

"रात साफ थी। तारे दमक रहे थे और पूर्वीय क्षितिज पर चाँद अपना सिर उभार रहा था। मन्द मन्द समीर पत्तों की शान्ति को भङ्ग कर रहा था। चारों ओर पूर्ण शान्ति थी, मानों सारी प्रकृति सो रही हो।"

इसके बाद हमें आशा होगी कि कोई ऐसी घटना आवे जो इस वातावरण के अनुकूल हो या कोई ऐसी घटना घटे जो इसके ठीक विपरीत हो, किंतु यदि आख्याता इसके आगे यों लिखे:—

"तब सुशील पत्र लिख रहा था; वह थक गया, उकता गया और सो गया।"

और आगे ऐसी कोई घटना न आवे जो उक्त वातावरण के साथ ठीक बैठती हो, तब हम समझेंगे कि कहानी का आरम्भ उसके मुख्य भाग के अनुकूल नहीं बन पाया।

इसी प्रकार यदि हम अपनी कहानी के आरम्भ में किसी ऐसी कन्या का बयान करें जिसकी आँखों में नूर हो और जिसका स्वभाव चुलबुला हो और आगे कहें कि—

वह कन्या विद्यालय में गई, जहां उसका एक छात्र से साक्षात्कार हो गया, वह उससे प्रेम करने लगी और उसने उससे परिणय कर लिया और वे आनन्द से जीवन बिताने लगे।

तब हम पर यह आक्षेप होगा कि हमने कथा के आरम्भ पर ध्यान नहीं दिया और हमारी रचना के आरम्भ, मध्य और अन्त में सामञ्जस्य नहीं आया। क्योंकि एक चुलबुले स्वभाव वाली कन्या आसानी से किसी पर लट्टू नहीं हो जाया करती और उसका जीवन बहुधा अशान्ति में बीतता है। फलतः कथा लिखते समय औचित्य पर पूरा ध्यान देना चाहिये और हमें अपने पात्रों से वही काम कराने चाहियें जो उनके अनुरूप हों और उनसे वही बातें करानी चाहियें जो वे अपने जीवन में सचमुच करते हों।

जब हमारे अन्दर सामञ्जस्य की भावना खिल उठेगी तभी हम सफल कहानीलेखक बन सकेंगे और तभी हम किसी कहानी की रूपरेखा को रोचकता के साथ भर सकेंगे। उदाहरण के लिये:-

"किसी धनिक का पुत्र जायदाद का अपना भाग ले घर से निकल जाता है और दूर देश में पहुँच भोगविलास का जीवन बिताते हुए धन को गंवा देता है। मुसीबत में—देश में अकाल—कोई काम नहीं मिलता—खाने के लिये दमड़ी नहीं—काम की तलाश में मारा-मारा फिरता है—अन्त में किसी धनिक के यहां सूअर चुगाने का काम करने लगता है—नितान्त भूखा—सूअरों का भोजन खाने पर गिर जाता है—घर की याद—पिता की संपत्ति की याद—घर के नौकर-चाकर—घर लौट जाता है—वहां पिता द्वारा स्वागत।"

इस रूपरेखा को भरते समय हम पिता और पुत्र के चरित्र की झाँकी दे सकते हैं, उसके बाद पुत्र की उस प्रवृत्ति पर प्रकाश डाल सकते हैं जिसके कारण वह बाहर भागा और उसने अपना धन गंवाया। उसके बाद हम उस जीवन का वर्णन कर सकते हैं जो उसने बाहर जाकर बिताया। किंतु इसी पर अधिक जोर नहीं देना चाहिये; क्योंकि कहानी की जान पुत्र के घर लौटने में है न कि बाहर भागने में। उसके बाद उसकी निर्धन दशा, दारुण अकाल, मुसीबतें, असहायावस्था, मित्रों का आंखें चुराना, किसी भी काम को करने की अक्षमता और अयोग्यता आदि, उसके बाद उसका मारे-मारे भटकना, अन्त में काम मिला तो ऐसा मिला जो रद्दी था, ओछा था; ओछा काम, थोड़े दाम। उसके बाद उसके विचारोंमें मौलिक परिवर्तन, पश्चात्ताप, घर की याद, पिता का स्नेह, माता की गोद, भाइयों का प्यार, उसका घर लौटना, लौटते समय मन में डर कि पिता क्या कहेंगे, भाई क्या कहेंगे, किंतु भय के ऊपर स्नेह की बलवत्ता; घर लौटना, पिता का प्यार, माता का स्नेह, भाइयों का उपचार, मित्रों का अभिनन्दन आदि-आदि।

(२) भेड़िया आया

एक लड़का भेड़ चुराता है—उसे कहा गया है कि जब वह भेड़िये को देखे तब 'भेड़िया आया भेड़िया आया' चिल्ला पड़े—कई दिन तक वह भेड़ चुराता है—रोज की चुराई से तंग आ जाता है—एक दिन मजाक में चिल्ला पड़ता है 'भेड़िया, भेड़िया'—सारा गाँव सहायता के लिये पहुँच जाता है—भेड़िया नहीं मिलता—लड़का हँस देता है—गांव वाले नाराज—फिर वही मजाक—गाँव वाले अनसुनी कर देते हैं—कुछ आते हैं, दूसरे भी नहीं—फिर नाराजगी—फिर

चिल्लाना—एक दिन सचमुच भेड़िया आ जाता है—अब की बार चिल्लाने पर कोई नहीं आता—भेड़ें मारी जाती हैं।

पूरी कहानी

गांव वालों ने बकरियां चुगाने के लिये एक बालदी रखा।

उन्होंने कहा, "देखो, बकरियां खोईं न जांय, इन्हें इधर-उधर मत भागने देना। भेड़िये आ जाते हैं; उन से बचाना। बहुत दूर मत जाना। यदि तुम्हें भेड़िया दीखे तो शोर मचा देना। हम तुम्हारी मदद के लिये भागे आएंगे।"

अच्छा, "मैं सचेत रहूंगा" कहकर बालदी चल दिया। वह हर रोज सवेरे बकरियां पहाड़ की तलेटी में ले जाता और उनकी देख भाल करता। सांझ हो जाती तो उन्हें गांव लौटा लाता।

दिन बीते और वह इस एकान्त जीवन से उकता गया। जंगल में मन बहलाने का सामान न था और भेड़िया दीख नहीं पड़ता था। एक दिन उसने सोचा 'गांव वालों ने मुझे रद्दी काम दिया है। मैं इन से बदला लूंगा। इन्हें मज़ा चखाऊंगा।"

वह उठा और जोर से चिल्लाने लगा 'भेड़िया, भेड़िया'। गांव वालों ने उसकी आवाज सुनी और वे लाठी ले भागे आये।

लड़का पूरे जोर से चिल्लाया 'भेड़िया, भेड़िया'। वे और तेज भागे और अन्त में हांफते हांफते पास आ लगे।

वहां पहुंच वे बोले 'कहां है भेड़िया ? लड़का हंस पड़ा और, बोला, 'भेड़िया ! कैसा ! भेड़िया ! मैं तो मजाक करता था।'

गांव वाले तलमला उठे और उसे गालियां देते लौट गए।

कुछ दिन लड़का ठीक रहा। फिर उसे मजाक की सूझी और उसने सोचा कि देखूं क्या अब भी मेरे चिल्लाने पर गांव के आदमी दौड़े आवेंगे।

एक दिन उसने फिर शोर मचा दिया 'भेड़िया, भेड़िया'। गांव वालों ने उसकी आवाज सुनी। कुछ बोले 'मजाक कर रहा है'। दूसरे बोले, 'नहीं भाई, क्या पता; भेड़िया आ ही गया हो, बकरियां मारी जायगी। चलो, दौड़ो, बचाओ।'

इतना कह लोगों ने लाठियां पकड़ीं और वे दौड़ पड़े। वहां पहुँचे तो भेड़िया नदारद। लड़के से पूछा तो वह हंस पड़ा और बोला,"कहीं नहीं, मैं तो देख रहा था कि तुम मेरे चिल्लाने पर आते हो या नहीं।"

उसकी बात को सुन गांव वाले तमतमा उठे और उन्होंने उसे खूब ठोका। वे उसे रोता छोड़ गांव लौट आये।

एक दिन सचमुच ही भेड़िया आ पहुँचा। जब लड़के ने उसे देखा वह डर के मारे जोर-जोर से चिल्लाने लगा, 'भेड़िया, भेड़िया'। गांव वालों ने उसकी आवाज सुनी पर एक भी पास न आया। सब ने कहा 'मजाक करता है, मरने दो।'

भेड़िया आया और उसने बहुत सी बकरियां मार डालीं; लड़का मरते-मरते बचा।—

उत्कृष्ट कहानियों के उदाहरण :—

(१) गोधूलि

सोकोल लेटा हुआ दम तोड़ रहा था। बड़ी देर से वह इस प्रकार पड़ा हुआ था। वह बीमार पड़ा और लाश की तरह ठुकरा दिया गया। भले आदमी कहते थे कि इसकी हत्या करना ठीक न होगा; हाँ, इसकी खाल से बहुत अच्छा चमड़ा बनेगा। अच्छा तो, भले आदमियों ने उसे अकेले धीरे-धीरे और विस्मृत मरने दिया। ये ही भली आत्माएं कभी-कभी इसके ठोकर लगा देती थीं कि वह जान ले कि धीरे-धीरे मर रहा है। परन्तु उन्होंने उसकी ओर कुछ ध्यान नहीं दिया। कभी-कभी शिकारी कुत्ते, जिनके साथ वह शिकार में दौड़ता

था, उसे देख जाते। किंतु कुत्तों की आत्मा भद्दी होती है और स्वामी की प्रत्येक पुकार पर वे सोकोल को सिसकता छोड़ कर भाग खड़े होते थे।

इस प्रकार बूढ़ा घोड़ा एकांत में दुःख भोगने के लिये छोड़ दिया गया था। दिन उसका साथ देते—सुनहरे, गुलाबी दिन, अथवा भूरे कड़े दुखी दिन—वे उसकी आँखों में झांकते, जैसे डर कर; और चुपके विदा हो जाते। किन्तु सोकोल को केवल रातों का भय था, जून की छोटी डरावनी सन्नाटेदार, और दम घोटने वाली रातें। तभी उसे ज्ञात पड़ता था कि वह मर कर रहेगा। तब वह भय से पागल हो जाता था। वह लगाम चबाने लगता और दीवार पर खुर मारता। वह भागना चाहता, छुटकारा चाहता।

एक दिन जब सूरज डूब रहा था, वह कूद पड़ा। दीवार की दराजों से छन कर जो प्रकाश आता था उसे घूरने लगा और तब उसने एक स्वर से देर तक हिनहिनाना जारी रखा। डूबते हुए दिन की भारी नीरवता में से किसी ने उसकी आवाज का उत्तर नहीं दिया। अबाबीलें पास से उड़ गईं, घोंसलों में घुस कर चिल्लाने लगीं, अथवा सूरज की अन्तिम किरणों में भिनभिनाते हुए पतंगों में तीर-सी निकल गईं। दूर के चरागाहों से काम में लगे हुए सियों की खनकार आती थी और अन्न तथा सब्जी के खेतों से पत्तों का खड़कना, मक्खियों की भिनभिनाहट और धीमी-धीमी आवाजें सुनाई पड़ती थीं।

किन्तु सोकोल के चहुँ ओर गहरी, भयानक नीरवता थी, जो उसे कंपा देती थी। भय से वह जड़ हो गया, पागलों की तरह वह रस्सी तुड़ाने लगा। वह टूट गई और वह सहन में भाग आया।

धूप से वह चौंधिया गया। उसने सिर झुका लिया और हिले-डुले बिना खड़ा रह गया, जैसे सुन्न हो गया हो। धीरे-धीरे उसकी शिथिल शक्तियां लौट आईं। खेतों, वनों, चरागाहों की धुंधली स्मृतियां

उसके मस्तक में घिर गई । उसमें दौड़ जाने की उद्दाम इच्छा उत्पन्न हो गई । दूर पर जल पाने की इच्छा—फिर पहली तरह जीने की प्यास—सहन से बाहर जाने का मार्ग वह खोजने लगा । तीन तरफ मकान थे । उसकी खोज व्यर्थ गई । फिर-फिर उसने चेष्टा की, यद्यपि प्रत्येक पल उसे अनिर्वचनीय दुःख देता था; पुराने जख्मों से खून बहता था ।

अन्त में वह लकड़ी की बारी से जा लड़ा । वह सामने के खेत को, जिसमें कुत्ते धूप सेक रहे थे, देर तक देखता रहा । पार के मकान को, जिसकी खिड़कियां धूप के सुनहरे रंग में चमक रहीं थीं, वह देर तक देखता रहा । उसने बड़े अनुनय और बड़े ही करुण ढंग पर हिनहिनाना आरंभ किया ।

कोई आ जाता; प्यार का एक शब्द उससे कहता या दुलार से पीठ पर हाथ फेरता तो वह प्रसन्नता से लेट रहता और प्राण छोड़ देता । परन्तु चारों ओर एकांत था, सुनसान था, फीका-फीका था ।

बड़ी निराशा से उसने बाड़ा दबाना शुरू किया । सारे भार को पर तोल कर वह फाटक को ऐंठने लगा । वह खुल गया और उसने बाग में प्रवेश किया । हिनहिनाते हुए वह बरामदे तक पहुँच गया । किसी ने उसे सुना नहीं । बड़ी देर तक वह इस तरह खड़ा रहा । खिड़कियों के परदों की ओर ताकता रहा । सीढ़ियों पर चढ़ने की भी उसने चेष्टा की । तब उसने मकान की परिक्रमा की ।

सहसा वह जैसे सब कुछ भूल गया । केवल देखा—समुद्र जैसे निःसीम, दूर तक, अनन्त दूर तक, क्षितिज तक फैले खेत । इन कल्पनाओं के जादू से वह लड़खड़ाने और निःशक्त होकर आगे की ओर गिरने लगा ।

सोकोल काँप उठा । वेदना से उसकी आँखें चमक उठीं । उसके सांस भारी चलने लगे और जलते हुए नथनों को ठण्ड पहुंचाने के

लिए उसने घास पर नाक रगड़ डाली। बड़ी प्यास लग रही थी; परन्तु छुटकारे के विचार की उत्तेजना और गम्भीर भय से वह लड़-खड़ाता हुआ आगे-आगे बढ़ा। गेहूँ और अनाज के खेतों में लड़खड़ाते उसके पैर अधिक भारी हो गए। घास उसका पैर फांस लेती, पृथ्वी तक खींच ले जाती। झाड़ियाँ रास्ता रोकतीं, समस्त पृथ्वी उसे बड़ी चाह से अपनी ओर खींच रही थी।

बेचारे की गूंगी आत्मा भय के अन्धकार में भीतर-भीतर बैठती गई। पहचान वह कुछ न पाता था; परन्तु कुहरे में अन्धे की नाईं आगे की ओर लड़खड़ाता जाता था। सहसा एक तीतर उसके पैरों में से उड़कर निकल गया। वह सहम रहा, रुक रहा, हिल न सका। खेतों में उड़कर जो कौए जा रहे थे, वे उसे देखकर रुक गए; एक नाशपाती के पेड़ पर जा बैठे और वहां काँव-काँव करने लगे। वह घिसटता-घिसटता चरागाह तक आ लगा और दम तोड़कर पृथ्वी पर गिर पड़ा। टांगें उसने फैला दीं, आसमान को देखा और गहरी सांस छोड़ी। कौए पेड़ों से उतर आए और उसके आसपास पृथ्वी पर फुदकने लगे।

पतली घास में चोंच तेज करते हुए वे उसके आसपास आते गए। कुछ कांव-कांव करते हुए उसके ऊपर से उड़े और उसने उनकी भयावनी गोल-गोल आंखें और अधखुली चोंचें देखीं, परन्तु वह हिल न सका। उसने पृथ्वी पर पैर मारे और कल्पना की कि वह फिर उठ गया है और खेतों के पार दुलकी भाग रहा है। वह शिकार के पीछे भाग रहा है, शिकारी कुत्ते उसकी बगल में भौंक रहे हैं, आंधी की तरह उड़ रहे हैं।

उसकी वेदना इतनी बढ़ गई कि उसने चीख मारी और पैरों पर उठ खड़ा हुआ। कौए चिल्लाते हुए उड़ चले।

अब उसे कुछ दिखाई नहीं देता था, समझ कुछ न पड़ता था। आसपास की सभी चीजें हिल रही थीं। जान पड़ा कि वह गहरी कीचड़ में आधा धंस गया है। उसके बदन में शीत दौड़ गया और वह निर्जीव पड़ रहा।

सूरज डूब गया। गो-धूलि ने नीरव चादर से सब कुछ ढक दिया। दूर कोई कुत्ता भौंक रहा था।

लप्पा दौड़ता हुआ अपने मित्र के पास पहुँचा, परन्तु सोकोल ने उसे पहचाना नहीं। बूढ़े कुत्ते ने उसे चाटा, पंजे से पृथ्वी उखेड़ी और खेतों के पार चिल्लाता हुआ दौड़ गया। सहायता के लिये कोई न आया।

घास ने सोकोल की पूरी खुली आँखों में झांका; पेड़ उस तक पहुँचे, उन्होंने इसकी ओर शाखाएं बढ़ाईं। चिड़ियां चुप हो रहीं; हजारों जीव उसके शरीर पर रेंगने लगे। डर कर कौओं ने कांव-कांव की।

भय से लप्पा के रोंगटे खड़े हो गए; वह बेतरह चीखा चिल्लाया।

विलेडी स्लॉरेमां

(२) ऋषभदत्त

महाभट्ट ऋषभदत्त की गणना यौधेय राज्य के गण्य-मान्य महन्तों में की जाती थी। धन, मान, ऐश्वर्य, कीर्ति में से उसे किसी की कमी नहीं थी। परन्तु उसका जीवन सुखी नहीं था। उसका मन एक दुःसह चिन्ता की ज्वाला में जला करता था। वह एक क्रूर शासक के अत्याचारों से अपनी उत्पीड़ित जाति का उद्धार करना चाहता था।

यौधेय नरेश युद्धजित् एक अलौकिक वीर और परम प्रतापी राजा था। अपने बाहुबल से उसने निम्न श्रेणी के यौधेय राज्य को उत्तर भारत का सबसे प्रबल राज्य बना दिया था। सारी यौधेय जाति उसके असीम पराक्रम और प्रचण्ड प्रताप पर गर्व करती थी। परन्तु राजा के

अदम्य क्रोध, अत्यधिक दर्प और स्वेच्छाचार ने उसके सब गुणों पर पानी फेर दिया था। राजकुमारों की विलासप्रियता और आचार-हीनता ने राजघराने को और भी अधिक घृणा का पात्र बना दिया था। वे प्रजा पर मनमाना अत्याचार करते थे। किसी की मानमर्यादा उनके हाथों सुरक्षित नहीं थी। राज्य में चारों ओर हाहाकार मचा हुआ था। प्रजा का आर्तनाद सुन कर बहुतेरे यौद्धेय सामंतों का लहू खौलने लगता था; परन्तु वे सब बेबस थे। राजा ने अपनी सेना में बहुत से विजातीय योद्धा भर रखे थे,जो उसकी हर एक आज्ञा का पालन करने को तत्पर रहते थे। किसी का दम मारने की ताकत न थी। जिस किसी ने राजा के स्वेच्छाचार में रोड़ा अटकाने का साहस किया, उसी के भाग्य फूट गए।

जनता राजा का नाम सुन कर कांपती थी। यौद्धेयों की सुन्दर राजधानी में पहले जैसी चहल-पहल न रह गई थी। लोग अपने घरों बिना मतलब बाहर नहीं निकलते थे।

एक दिन भोर में ही बहुत से नागरिकों को कोलाहल करते हुए राजमहलों की ओर जाते देख महाभट्ट ऋषभदत्त का माथा ठनका। उसने समझ लिया कि कोई निरपराध व्यक्ति राजघराने की निरंकुशता का शिकार हुआ है। असली बात का पता लगाने के लिये वह भ. राजघराने की ओर चल पड़ा। राजभवनों के विस्तृत उद्यान में नागरिकों की भारी भीड़ लग रही थी। महाभट्ट ऋषभदत्त भीड़ को चीरता हुआ आगे बढ़ा। उस विशाल जनसमूह के बीच एक परम रूपवती युवती साक्षात् रणचण्डी का रूप धारण किये हुए हाथ में नंगी कटार लिये खड़ी थी। उसके केश खुले हुए थे। भौंहें तनी हुई थीं; आँखों से अंगार बरस रहे थे। ऋषभदत्त मन्त्रमुग्ध हो उस मूर्ति की ओर देखने लगा। रमणी का स्वर ऊंचा हुआ। रोष से रुंधे हुए कण्ठ से भीड़ को संबोधित कर उसने कहा—"युद्धपुर-निवासियो!

राजघराने के आये दिन नए अत्याचारों से आप लोग अनभिज्ञ नहीं हैं, तो भी आप सब सुख की नींद सो रहे हैं। पर यह कब तक चलेग ? क्या इस का कभी अन्त न होगा ? आज रात को युवराज ने छल से मेरा सतीत्व हरण किया है। मैं उसी समय इस कलुषित देह का अन्त करने जा रही थी। परन्तु एक विचार ने मेरा हाथ रोक लिया। क्या जाने मेरी कितनी बहनों का इसी तरह सर्वनाश हुआ है। वे अपनी करुण कथाएं अपने साथ ही इस संसार से ले गईं। अतएव क्यों न मैं मरने से पहले राजघराने के पापों का भंडाफोड़ कर जाऊं ? इसी विचार से मैंने आत्मघात नहीं किया। मैंने अपना कर्तव्य पूरा कर दिया है। अब मैं इस भ्रष्ट देह का अन्त करूंगी; परन्तु यदि मरने से पहले आप मुझे विश्वास दिला दें कि मेरी मृत्यु के बाद मेरे और मेरी अन्य निर्दोष बहनों के अपमान का बदला लिया जायगा तो मैं सुख की मौत मरूंगी।

रमणी उत्तर के लिये रुकी। परन्तु सब चुप थे। इस निस्तब्धता को देखकर उसका मुख-मण्डल रक्त हो उठा। उसने आवेश में आकर फिर कहा—"यौधेय लोगों का इतना पतन ! वीरप्रसवा पञ्चनद भूमि में ऐसे कायरों का निवास ?" यह कहते-कहते उस देवी ने हाथ की पैनी कटार को अपने हृदय में भोंक लिया। लहू का फुहारा छूट पड़ा। देखते-देखते उसकी लाश ठंडी हो गई, भीड़ में हाहाकार मच गया। उस सती साध्वी का एक-एक शब्द दर्शकों के कानों में गूंजने लगा। महाभट्ट ऋषभदत्त ने जनता की उद्विग्न मनोवृत्ति को भांपा और उपयुक्त अवसर जानकर वह रमणी की लाश के पास पहुंचा। लहू में लथपथ उस कटार को ऊपर उठाकर वह ऊंचे स्वर से कहने लगा—'युद्धपुर-निवासियो ! अब और नहीं सहा जाता। इस अत्याचार के राज्य का यहीं अन्त होगा। अत्याचारी से बढ़कर दोष चुपचाप अत्याचार सहने वालों का है। यह पाप राजघराने का

अन्तिम पाप होगा। इस देवी का रक्त यों ही न बह जायगा। सती सीता के निःश्वासों ने लंकापुरी को भस्म कर दिया था; देवी द्रौपदी के आँसुओं ने कौरवकुल को डुबोया था; तो क्या इस निर्दोष सती साध्वी का खून इस राजघराने का अन्त न करेगा? मैं इस कटार को हाथ में लेकर शपथ खाता हूँ कि मैं इस कुलवधू के अपमान का बदला लूंगा और इस राज घराने का अन्त कर पीड़ित यौधेय जाति का उद्धार करूंगा। बोलो, कौन आगे बढ़कर मेरी इस प्रतिज्ञा में सहयोग देगा?"

महाभट्ट के इन वाक्यों ने रुई में चिनगारी का काम किया। उत्तेजित जनता ने तलवारें खींच लीं; और बाढ़ आई हुई नदी की तरह वह निकटस्थ राजभवनों की ओर उमड़ पड़ी।

दैवयोग से राजा युद्धजित् उस समय किसी निकटवर्ती राजा से युद्ध कर रहा था। राजधानी में थोड़ी सेना थी। उसकी सहायता से राजकुमारों ने उपद्रव दबाने की कोशिश की, किन्तु उन्हें सफलता न हुई। आन की आन में सारा नगर राजघराने के विरुद्ध उठ खड़ा हुआ। इस उपद्रव में एक राजकुमार जान से मारा गया और युवराज ने नगर से भागकर अपनी जान बचाई।

राजघराने के अत्याचारों से उत्पीड़ित नगरनिवासियों को अपनी इस सफलता पर अपार हर्ष हुआ। नगर के मुखियाओं की एकमति से युद्ध-नगर में प्रजातन्त्र शासन की घोषणा की गई और नई शासन-प्रणाली का उचित रूप निर्धारित करने के लिये सारी यौधेय जाति के एक बृहत् सम्मेलन का आयोजन किया गया।

यौधेयों की नई शासनपद्धति में राजशासन की बागडोर जनता द्वारा निर्वाचित सभापति के हाथ में दी गई। राजकीय कामों में सभापति को सहायता देने के लिये यौधेय मुखियाओं की एक समिति बनाई

गई। महाभट्ट ऋषभदत्त यौधेय प्रजातन्त्र का पहला सभापति चुना गया।

महाभट्ट ऋषभदत्त भली प्रकार जानता था कि राजा युद्धजित् राज्य खोकर चुप बैठने वाला आदमी नहीं है। इसलिये उसने नगर की रक्षा का भली भाँति प्रबन्ध किया और वह राजा के आक्रमण की प्रतीक्षा करने लगा।

युद्धनगर में प्रजातन्त्र राज्य के स्थापित होने और अपने एक लड़के के विप्लव में मारे जाने का समाचार पाकर राजा युद्धजित् आग बबूला हो गया। युद्धपुरनिवासियों को शीघ्र ही यथोचित दण्ड देने के लिये उसने विपक्षी से सन्धि कर ली और यौधेय राजधानी की ओर प्रस्थान किया।

युद्धजित् नगर के चारों ओर डेरा डालकर जीत के उपाय सोचने लगा। नगर-निवासी अच्छी तरह जानते थे कि यदि राजा की जीत हो गई तो उन्हें कुत्तों की मौत मरना पड़ेगा; इसलिये वे ऋषभदत्त की अध्यक्षता में जी तोड़कर लड़ रहे थे। युद्धजित् के लाख सिर पटकने पर भी उसे किसी प्रकार की सफलता न हुई। किन्तु वह सहज ही घबराने वाला व्यक्ति न था। उसने अपने भेदिये नगर में भेजे, जो छिपे-छिपे राजा के बचे-खुचे अनुयायियों को इकट्ठा करने लगे।

महाभट्ट ऋषभदत्त भी सतर्क था। उसने अपने बहुत से भेदिये राजा की सेना में और नगर में नियुक्त कर दिये थे, जो उसे पल-पल की खबर पहुँचाते थे। एक दिन आधी रात को एक भेदिये ने उसे सूचना दी कि आज युवराज भेष बदलकर नगर में घुस आया है और किसी गहरे षड्यन्त्र की आयोजना में लगा हुआ है। चतुर महाभट्ट ऋषभदत्त ने उसी समय षड्यन्त्रकारियों के मुख्य अड्डों पर छापा मारा और एक-एक करके प्रजातन्त्र के सब विपक्षियों को पकड़कर बन्दीगृह में डाल दिया।

दूसरे दिन सबेरे ही सारे नगर में शोर मच गया कि रात में एक भीषण षड्यन्त्र का भेद खुला है, जिसमें प्रजातन्त्र के विश्वस्त सामन्त भी शामिल हैं। विस्मय, भय और क्रोध ने बारी-बारी से जनता पर अपना प्रभाव डाला।

न्यायालय के बाहर एक विस्तृत मैदान में षड्यन्त्रकारियों पर विचार होना निश्चित हुआ। प्रजातन्त्र के उन शत्रुओं का अन्त देखने के लिये वहां नगरनिवासियों की भारी भीड़ लग गई। जब हथकड़ियों से जकड़े हुए बन्दी वहाँ लाए गए तब दर्शकों के विस्मय का पारावार न रहा। बन्दियों के बीच में राष्ट्रपति का इकलौता लड़का लोमेश सिर झुकाए खड़ा था।

राष्ट्रपति ऋषभदत्त विचारासन पर बैठा। भीड़ में निस्तब्धता छा गई। सबके सब बन्दी उसके सामने लाए गए। विचार आरम्भ हुआ। बहुतों ने अपना दोष स्वीकार कर लिया। कुछ चुप थे। राष्ट्रपति फैसला सुनाने को उठे। लोगों की चलती सांस रुक गई।

राष्ट्रपति ने खड़े हो गम्भीर स्वर में कहा—"इन सब व्यक्तियों ने यौधेय प्रजातन्त्र के साथ विश्वासघात और द्रोह किया है; और यदि ये समय पर न पकड़ लिये गए होते तो प्रजातन्त्र शासन के उलटने में कोई संदेह न था। ऐसे जघन्य अपराध के लिये मृत्युदण्ड ही एक उपयुक्त दण्ड है; इसलिये मैं आज्ञा देता हूँ कि इन सबका अभी वध कर दिया जाय।"

भीड़ में निस्तब्धता छाई रही। कैदियों के संरक्षक ने आगे बढ़कर इस निस्तब्धता को तोड़ा। उसने कहा—

"लोमेश के लिये क्या आज्ञा है?"

"उसका सबसे पहले वध किया जाय।"

"परन्तु,..........

"परन्तु क्या।" राष्ट्रपति ने भौंहें तानकर कहा।

राष्ट्रपति के बिगड़े हुए तेवर देख उसे और कुछ कहने की हिम्मत न हुई।

सब कैदी जल्लाद के हवाले कर दिये गए।

राष्ट्रपति चुपचाप विचारासन से उतरा और उस दिन की लड़ाई के लिये सैनिकों को आदेश देने लगा।

इस अलौकिक त्याग से स्तम्भित नगरनिवासियों के मुंह से कोई बात न निकली। सब सिर झुकाए अपने-अपने काम पर जाने लगे।

सारे उपाय विफल जाते देखकर राजा युद्धजित को लड़ाई बन्द करनी पड़ी। उसकी बहुत सी-सेना काम आ चुकी थी। कुछ बचे-खुचे साथियों को लेकर वह अपने एक मित्र राजा के यहां चला गया और अपने राज्य को फिर प्राप्त करने के लिये उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करने लगा।

युद्धजित् पर विजय पाकर नगरनिवासियों के हर्ष की सीमा न रही। उसकी यादगार में उन्होंने एक बहुत बड़ा भव्य मंदिर तैयार कराया और उसमें बड़े समारोह से स्वतंत्रता देवी की मूर्ति स्थापित की। जन-साधारण में वह 'स्वतंत्रता देवी का मंदिर' इस नाम से प्रसिद्ध हुआ।

पूरे दो वर्ष की तैयारी के पश्चात् युद्धजित् ने युद्धपुर पर फिर चढ़ाई की। उसने अपनी असंख्य सेना से नगर को तब तक घेर रखने का निश्चय किया जब तक नगरनिवासी तंग आकर आत्म-समर्पण न कर दें। महीनों लड़ाई होती रही, किसी पक्ष की हारजीत का निर्णय न हो सका। पर ज्यों-ज्यों दिन बीतते जाते थे, त्यों-त्यों नगर-निवासियों का पक्ष निर्बल पड़ता जाता था। युद्धजित् ने रसद-पानी के रास्ते सभी बन्द कर दिये थे। इसके साथ ही वह अपने मित्र राजाओं की सहायता से अपनी सेना की वृद्धि भी करता जाता था।

दिन प्रतिदिन अपनी घटती हुई शक्ति को देखकर युद्धपुर-निवासी निराश हो गए। उन्हें युद्धजित् की असंख्य सेना से छुटकारा पाने की कोई आशा न रह गई; कहीं-कहीं आत्म-समर्पण करने तक की काना-फूसी होने लगी। और महाभट्ट के बहुत से साथी, जिन्होंने अन्त समय तक लड़ने की ठान ली थी, धीरे-धीरे कम होते जा रहे थे। इससे राष्ट्रपति चिंतित था।

महाभट्ट ऋषभदत्त को निश्चय हो गया कि यदि नगर का घेरा अधिक दिन तक चलता रहा तो लड़ाई से ऊबे हुए नगर-निवासी हथियार डाल देंगे। उसके सामने अब एक ही उपाय था कि वह नगर से बाहर निकल कर युद्ध में भाग्य-परीक्षा करे। हार हो या जीत, इसके सिवाय उसे दूसरा कोई उपाय नहीं दीखता था।

दूसरे दिन सवेरे युद्धजित् को पता लगा कि रात ही रात में ऋषभदत्त ने अपनी सारी सेना नगर के बाहर ला जमाई है। उसे यह आशा कभी न थी कि नगरनिवासी उसकी इतनी बड़ी सेना का खुले में सामना करने का साहस करेंगे। वह अपनी सेना को तैयार भी न कर पाया था कि ऋषभदत्त ने धावा बोल दिया।

दिन भर लड़ाई होती रही। दोनों ओर के सहस्रों योद्धा कट मरे। अन्त में यौधेयों के पैर उखड़ने लगे। उनके बहुत-से साथी काम आ चुके थे। जो बचे थे उनका हौसला टूट चला था। ऋषभदत्त ने स्थिति को भाँप लिया। उसने आगे बढ़ कर प्रजातंत्र का झंडा अपने हाथ में ले लिया और वह शत्रुसेना में घुस गया। उसके प्राणों के भूखे विपक्षी सिपाही उसे देख कर चारों ओर से उसकी ओर झपटे। अपने प्यारे राष्ट्रपति को इस संकट में देख कर यौधेय वीर अपने प्राणों का मोह छोड़ कर शत्रुसेना पर टूट पड़े।

नगर के परकोटे पर खड़े हुए सहस्रों नरनारी अपने भाग्य का निर्णय होता देख रहे थे। राष्ट्रपति के इस अलौकिक साहस को देख

कर उनकी रगों में भी खून ने जोर मारा। नगर के सारे द्वार खोल दिये गए। स्त्री-पुरुष, बच्चे-बूढ़े, सब—जिसके हाथ जो चीज आई लेकर बाहर निकल आए और विपक्षियों पर चढ़ दौड़े। युद्धजित् की सेना पर चारों ओर से मार पड़ने लगी। उसमें भगदड़ मच गई। युद्धजित् लड़ते लड़ते मारा गया। उसके मरने के बाद युवराज और बची हुई सेना ने भाग कर अपने प्राण बचाए।

विजयोन्मत्त यौधेय हर्ष से नाचने लगे। नगर-निवासियों के हर्ष का कोई ठिकाना न था। 'यौधेय प्रजातन्त्र की जय' और 'राष्ट्रपति की जय' के घोष से आकाश-पाताल एक हो रहा था। परन्तु उन्हें पता न था कि उनको यह जयलाभ कराने वाला प्रजातन्त्र का सच्चा हितैषी एक घड़ी का मेहमान है। जख्मों से चूर ऋषभदत्त शय्या पर लाद-कर नगर में लाया गया। आन की आन में उसकी शोचनीय अवस्था की खबर सारे नगर में फैल गई। आनंदोल्लसित नगर-निवासियों के खिले हुए चेहरे मलिन पड़ गए। वे सब अपने राष्ट्रपति को जी-जान से चाहते थे। सभी कहते थे, यह विजय उन्हें बहुत मंहगी पड़ी है।

मरणासन्न राष्ट्रपति को घेरे हुए यौधेय सरदार सिर झुकाए खड़े थे। सबके चेहरों पर विषाद की छाया थी। राष्ट्रपति के होठ हिलते हुए दिखाई दिये। उनका अन्तिम आदेश सुनने के लिये नतमस्तक सरदार और भी झुक गए। बहुत क्षीण स्वर से उस मरणासन्न वीर ने कहाः—

"मेरी मृत्यु का किसी को शोक न होना चाहिये। मुझे हर्ष है कि मेरा मनोरथ सफल हुआ है। परन्तु मेरी एक अभिलाषा है यदि······'सब सरदार बीच ही में बोल उठे। 'आप आज्ञा करें; प्राण रहते हम उसका पालन करेंगे'।······"तो तुम सब प्रतिज्ञा करो कि तुम सदा प्रजातन्त्रपद्धति की रक्षा करोगे। यौधेय सरदारों को अपने राष्ट्रपति के आशय के समझने में देरी न लगी। राजा युद्धजित्

मर चुका था, परन्तु युवराज अभी जीवित था। कहीं उसकी मृत्यु के बाद युवराज राजा न बन जाय उसे यही डर था।

सब यौद्धेय सरदारों ने प्रजातन्त्र शासन पद्धति की रक्षा करने का ही व्रत नहीं किया, अपितु उसी समय सर्वसम्मति से यह नियम बना दिया गया कि भविष्य में यौद्धेय जाति किसी रूप में भी राजतन्त्र पद्धति को स्वीकार न करेगी। यौद्धेय सरदारों के इस निर्णय से उस महान् आत्मा को बहुत प्रसन्नता हुई। उसमें बोलने की शक्ति न थी, परन्तु उसकी चमकती आँखें उसके हार्दिक सन्तोष को प्रकट कर रही थीं। यौद्धेय प्रजातन्त्र के जन्मदाता और अपनी जाति के सच्चे हितैषी ने अन्त समय तक जाति-हित-चिन्तन करते हुए संतोष के साथ प्राण त्याग दिये।

युद्धपुर-निवासियों ने अपने प्यारे सरदार की स्मृति जीवित रखने के लिये उसकी एक विशाल मूर्ति स्वतन्त्रता के मन्दिर के सामने स्थापित की। सैंकड़ों वर्ष के बाद भी जब कोई विदेशी किसी यौद्धेय से यह पूछता कि यह मूर्ति किसकी है तब वह बड़े गर्व से कहता—

"ये यौद्धेय प्रजातन्त्र के निर्माता राष्ट्रपति ऋषभदत्त हैं, इन्होंने देशहित के लिये अपने इकलौते बेटे का बलिदान किया और अपने प्राणों का भी उसी निमित्त विसर्जन किया।"

(३) विधाता

'चीनी के खिलौने, पैसे में दो; खेल लो, खिला लो, टूट जाय तो खा लो—पैसे में दो।'

सुरीली आवाज में यह कहता हुआ खिलौनेवाला एक छोटी-सी घण्टी बजा रहा था।

उसकी आवाज सुनते ही त्रिवेणी बोल उठी—

'माँ, पैसा दो, खिलौना लूंगी।'

'आज पैसा नहीं है बेटी।'

'एक पैसा; माँ हाथ जोड़ती हूँ।'

'नहीं है त्रिवेणी, दूसरे दिन ले लेना।'

'त्रिवेणी के मुख पर संतोष की झलक दिखाई दी।'

उसने खिड़की से पुकार कर कहा—'ऐ खिलौनेवाले, आज पैसा नहीं है; कल आना।'

'चुप रह, ऐसी बात भी कहीं कही जाती है?'—उसकी माँ ने भुनभुनाते हुए कहा।

तीन वर्ष की त्रिवेणी की समझ में न आया। किंतु उसकी माँ अपने जीवन के अभाव का पर्दा दुनिया के सामने खोलने से हिचकती थी। कारण, ऐसा सूखा विषय केवल लोगों के हँसने के लिये ही होता है।

और सचमुच—वह खिलौनेवाला मुस्कराता हुआ, अपनी घण्टी बजाकर, चला गया।

  

सन्ध्या हो चली थी।

लज्जावती रसोईघर में भोजन बना रही थी। दफ्तर से उसके पति के लौटने का समय था। आज घर में कोई तरकारी न थी, पैसे भी न थे। विजयकृष्ण को सूखा भोजन ही मिलेगा! लज्जा रोटी बना रही थी और त्रिवेणी अपने बाबू जी की प्रतीक्षा कर रही थी।

'माँ, बड़ी तेज भूख लगी है।'—कातर वाणी में त्रिवेणी ने कहा।

'बाबूजी को आने दो, उन्हीं के साथ भोजन करना, अब आते ही होंगे।'—लज्जा ने समझाते हुए कहा। कारण, एक ही थाली में त्रिवेणी और विजयकृष्ण साथ बैठ कर नित्य भोजन करते थे और उन दोनों के भोजन कर लेने पर उसी थाली में लज्जावती टुकड़ों पर जीने

वाले अपने पेट की ज्वाला को शान्त करती थी। जूठन ही उसका सोहाग था।

लज्जावती ने दीपक जलाया। त्रिवेणी ने आँख बन्द कर दीपक को नमस्कार किया; क्योंकि उसकी माता ने प्रतिदिन उसे ऐसा करना सिखाया था।

द्वार पर खटका हुआ। विजय दिन-भर का थका लौटा था। त्रिवेणी ने उछलते हुए कहा—'माँ, बाबूजी आ गये।'

विजय कमरे के कोने में अपना पुराना छाता रख कर खूँटी पर कुर्ता टोपी टाँग रहा था।

लज्जा ने पूछा—'महीने का वेतन आज मिला न?'

'नहीं मिला, कल बंटेगा। साहब ने बिल पास कर दिया है।' – मन्द स्वर में विजयकृष्ण ने कहा।

लज्जावती चिन्तित भाव से थाली परोसने लगी। भोजन करते समय, सूखी रोटी और दाल की कटोरी की ओर देखकर विजय न-जाने क्या सोच रहा था। सोचने दो; क्योंकि चिन्ता ही दरिद्रों का जीवन है और आशा ही उनका प्राण।

  

किसी तरह दिन कट रहे थे।

रात्रि का समय था! त्रिवेणी सो गई थी, लज्जा बैठी थी।

'देखता हूँ, इस नौकरी का भी कोई ठिकाना नहीं है।'—गम्भीर आकृति बनाते हुए विजयकृष्ण ने कहा।

'क्यों! क्या कोई नई बात है?'—लज्जावती ने अपनी झुकी आँखें ऊपर उठाकर, एक बार विजय की ओर देखते हुए, पूछा।

'बड़ा साहब मुझसे अप्रसन्न रहता है। मेरे प्रति उसकी आँखें सदैव चढ़ी रहती हैं।'

'किस लिये?'

'हो सकता है, मेरी निरीहता ही इसका कारण हो।'

लज्जा चुप थी।

'पन्द्रह रुपये मासिक पर दिन-भर परिश्रम करना पड़ता है। इतने पर भी······'

'ओह, बड़ा भयानक समय आ गया है!······' लज्जावती ने दुःख की एक लम्बी साँस खींचते हुए कहा।

'मकान वाले का दो मास का किराया बाकी है, इस बार वह नहीं मानेगा।'

'इस बार न मिलने से वह बड़ी आफत मचावेगा।'— लज्जा ने भयभीत होकर कहा।

'क्या करूं? जान देकर भी इस जीवन से छुटकारा होता···।'

'ऐसा सोचना व्यर्थ है। घबड़ाने से क्या लाभ? कभी दिन फिरेंगे ही।'

'कल रविवार है, छुट्टी का दिन है, एक जगह दूकान पर चिट्ठी-पत्री लिखने का काम है। पाँच रुपये महीना देने को कहता था। घण्टे-दो-घण्टे उसका काम करना पड़ेगा। मैं आठ माँगता था। अब मैं सोचता हूँ, कल उससे मिलकर स्वीकार कर लूं। दफ्तर से लौटने पर उसके यहाँ जाया करूंगा' कहते हुए विजयकृष्ण के हृदय में हल्की रेखा दौड़ पड़ी।

'जैसा ठीक समझो।'—कह कर लज्जा विचार में पड़ गई। वह जानती थी कि विजय का स्वास्थ्य परिश्रम करने से दिन-दिन खराब होता जा रहा है।

मगर रोटी का प्रश्न था!

  

दिन सप्ताह और महीने उलझते गये।

विजय प्रति-दिन दफ्तर चला जाता। वह सबसे बहुत कम

बोलता। उसकी इस नीरसता पर प्रायः दफ़्तर के कर्मचारी उस पर व्यङ्ग करते।

उसका पीला चेहरा और धँसी हुई आँखें लोगों को विनोद करने के लिये उकसाती थीं। लेकिन वह चुपचाप ऐसी बातों को अनसुनी कर जाता, कभी उत्तर न देता। इस पर भी लोग उससे असंतुष्ट रहते थे।

विजय के जीवन में आज एक अनहोनी घटना हुई। वह कुछ समझ न सका। मार्ग में उसके पैर आगे न बढ़ते। उसकी आँखों के सामने चिनगारियाँ झलमलाने लगीं। मुझसे क्या अपराध हुआ?… कई बार उसने मन ही में प्रश्न किये।

घर से दफ्तर जाते समय बिल्ली ने रास्ता काटा था। आगे चलकर खाली घड़ा दिखाई पड़ा था। इसलिये तो सब अपशकुनों ने मिलकर आज उसके भाग्य का फैसला कर दिया था!

साहब बड़ा अत्याचारी है। क्या गरीबों का पेट काटने के लिये ही पूँजीपतियों का जन्म हुआ है? नाश हो इनका...वह कौन-सा दिन होगा जब रुपयों का अस्तित्व संसार से मिट जायगा? भूखा मनुष्य दूसरे के सामने हाथ न फैला सकेगा? सोचते हुए विजय का माथा घूमने लगा। वह मार्ग में गिरते-गिरते सम्हल गया।

सहसा उसने आँख उठाकर देखा वह। अपने घर के सामने आ गया था; बड़ी कठिनाई से वह घर में घुसा। कमरे में आकर धम से बैठ गया।

लज्जावती ने घबराकर पूछा—'तबीयत कैसी है।'

'जो कहा था वही हुआ।'

'क्या हुआ?'

'नौकरी छूट गई। साहब ने जवाब दे दिया।'—कहते-कहते उसकी आँखें छलछला गईं।

विजय की दशा पर लज्जा को रोना आ गया। उसकी आँखें बरस पड़ीं। उन दोनों को रोते देखकर त्रिवेणी भी सिसकने लगी।

संध्या की मलिन छाया में तीनों बैठकर रोते थे।

इसके बाद शान्त होकर विजय ने अपनी आँखें पोंछीं; लज्जावती ने अपनी और त्रिवेणी की—।

क्योंकि संसार में एक और बड़ी शक्ति है, जो इन सब शासन करने वाली चीजों से कहीं ऊँची है—जिसके भरोसे बैठा हुआ मनुष्य आँख फाड़कर अपने भाग्य की रेखा को देखा करता है।

(विनोदशंकर व्यास)

(४) विद्रोही बालिका

महल की ऊँची छत पर खड़ी एक चौदहवर्षीय बालिका अपने सामने दूर-सुदूर फैले हुए विस्तृत मार्ग की ओर देख रही है। उसके सामने सर्प-गति सी तिरछी डगर है जो दूर जाकर भयानक जंगल में मिल जाती है। बालिका देखती है कि जङ्गल में कुछ हलचल-सी है और वह आँखें गड़ाकर कुछ और स्पष्ट देखने का प्रयत्न करती है। उसके घने और काले कुन्तल कभी-कभी आकर दृष्टि-पथ को रोक लेते हैं पर वह उन्हें हटाकर फिर देखने लगती है। उसके भोले और सुन्दर मुख पर एक क्षण के लिए विस्मय की रेखा खिंच जाती है, उसकी आँखों में दृढ़ता की आभा है।

उसने देखा कि जंगल में खेमे लग रहे हैं—और गोरे सैनिक अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित फिर रहे हैं। वह एक क्षण के लिए सोचती है—तो क्या गोरे इतने कायर और नैतिकत से गिरे हुए हैं कि वह इस महल को भी न रहने देंगे। उसने देख कि सामने से एक घुड़सवार घोड़े को तेजी से दौड़ाये चला आ रह है। उसका लक्ष्य है, महल। महल के नीचे आकर उसने घोड़े को रोक दिया और इधर-उधर देखने लगा।

बालिका ने ऊपर से पूछा—आप क्या चाहते हैं ?

अश्वारोही ने उत्तर दिया—मैं महल में आना चाहता हूँ ।

—क्यों और किस लिए ?

—हमारे कमाण्डर का संदेश है, जो मुझे महल में पहुँचाना है ।

—अच्छा ठहरिये !

विशाल फाटक की खिड़की खुली और उसमें होकर सवार अन्दर घुसा। पथ-प्रदर्शक उसे एक सजे-सजाये कमरे में ले गया—जहाँ बालिका उसकी प्रतीक्षा कर रही थी ।

आगन्तुक के प्रवेश करते ही बालिका ने निर्भीकता से मुस्कराते हुए कहा—मैं महल की संरक्षिका हूँ—आपको अभिवन्दन करना चाहिए था ।

आगन्तुक ने हैट उतार कर हंसते हुए बालिका को अभिवादन किया और वह उसकी इस निर्भीकता और भोलेपन से प्रभावित हो उठा ।

बालिका ने उसे बैठने का संकेत करते हुए कहा—कहिए, क्या आज्ञा है ।

आगन्तुक ने बिना किसी प्रकार की भूमिका बाँधे हुए कहा—मेरा नाम राबर्ट है, मैं कम्पनी की ओर से आया हूँ । हमारे कमाण्डर ने हुक्म दिया है कि इस महल के लोग कल सुबह तक अपने को हमारे हाथ में सौंप दें—नहीं तो महल को तोपों से उड़ा दिया जायगा ।

—यदि हम महल को खाली कर दें तब इसका क्या होगा? बालिका ने पूछा ।

—महल को तो उड़ा ही दिया जायगा । कमाण्डर का हुक्म है कि दुश्मनों की कोई भी निशानी बाकी न रहने दी जावेगी ।

—दुश्मनी आपकी नाना से हो सकती है—नाना के परिवार से हो सकती है, पर महल ने क्या बिगाड़ा है । जो अपनी दुश्मनी महलों

और किलों से भी रखते हैं और उन्हें नष्ट कर देना चाहते हैं वे इंसान हैं या आदमी के चोले में शैतान ?

—मुझे इससे कोई बहस नहीं है। जो हुक्म था वह मैंने आपको सुना दिया। कल दोपहर तक आपको आत्म-समर्पण कर देना होगा। अन्यथा सबको गिरफ्तार कर महल को तोपों से उड़ा दिया जायगा।

—तो आप अपने कमाण्डर से कह दें, कि नाना की पुत्री ने कहा है कि भारतवासियों के उन्नत मस्तक को किसी भी कीमत पर किसी भी शक्ति द्वारा नहीं झुकाया जा सकता। वे लड़ना जानते हैं—मरना जानते हैं, आत्म-समर्पण करना नहीं जानते। अपनी वस्तु का अपनी आँखों से विनाश होना देख सकते हैं पर डर कर उसे दूसरे के हाथों में सौंप नहीं सकते।

दासियों ने आकर आगन्तुक की मेज पर भोजन की थालियाँ लगा दीं। राबर्ट ने बालिका की ओर प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा।

बालिका ने कहा—हिन्दुस्तानी इंसान होते हैं, घर आये हुए शत्रु का भी वे सम्मान करना जानते हैं।

× × ×

दूसरे दिन मध्याह्न में—

गोरी और हिन्दुस्तानी सेनाओं ने महल को चारों ओर से घेर लिया है—बालिका ऊपर से देख रही है। महल के फाटक को तोड़ा जा रहा है और देखते-देखते फाटक भयानक आवाज के साथ गिर पड़ा। फौज की एक टुकड़ी तेजी से महल के अन्दर घुस गई और उसने महल का कोना-कोना खोजा—पर महल सूना था। कमाण्डर चकित था कि आखिर देखते-देखते इतने व्यक्ति कहाँ विलीन हो गये और बालिका तो एक रहस्य बन गई। राबर्ट की आँखें अब भी उस सूने महल में बालिका को खोजने का निष्फल प्रयत्न कर रही थीं।

हारकर राबर्ट ने कमाण्डर को फौजी सेल्यूट दिया और बोला—सर, जान पड़ता है कि महल में कोई सुरंग है, जिससे सब लोग बाहर निकल गए, पर सुरंग का कोई पता नहीं चलता।

कुछ क्षण पश्चात् तोपें आग उगलने लगीं और वह सुन्दर औ विशाल महल खण्डहर के रूप में परिणत हो गया।

  

विद्रोही नाना की लड़की मैना एक रहस्य बन गई।

आस-पास के लोगों में एक विचार घर करत गया और उसने विश्वास का रूप धारण कर लिया कि मैना की आत्मा प्रतिदिन महल के भग्नावशेषों के पास आकर घूमती है, और टीले पर बैठकर महल के भग्नावशेषों की ओर मुँह करके कुछ देर रोती है और फिर गायब हो जाती है। उड़ती-उड़ती यह खबर गोरों की छावनी में भी पहुँची।

राबर्ट अपने खेमे से बाहर टहलता हुआ चांदनी रात का आनन्द ले रहा था। उसके मस्तिष्क में विचारों के तूफान उठ रहे थे और वह इस समय अपने में ही कुछ सीमित हो गया था कि किसी के बूटों के कर्कश स्वर से उसकी तन्द्रा भंग हो गई। उसने देखा कि उसके सामने हिन्दुस्तानी फौज का सूबेदार रामसिंह खड़ा है।

राबर्ट ने पूछा—क्या बात है ?

रामसिंह ने सलाम करके उत्तर दिया—सर, मैं मैना को पकड़वा सकता हूँ।

—मैना, हम मैना नहीं चाहता, लड़ाई के मौके पर तोता-मैना का क्या काम !

—सर, आप समझे नहीं, मेरा मतलब विद्रोहियों के नेता नाना साहब की लड़की मैना से है।

मैना ! मैना !! नाना की लड़की मैना !!! पकड़ाओ तुमको बहुत इनाम मिलेगा।

राबर्ट अपने साथ २५ सैनिकों को लेकर चला। दूर से देखा, जले हुए पत्थरों के एक टीले पर श्वेत-परिधान में बैठी हुई एक बालिका महल की ओर देख रही है। राबर्ट ने दबे पाँव चलने का संकेत किया और सैनिकों को आदेश दिया कि चारों ओर से घेर लिया जाये।

मैना को चारों ओर से घेर लिया गया। राबर्ट भरी हुई पिस्तौल लेकर उसके सामने पहुँचा—देखा वही बालिका थी—महल की संरक्षिका।

सूबेदार रामसिंह ने कहा—सर, यही है विद्रोही नेता नाना की लड़की मैना।

मैना ने रामसिंह की ओर अपनी आँखों में असीम घृणा भर कर देखा।

—आप लोग आ गये, मैं तो प्रतीक्षा ही करती थी, पर यह नहीं जानती थी कि एक हिन्दुस्तानी के विश्वासघात से पकड़ी जाऊँगी।

—तो क्या आपको अपने पकड़े जाने पर कोई दुख नहीं है, आप जानती हैं, परिणाम क्या होगा? राबर्ट ने पूछा।

मैना के जलते हुए होठों को मुस्कराहट ने चूम लिया। वह बोली—जानती हूँ—मृत्यु से तो भयानक कोई दण्ड होता नहीं है, और उसे हम भारतीय एक खेल समझते हैं?

राबर्ट ने हंसते हुए कहा—अब आप हमारी कैदी हैं, आपको हमें अभिवादन करना चाहिए।

मैना ने तेज आवाज में कहा—पिंजड़े में बन्द शेर, शेर ही होता है, राबर्ट। भारतीयों के स्वाभिमान से तने हुए मस्तक को दुनिया की कोई शक्ति नहीं झुका सकती।

  

एक विशाल किला—जिसमें एक ओर गोरी और हिन्दुस्तानी फौज है, और दूसरी ओर विद्रोही कैदी। कैदियों के लिए टीन लगाकर

अलग बैरकें बना दी गई हैं। उन्हीं में से एक गन्दी, भयानक और संकरी कोठरी में मैना को तरह-तरह की यातनाएँ दी गईं। नाना, तात्याटोपी का पता पूछने के लिए। पर मैना तो प्रश्नवाचक चिह्न बन कर रह गई।

आज मैना के भाग्य का निर्णय था। यह उसका अन्तिम दिन था। मैना प्रसन्न थी, जाति के लिए, देश के लिए, धर्म के लिए बलिदान करके कर्तव्य का पालन करने जा रही थी।

किले के मैदान के बीचों-बीच आग जल रही थी—तेज और भयानक—जिसकी लपटें आकाश को चूम रही थीं। सैनिकों का विशेष रूप से प्रबन्ध था। मैना सैनिकों के पहरे में आग के समीप लाई गई। उसके ओठों पर विनय की मुस्कान थी और आँखों में चमक।

कमाण्डर ने पूछा—क्या अब भी तुम बताने के लिए तैयार नहीं हो?

—मैं एक शब्द भी बताने के लिये तैयार नहीं हूँ।

—इसका परिणाम।

—मौत से अधिक कुछ नहीं।

—अभी तुमने दुनिया में देखा क्या है।

मैना अट्टहास कर उठी। देखा—मैंने देखी है इन्सान की इन्सान से दूरी, तुम्हारे गोरे शरीर में काला हृदय, विश्वासघात, दगा, फरेब, मक्कारी। क्या और भी कुछ देखना शेष है। जिन्होंने तुम्हें आश्रय दिया—उनके खिलाफ षड्यंत्र रचते हो—यह है तुम्हारी ईमानदारी, ढोंगी-पाखण्डी।

मैना तुम छोड़ दी जाओगी—मैं केवल पता चाहता हूँ। बताने में तुम्हारा नुकसान ही क्या है?

मैना मूक-निस्तब्ध!

—तुम्हारा राज्य, तुम्हारे किले, तुम्हारी सब सम्पत्ति तुम्हें वापस कर दी जायगी।

मैना ने कड़कती हुई आवाज में उत्तर दिया—मैं इन सब पर थूकती हूँ। कर्तव्य के सामने यह सब नगण्य हैं।

—तो फिर सामने धधकती हुई आग है और तुम्हारा कोमल शरीर !

कमाण्डर ने क्रोध से दहाड़ते हुए कहा—इसे उठा कर आग में झोंक दो।

मैना की आँखों के डोरे लाल हो गये। वह गरज कर बोली—देखूं कौन मेरे शरीर को हाथ लगाने का साहस करता है।

और वह आग में कूद पड़ी।

मैना ने अग्नि, वायु और किले की दीवारों को सम्बोधित करते हुए कहा—किले की दीवारो, तुम साक्षी हो, जब हिन्दुस्तानी सैनिक विजय की दुन्दुभि बजाते हुए आएं—तो उनसे कहना मैना ने आजादी के झण्डे को झुकने नहीं दिया। लपलपाती हुई लपटो, तुम साक्षी देना कि मैना ने अपने कर्तव्य का पालन किया है, और तुम इतना विराट् रूप धारण करो कि जिसमें अनाचार, पाप, कुटिलता, विश्वासघात के आधार पर जमा हुआ यह विदेशी राज्य भस्म हो जाय। पवन देव, तुम मेरे प्यारे देश के कोने-कोने में प्रत्येक नर-नारी को संदेश पहुँचा दो कि आजादी का झण्डा किसी भी कीमत पर न झुकने पावे। पिताजी, और चाचा तात्या से कहना कि तुम्हारी मैना ने भारतीय परंपरा के गौरव को स्थिर रखा है ! और कमाण्डर ! अनीति पर स्थापित तुम्हारा यह राज्य बालू की भीति की तरह ढह जायगा।

मैना का संदेश देश के कण-कण में गूंज उठा।

(शैलेन्द्र कुमार)

कुछ कहानियों की रूपरेखा

(१) एक बूढ़ी स्त्री अन्धी हो जाती है—डाक्टर को बुलाती है—अच्छी हो जाय तो भारी फीस देने की प्रतिज्ञा करती है, किंतु अच्छी

न छोने पर कुछ न देने की धमकी देती है—डाक्टर रोज आता है—उसके फर्नीचर पर नजर डालता है—इलाज में देरी करता है—रोज एक एक करके चीजें ले जाता है—अन्त में आँखें ठीक कर देता है—फीस मांगता है—वह नहीं देती—कहती है पूरी तरह आँख ठीक नहीं हुई—कचहरी में जाता है—जज स्त्री से पूछता है फीस क्यों नहीं देती—वह कहती है आँख पूरी तरह ठीक नहीं हुई—मुझे अपना सारा फर्नीचर नहीं दीखता—जज उसके पक्ष में फैसला कर देता है। परिणाम।

(२) एक गीदड़ नदी के दूसरे किनारे खाने की चीज देखता है—पर पार कैसे जाय—ऊंट से कहता है परली पार ईख के खेत हैं, खूब खवाना—ऊंट गीदड़ को पार ले जाता है—गीदड़ अपना काम कर लेता है—बाद में शोर मचाता है—गांव के आदमी भागे आते और ऊंट की मरम्मत करते हैं—ऊंट नदी में घुस जाता है—गीदड़ उस पर सवार हो जाता है—ऊंट उससे धोखे का कारण पूछता है—गीदड़ कहता है भोजन के बाद उसे चिल्लाने की आदत है ऊंट कहता है "मुझे भी नदी में पड़कर लौटने की आदत है"—नदी में लोटता है—गीदड़ डूब जाता है। जैसे को तैसा।

(३) एक सिंह जंगल में जाती हुई एक स्त्री को मार देता है—खाते समय उसकी—चूड़ियों को रख लेता है—कभी काम आवेंगी—झील के किनारे छिप जाता है—एक यात्री आता है—वह स्नान करता है—शेर के मुंह में पानी भर आता है—वह उसे चूड़ियां दिखाकर कहता है यह ले लो मैं तो साधु बन गया हूँ, ये मेरे किस काम की हैं।—यात्री पास आ जाता है—शेर उसे मार कर खा जाता है।

(४) बगदाद का व्यापारी कारवान के साथ डेमास्कस के लिये चलता है—रास्ते में बीमार पड़ जाता है—रेशम का सामान एक ऊंट

हांकने वाले को यह कह कर दे देता है कि ठीक होने पर आ जाऊंगा, तुम आगे चलो—हांकने वाला पहुँच जाता है-प्रतीक्षा करके उसे मरा समझ रेशम बेच आनन्द लेता है—दाढ़ी मुंडा देता है, सिर के बाल रंग लेता है—आखिर व्यापारी भी पहुँच जाता है—हांकने वाले को ढूंढता है—बहुत दिन बाद उसे पहचान लेता है—वह मना करता है—जज के पास जाते हैं—जज फैसला देने में असमर्थ हैं—दोनों कचहरी से बाहर चल देते हैं—एकाएक जज "हांकने वाले" यह आवाज देता है—हांकने वाला बोल उठता है—जज उसे जेल में डाल देता है।

(५) कार्थेज का एक गुलाम—उसका स्वामी बेदर्द—गुलाम भाग जाता है—उस रात एक गुफा में सोता है—ऊंची हुँकार से डर कर उठ बैठता है—शेर आता है—गुलाम डर जाता है—शेर पास आकर घायल पंजा पसारता है—गुलाम पंजे में से कांटा निकाल देता है—शेर कृतज्ञ होता है—दोनों साथ रहते हैं—मित्र बन जाते हैं—गुलाम को घर की याद सताती है—लौट जाता है—पकड़ा जाता है—शेर के सामने डाल दिया जाता है—शेर उसे पहचान लेता है—मारता नहीं—दर्शक अचरज में डूब जाते हैं—गुलाम को स्वतन्त्र कर दिया जाता है। परिणाम।

(६) अली बगदाद का नाई है—हसन लकड़हारा है—हसन अली के लिये गधे पर लकड़ियां लाता है—अली गधे पर रखी सारी लकड़ियों का सौदा कर लेता है—हसन लकड़ी दे देता है—अली काठी भी मांगता है—हसन नहीं देता—झगड़ा होता है—हसन लौट जाता है—कुछ दिन बाद आता है और अली को अपनी तथा अपने दोस्त की हजामत के लिये कहता है—अली मान लेता है—हसन की हजामत कर देता है—फिर दोस्त को बुलाने के लिये कहता है—हसन गधे को ला खड़ा करता है—अली उसकी हजामत नहीं

बनाता—झगड़ा होता है—कचहरी में जाते हैं—खलीफा अली को गधे की हजामत बनाने पर बाध्य करता है—हंसी उड़ती है—अली को शर्मिन्दा किया जाता है।

नीचे लिखी रूपरेखाएं भरोः—

(१) तालाब में मेंढक टर्राते हैं—लड़के पत्थर फेंकते हैं—मेंढक गिड़गिड़ाते हैं—खेल—तुम्हारा खेल हमारी मौत।

(२) कुत्ता हड्डी चुराता है—नदी में तैरता है—पानी में परछाईं देखता है—दूसरे कुत्ते को देख झपटता है हड्डी मुंह से गिर जाती है।

(३) भेड़िया नदी पर पानी पीता है—नीचे बकरी को पानी पीती देखता है—कहता है तुमने पानी गन्दा कर दिया—उसे मार देता है।

(४) दो भिखारी—एक लंगड़ा दूसरा अन्धा—लंगड़े की सलाह अन्धा उसे ले चलेगा और वह रास्ता दिखावेगा—मान गए—परिणाम।

(५) शेर सोता है—चूहा आता है—शेर गुस्से में भर जाता है—चूहा कभी काम आने की प्रतिज्ञा करता है—शेर मान जाता है—कभी शेर फन्दे में बंध जाता है—चूहा फन्दे काट देता है—शेर कृतज्ञ होता है।

(६) सूरज और हवा में झगड़ा—कौन अधिक बलवान् है—हवा चलती है—यात्री कपड़ा ओढ़ लेता है—सूरज चमकता है—यात्री कपड़ा फेंक देता है—परिणाम।

कहानियों को पूरा करोः—

(१) कुछ लकड़हारे जंगल में पेड़ काट रहे थे और तख्ते चीर रहे थे। दुपहरी होने पर उन्होंने पेड़ काटना बन्द कर दिया और वे भोजन के लिये निकल पड़े। कुछ बन्दर, जो पास के पेड़ों पर बैठे थे, उनके

इस काम को देख कर अचंभे में थे। इसलिये जब लकड़हारे वहाँ से चले गए, बन्दर उतर आए और औजारों को जांचने लगे। सब से बड़ा बन्दर कूद कर लकड़ी के गट्ठे पर चढ़ बैठा और उसके बीच में फंसे फन्ने को जांचने लगा। उसने और बन्दरों को बुलाया और—

(२) एक दिन प्रातः एक कौआ पाकशाला के पास फुदक रहा था। उसे पनीर का टुकड़ा दीख गया। रसोइया बाहर गया हुआ था, इसलिये कौए ने पनीर का टुकड़ा उठा लिया और वह उड़कर पेड़ पर बैठ गया। एक लोमड़ी ने कौए की चोंच में अटके पनीर के टुकड़े को देख लिया और उसका मन उस पर चल गया। लोमड़ी पेड़ के नीचे जा बैठी और कौए को देखकर यों बोली:—

(३) एक गरीब अरब रेगिस्तान में यात्रा कर रहा था। उसे प्यास लगी, इतने में उसे खजूर के पेड़ों के पास एक सोता दीख पड़ा। वह खुशी में उछल पड़ा और बोला कैसा मधुर पानी है। उसने सोते से पानी पिया और एक बोतल में खलीफ़ा को भेंट चढ़ाने के लिये पानी भर लिया। सफर लंबा था; निदान वह खलीफ़ा की सेवा में पहुँच गया। जब वह खलीफा के सामने पहुँचा और उसने पानी की बोतल सामने रखी तब—

(४) मनोहर को उसके मां बाप ने हजारों बार पेड़ पर चढ़ने से रोका, किंतु वह न माना। जिद्दी था। एक दिन दोपहर के समय जब मां बाप सो रहे थे वह चुपके से खिसक गया और आम के पेड़ पर चढ़ गया। वह आधा ही चढ़ पाया था कि एक धमाका हुआ और वह—

५. नारायण ने हाल ही मोटर खरीदी थी, जिसका उसे बहुत शौक था। उसने मोटर चलाना सीख लिया; और जब उसने समझा कि वह मोटर चलाने में पक गया है, उसने अपने मित्र सुदर्शन को मोटर की सैर के लिए न्यौता। कुछ मील तक तो मोटर खूब चली। सुदर्शन अपने मित्र की होशियारी पर लट्टू था कि इतने में—

कहानी का आदि-अन्त बनाओ:—

"स्त्री कहने लगी—हमारे पति इस प्रान्त के गण्य भूस्वामी थे और वंश भी हम लोगों का बहुत ऊंचा था। जिस गांव का अभी आपने नाम लिया है, वही हमारे पति की प्रधान जमींदारी थी। कार्यवश कुन्दनलाल नामक महाजन से कुछ ऋण लिया गया। कुछ भी विचार न करने से उनका रुपया बढ़ गया, और जब ऐसी अवस्था आ पहुँची तब अनेक उपाय करके हमारे पति धन जुटाकर उनके पास ले गए तब वह धूर्त बोला—"क्या हर्ज है बाबू साहब! आप आठ रोज में आना, हम रुपया ले लेंगे और जो घाटा होगा, उसे छोड़ देंगे। आपका इलाका फिर जायगा, इस समय रहननामा भी नहीं मिल रहा है।" उनका विश्वास करके हमारे पति बैठ रहे और उस महाजन ने कुछ भी न पूछा। उनकी उदारता के कारण वह संचित धन भी कम होता गया और उधर उसने दावा करके हमारा इलाका —जिसे वह लेना चाहता था—बहुत थोड़े रुपये में नीलाम करा लिया। फिर हमारे पति के हृदय में उस इलाके के इस तरह निकल जाने से भारी व्यथा हुई। इसी से उनकी मृत्यु हो गई। इस अनहोनी परिस्थिति में पड़कर हम इस दूसरे गांव में आ पड़े हैं।"

२. चम्पा एक क्षत्रिय बालिका है। उसके पिता वणिक् मणिभद्र के यहां प्रहरी का काम करते थे। जलदस्यु बुद्धगुप्त ने जब आक्रमण किया, तब चंपा के पिता ने ही सात दस्युओं को, मार कर जलसमाधि ली। वणिक् मणिभद्र की पापवासना ने चम्पा को बंदिनी बनाया।

बुद्धगुप्त क्षत्रिय था; किंतु दुर्भाग्य से जलदस्यु बनकर जीवन बिता रहा था। बन्दी अवस्था में बन्दिनी चम्पा से उसकी भेंट हुई। दोनों कौशल से स्वतन्त्र हो गए।

चंपा के संसर्ग में आने पर बुद्धगुप्त का पत्थर-सा हृदय एक दिन सहसा बह निकला। माया, ममता, और स्नेह सेवा की देवी चम्पा

भी जलदस्यु को प्यार करने लगती है। साथ ही वह बुद्धगुप्त से घृणा भी करती है; क्योंकि वह समझती है कि वही उसके वीर पिता की मृत्यु का कारण है।

बुद्धगुप्त कहता है—मैं तुम्हारे पिता का घातक नहीं हूँ चम्पा! वह एक दस्यु के शस्त्र से मरे थे।

कम्पित स्वर में चम्पा बोली—यदि मैं इसका विश्वास कर सकती? बुद्धगुप्त! वह दिन कितना सुन्दर होता, वह क्षण कितना स्पृहणीय!

बुद्धगुप्त अनुभव करता है कि वह चम्पा के पास रहकर अपने हृदय पर अधिकार न रख सकेगा; इसलिए वह भारतवर्ष लौट जाता है।

३. मधूलिका के हृदय में प्रेम और राजभक्ति का द्वन्द्व चलता है। वह अरुणकुमार से प्रेम करती है, जो मगध का विद्रोही राजकुमार है और जिसके सामने लालसाओं तथा आकांक्षाओं का चित्र है। वह मधूलिका से कहता है—मैं तुम्हें कोशल के सिंहासन पर बिठाकर अपनी राजरानी बनाऊँगा। मधूलिका काँप उठती है। वह अरुणकुमार के षड्यन्त्र में संमिलित हो जाती है; लेकिन बाद में उसकी सुखकल्पना नष्ट हो जाती है। वह सोचती है, श्रीवस्ती दुर्ग एक विदेशी के अधिकार में चला जायगा। मगध कोशल का चिर-शत्रु! मगध की विजय! सिंहमित्र कोशल राज्य का रक्षक वीर। उसी की कन्या आज क्या करने जा रही है? मधूलिका, मधूलिका! उसे लगा, जैसे उसके पिता उस अन्धकार में पुकार रहे हैं। वह कोशलनरेश को सारा षड्यन्त्र बता देती है। उसका प्रेमी अरुणकुमार पकड़ा जाता है। उसे प्राणदण्ड की आज्ञा होती है। कोशलनरेश मधूलिका से कहते हैं "तुझे जो पुरस्कार माँगना हो माँग ले।" मधूलिका पगली सी कहती है—मुझे कुछ नहीं चाहिये। राजा कहते हैं—नहीं मैं तुझे अवश्य दूँगा। मांग ले। "तो मुझे प्राणदण्ड मिले।" कहती हुई वह बन्दी अरुण के पास जा खड़ी हुई।

(२) निबन्ध

किसी एक विषय पर विचारों को क्रमबद्ध कर सुन्दर, सुघटित और सुबोध भाषा में लिखी रचना को निबन्ध या प्रबन्ध कहते हैं।

निबन्ध के लिये निम्न लिखित बातें अपेक्षित हैं:—

(१) भावकी एकता— निबन्ध के लिये आवश्यक है कि वह किसी एक उद्देश्य को लेकर किसी एक विषय पर लिखा जाय। लेखक को चाहिये कि वह जिस विषय पर निबन्ध लिखना चाहता है उस पर पूरी तरह मनन कर ले और लिखते समय आदि से अन्त तक उससे न भटके। निबन्ध में कोई भी ऐसी बात नहीं आनी चाहिये जो उसकी परिपोषक न हो; किंतु हर विषय पर बहुत से तरीकों से और बहुत से दृष्टि-कोणों से विचार किया जा सकता है।

सरणि की एकता— निबन्ध के लिये आवश्यक है कि उसमें विचार की एक अखण्ड धारा हो और उसका एक निश्चित परिणाम हो। विषय की एकता के साथ शैली की भी एकता होनी चाहिये; इसलिये आवश्यक है कि निबन्धलेखक रचना करने से पहले भली प्रकार निबन्ध की रूपरेखा पर विचार कर ले और फिर विषय और सरणि की एकता पर ध्यान देता हुआ अपनी रचना को पूरा कर डाले।

संक्षेप— बहुत लम्बे निबन्ध नहीं रुचते। निबन्ध में विचारों और शब्दों का संक्षेप आवश्यक है। कोई भी ऐसी बात जिसके निकाल देने पर निबन्ध में कमी न आती हो, उसमें नहीं आनी चाहिये

और कोई भी ऐसे शब्द, जो विषय को आगे चलाने में सहायक न होते हों उसमें नहीं रखने चाहियें।

शैली— चिट्ठी-पत्री और कहानी लिखने में हमारी शैली आसान और घरेलू रहती है। छोटी और निजी बातें छोटे-छोटे शब्दों और वाक्यों में सजती हैं। पर निबन्ध में भाव गहन हो जाते हैं। शब्द व्यंजक और मुहावरेदार हो जाते हैं और शैली उभर जाती है। किंतु आवश्यकता से अधिक लच्छेदार शब्द या वाक्य निबन्ध की सुन्दरता को खो देते हैं; इसलिये आवश्यक है कि शब्द और वाक्य दोनों ही सरल, सीधे और स्वाभाविक हों। शिष्ट रचना का रहस्य भद्र विचारों में है। सीधा सोचोगे तो सीधा लिखोगे। वर्ण्य विषय पर तुम्हारे विचार परिपक्व हैं, तो भाषा निखरती चली जायगी और शैली लोचदार और मनोरम बनती जायगी।

व्यक्तित्व— निबन्ध के लिये आवश्यक है कि उसमें लेखक का व्यक्तित्व प्रतिफलित हो। उसमें उसकी राय और विचार व्यक्त हों और पाठक को भान हो कि अमुक व्यक्ति इस निबन्ध में बैठा हुआ है। यदि निबन्ध में लेखक का व्यक्तित्व न दीख पड़ा तो रचना लचर बन जायगी और उसका उद्देश्य जाता रहेगा।

संक्षेप में एक सफल निबन्ध के लिये आवश्यक है कि उसमें विचार और शैली एक हों, विचार और भाषा संक्षिप्त और कसी हुई हो; यह न बहुत बड़ा हो और न बहुत छोटा; विचार और भाषा सरल, सीधे और स्वाभाविक हों; इसमें लेखक का व्यक्तित्व प्रतिफलित हो और पता चले कि कोई एक व्यक्ति हमें किसी एक विषय पर अपने विचार सुना रहा है।

निबन्ध के भेद

निबन्ध तीन प्रकार के हैं—(१) वर्णनात्मक
(२) विवरणात्मक
(३) विवेचनात्मक

निबन्ध के ये प्रकार एक दूसरे से सर्वथा पृथक् नहीं हैं। वर्णनात्मक निबन्धों में विवरण और विवेचन भी रहता है। और विवरणात्मक निबन्धों में वर्णन और विवेचन का रहना स्वाभाविक है। आइये, संक्षेप में निबन्ध के इन प्रकारों पर विचार करें:—

(१) वर्णनात्मक निबन्ध—

जिन निबन्धों में पशु-पक्षियों, नगरों, नदियों, पर्वतों, प्राकृतिक दृश्यों, कारखानों और संस्था आदि का स्पष्ट और ब्यौरेवार वर्णन होता है वे वर्णनात्मक निबन्ध कहाते हैं।

(२) विवरणात्मक निबन्ध—

जिन लेखों में बीती हुई घटनाओं का कालक्रम से वर्णन होता है, वे विवरणात्मक निबन्ध कहाते हैं। ऐतिहासिक घटनाओं, जीवनियों, यात्रियों आदि से सम्बन्ध रखने वाले वर्णन इसी कोटि के अन्तर्गत हैं।

(३) विवेचनात्मक निबन्ध—

जिन लेखों में किसी विषय पर विचार किया जाता है, अर्थात् उसके कारणों, गुण-दोषों और हानि-लाभ आदि की विवेचना की जाती है, वे विवेचनात्मक निबन्ध कहाते हैं। आध्यात्मिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, राजनीतिक और साहित्यिक विषय इसी कोटि में आते हैं।

निबन्ध-लेखन के लिये अपेक्षित बातें

बहुधा निबन्ध लिखने में छात्रों को कठिनाई इसलिये होती है कि उनके पास अपेक्षित सामग्री नहीं होती। सामग्री न होने से वे किसी विषय पर तरतीब में नहीं लिख पाते। सामग्री की कमी इसलिये होती है कि वे पर्याप्त मात्रा में न तो पढ़ते ही हैं और न दुनिया को देख उससे सीखते ही हैं। सामग्री-संचय के लिए आवश्यक है कि छात्र पर्याप्त मात्रा में पढ़ें, संसार को ध्यान से देखें और विद्वानों से बातचीत कर उनसे ज्ञान प्राप्त करें।

१—सामान्य तैयारी

(अ) पढ़ना—

बेकन के अनुसार पढ़ने से आदमी में पूर्णता आती है और उसका मस्तिष्क निखरता और ज्ञान से भर जाता है। सुपठित व्यक्ति को विचारों या सामग्री की कमी नहीं खलती और अवसर पड़ने पर वह संबद्ध बातें चलती भाषा में लिख जाता है। फलतः छात्रों को इतिहास, यात्रा, जीवनी, साहित्य और साइंस आदि पर उत्कृष्ट पुस्तकें पढ़नी चाहियें और भद्र तथा सधे विचारों से अपने मन को परिष्कृत करना चाहिये। ऐसा करते रहने से उनमें पूर्णता आवेगी और वे किसी विषय पर भी पर्याप्त मात्रा में संबद्ध बातें लिख सकेंगे।

(आ) निरीक्षण—

किंतु ध्यान रहे मौलिक ज्ञान का स्रोत पुस्तकें नहीं हैं। चहुँ ओर के जगत् को ध्यान से देखकर भी हम बहुत कुछ सीख सकते हैं। इसलिये एक अच्छे छात्र को चाहिये कि वह संसार में आँख खोलकर चले और दुनिया को ध्यान

से देखो। जो देखो और सुनो उसमें से काम की बात निकाल लो और घर आकर उस पर लेख लिखो। अपनी आँखों से देखी चीजों के बारे में हमेशा दूसरों के विचारों को पढ़कर ही संतुष्ट न हो जाओ; उनके विषय में अपने विचार उभारो और उन्हें अपनी भाषा में प्रकट करो। इस प्रक्रिया को काम में लाओगे तो तुम्हारी लेखन-शैली में जल्दी ही सुधार होता जायगा और एक दिन तुम सफल लेखक बन जाओगे।

(ङ) बात-चीत

शिष्टजनों की बातचीत को ध्यान से सुनो और उसमें से काम की बात निकाल लो। यदि पुस्तकों के निर्जीव अक्षरों से ज्ञानार्जन हो सकता है, तो सजीव मनुष्यों की जीवित बात-चीत से विपुल मात्रा में ज्ञान की प्राप्ति हो सकती है। इसलिये परिष्कृत लोगों से मिलो, उनसे बातचीत करो और उनके पक्के विचारों को अपने मन में जगह दो।

सामग्री एकत्र कर लेने पर निबन्ध लिखने पर आइये।

विशेष तैयारी— निबन्ध रचना से पहले अपने विषय पर ध्यान से मनन करो।

विषय-निर्धारण— निबन्ध लिखने से पहले अपने विषय को भली प्रकार निर्धारित करो और उसकी रूपरेखा अपने मन में विशेष रूप से खींच लो। कुछ विषय सरल होते हैं और उन पर लिखना आसान होता है, किंतु कुछ विषय गहन होते हैं और उनके उत्थान में सूक्ष्म तथा दूरगामी दृष्टि से विचार करना पड़ता है। उदाहरण के लिये—"भारतीय समाज पर रेलयात्रा का प्रभाव" इस विषय को लीजिये। यहाँ मुख्य विषय रेल-

यात्रा नहीं है और न है भारत में रेलवे सिस्टम, इंजिन का आविष्कार या रेल का इतिहास। फिर भी कुछ छात्र इस विषय पर निबन्ध लिखते हुए अपना बहुत-सा समय इन्हीं या ऐसी ही दूसरी बातों के विवेचन में गंवा देते हैं। याद रहे-एक अच्छे निबन्ध के लिये अनपेक्षित बातों की चर्चा घातक है; उसमें वे ही बातें आनी चाहियें जिनका उसके साथ सीधा संबन्ध हो।

विषय-निर्धारण के बाद उस के विषय में सामग्री एकत्र करो।

(आ) संग्रह — कुछ विषय इतने सरल होते हैं कि उन पर अनायास ही बहुत कुछ लिखा जा सकता है, किंतु कुछ ऐसे होते हैं कि उन पर सुसंबद्ध लिखने के लिये सामग्री एकत्र करना आवश्यक होता है। यह काम पुस्तकों को पढ़ कर और अध्यापकों से सीख कर सुसाध्य है। इतनी तैयारी के बाद अपने विषय पर मनन करो और जो भी विचार मन में आते जावें उन्हें कागज पर लिखते चले जाओ।

(इ) छांट— सब विचारों को लिख लेने के बाद उनमें से उचित विचार छांट लो और उन्हें उचित तरतीब देकर अपने निबन्ध में रखते चले जाओ। विचारों को लेखबद्ध करते समय इनकी रूपरेखा, तरतीब, और उत्थान-पतन का पूरा-पूरा ध्यान रखो।

उदाहरण

हाथी

हाथी पर निबन्ध लिखते समय निम्न बातें मन में आती हैं :—

१. हाथी सब जानवरों में बड़ा है ;
२. शेर के शिकार में काम आता है ;
३. बदला लेने वाला है—दरजी और हाथी की कहानी ;

४. सूंड और बड़े बड़े कान ;
५. भारत और अफ्रीका में पाया जाता है ;
६. लकड़ी के शहतीर ढोता है ;
७. इसकी शक्ति महान् है ;
८. शादियों और जलूसों में निकाला जाता है ;
९. बावले हाथी ;
१०. इसके दांत—दांत के लिये इसका शिकार किया जाता है ;
११. हौदा और महावत ;
१२. अंधे आदमी और हाथी की कहानी ;
१३. पुराने काल में लड़ाई के काम आता था ;
१४. समझदारी ;
१५. पत्ते और घास खाता है ;
१६. भारी वजन ढो सकता है ;
१७. कैसे पकड़ा और सधाया जाता है ?

उक्त सामग्री निबन्ध के लिये पर्याप्त है; किंतु इसे तरतीब दिये बिना लिख डालने पर निबन्ध की शोभा जाती रहेगी। ध्यान से देखने पर उक्त संकेतों को इस तरतीब में लाया जा सकता है:—

१, ४, ७, १०, और १४ में हाथी का वर्णन है।

२, ६, ८, १०, १३ और १६ में हाथी का उपयोग बताया गया है।

७ और १४ में बताया गया है कि हाथी आदमी के लिये क्यों उपयोगी है।

१० और १७ का संबन्ध हाथी के शिकार से है।

५ और १५ में हाथी का निवासस्थान और उसका खाद्य बताया गया है।

हाथी के बारे में उक्त संकेतों में प्रायः सारी बातें आ जाती हैं। इसमें अन्धे आदमी की कहानी जरा लंबी है और उसे छोड़ा जा सकता है। शेष संकेतों को तरतीब में रखने पर निबन्ध की रूपरेखा ऐसी बन जायगी :—

१. वर्णन
२. निवास और खाद्य
३. किस तरह और क्यों पकड़ा जाता है
४. शक्ति, समझ, और उपयोग
५. उपयोग और हानियां

इस रूपरेखा के आधार पर निम्नलिखित निबन्ध तैयार हो जाता है :—

संसार के सारे स्थलचरों में हाथी सब से बड़ा और शक्तिशाली जानवर है। इसका आकार-प्रकार अजीब है। इसकी मोटी टांगें, विपुल पीठ, लटकते लंबे कान, छोटी पूंछ, नन्हीं-नन्हीं आँखें, लंबे सफेद दांत, और सब से अधिक इतनी लंबी सूंड देखते ही बनते हैं। सूंड, हाथी की अपनी चीज है और इससे वह मनचाहे काम करता है। इससे यह पानी पीता और उसे अपने ऊपर छिड़क लेता है। इससे यह घास, पत्ते और गन्ने आदि पकड़ता और उन्हें अपने मुंह में रखता है। सच तो यह है कि सूंड हाथी के लिये उतनी ही उपयोगी है जितनी कि हमारे लिये हमारी बाहें और हाथ। देखने में हाथी कुछ भद्दा, खुरदरा और विपुल लगता है; किंतु उसमें तेजी है और वह वेग के साथ चल सकता और घूम फिर सकता है।

हाथी भारत तथा अफ्रीका के जंगलों में पाया जाता है अफ्रीका का हाथी हमारे यहां के हाथी से बड़ा होता है; उसके कान और दांत भी अधिक लंबे होते हैं। हाथी जंगलों में झुंड बना कर रहते हैं। ये शर्मीले होते हैं और आदमी के पास नहीं आते। हाथी का विपुल आकार और उसकी अनुपम शक्ति इस बात का प्रमाण है कि वनस्पति

खाने में भी पर्याप्त बल है और मनुष्य को बलप्राप्ति के लिये मांस खाना अनिवार्य नहीं है।

हाथी बहुत समझदार जानवर है। पालतू हाथी अपनी शक्ति और समझ के कारण मनुष्य के लिये अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ है।

हाथी मनों बोझा ढो सकता है; यह भारी से भारी गाड़ी और महान् से महान् तोपें खींच सकता है। लकड़ी ढोने में यह कमाल करता है। पालतू हाथी झुक कर अपनी सूंड से लकड़ी के गट्ठों को उठा लेता, उन्हें निश्चित जगह पर पहुँचा देता और उचित स्थान पर उचित प्रकार से रख देता है।

हाथी शेर के शिकार में भी काम आता है। इसके ऊपर रखे हौदे पर बैठ शिकारी घने से घने जंगल में चला जाता है और वहाँ छिपा-छिपा सामने आए शेर पर गोली दाग देता है।

पुराने जमाने में हाथी युद्ध के काम भी आते थे और बड़े-बड़े राजाओं के पास हाथी-सवारों के अनेक दस्ते रहा करते थे। जब पोरस का सिकंदर के साथ युद्ध हुआ था तब उसने सिकंदर के खिलाफ़ हाथियों का प्रयोग किया था।

अफ्रीका में हाथियों का शिकार उनके दांतों के लिये किया जाता है, जो बड़े कीमती और सुन्दर होते हैं। हाथी की खाल इतनी मोटी होती है कि उसे गोली नहीं छेद सकती; इसलिये हाथियों के शिकार में एक प्रकार की तोप से काम लिया जाता है।

बहुत से हाथी जिंदा पकड़ कर साधे जाते हैं। किंतु हाथी का पकड़ना आसान नहीं है। यों तो हाथी आदमी से दूर भागता है, पर सताया जाने पर वह उन्मत्त हो उठता और कभी-कभी पकड़ने वाले को मार गिराता है। बहुधा हाथियों को धोखे से गढ़ों में डाल कर पकड़ते हैं। या तो हाथियों को खदेड़ कर इन गढ़ों में डाल देते हैं अथवा पालतू हाथी उन्हें धोखा देकर इन गढ़ों में ले आते हैं।

हाथी को मोल लेना तो आसान है पर उसे रखना कठिन है; क्योंकि हाथी खाता बहुत है, और अच्छा खाता है। इसलिये रईस लोग ही हाथी रख सकते हैं। कहावत है कि हाथी का खरीदना तो आसान है पर बांधना कठिन है और इसीलिये जब किसी आदमी का किसी एक काम पर बहुत खर्च हो रहा हो तब कहा जाता है कि उसने सफेद हाथी पाल रखा है।

रेल

अठारहवीं शताब्दी से लेकर आज तक अनेक आविष्कार हुए हैं; किंतु रेल का आविष्कार बड़े महत्त्व का है। इसने मनुष्य की जीवन-यात्रा में बड़ा परिवर्तन कर दिया है। कहाँ पहले समय के चरँकचूँ करने वाले छकड़े और कहाँ हवा से बातें करने वाली रेल! रेल के कारण मनुष्य अधिक सामाजिक, कार्यकुशल और व्यापार-निपुण बन गया है। इसने देश विदेश का अन्तर दूर कर प्रान्तीय सीमाओं को मिटा दिया है। मानव जाति के संबन्ध-तन्तु चारों ओर फैल गए हैं और मनुष्य अपने को सार्वदेशिक समझने लगा है।

रेल के आविष्कार का इतिहास बड़ा मनोरंजक है। एक साधारण-सी घटना ने संसार का रुख पलट दिया। इंगलैंड के एक कृषक परिवार में जेम्स वाट नाम का एक बालक रहता था। एक दिन वह खाली बैठा हुआ केटली (टोंटीदार बटलोई) की ओर देख रहा था। वाष्प-शक्ति से केटली के उठते और गिरते हुए ढक्कन ने उसके कौतूहल को बढ़ा दिया। वह उसके साथ और भी खेल करने लगा। ढक्कन को हाथ से दबाने पर उसका वाष्प-शक्ति का अनुभव और भी पुष्ट हो गया। उसने सोचा कि जब थोड़ी-सी भाप ढक्कन को उठा सकती है तो यदि उसका नियमित रूप से प्रयोग किया जावे तो उससे बहुत कुछ काम हो सकता है। वह सन् १७६९ में वाष्प शक्ति द्वारा

संचालित एक साधारण-सा यंत्र बनाने में सफल हुआ। किंतु वह उसे चलते हुए इंजन का रूप न दे सका। उसके पश्चात् जार्ज स्टीफेनसन ने सन् १८३० में 'राकेट' नामक एंजिन बनाया। इसने पहले-पहल मनुष्य और पशुबल के स्थान में वाष्प-बल का प्रयोग किया और अपने एंजिन की सहायता से "मानचेस्टर-लिवरपूल" नामक रेल चलाई। यह १२ मील प्रति घण्टा की चाल से चलती थी। इस रेलगाड़ी को देखने की सब को उत्सुकता थी। मनुष्य उस समय इसके संचालन को दैवी प्रेरणा का फल समझते थे। स्वयं महारानी विक्टोरिया ने इस नवीन आविष्कृत सवारी में यात्रा करके अपना अहोभाग्य समझा था।

उस समय की रेलगाड़ियाँ बड़े भोंडे ढंग की थीं। किराया भी अधिक था। धीरे-धीरे इनमें अधिक उन्नति होने लगी और अब तो ये ६० मील प्रति घंटे से भी अधिक तेज चलने लगी हैं। अब रेलों का प्रचार सब देशों में हो गया है। भारतवर्ष में लार्ड डलहौजी के शासन-काल में रेल की पहली सड़क बनाई गई। तब से समस्त देश में रेल की लाइनें जाल की तरह फैल गई हैं। बम्बई और कलकत्ता जैसे विशाल नगरों से लेकर छोटे-छोटे गाँवों तक में रेल की सड़कें बनी हुई हैं; जिससे समस्त देश एक सूत्र में बँध गया है। भारतवर्ष में ई. आई., बी. बी. एंड सी. आई., जी. आई. पी. तथा ई. पी. आदि अनेक रेलवे लाइनें हैं।

रेलगाड़ियाँ प्रायः दो प्रकार की होती हैं—एक माल ढोने की और दूसरी सवारी ले जाने वाली। सवारी ले जाने वाली गाड़ियों में गति के सम्बन्ध से डाकगाड़ी, एक्सप्रेस और सवारी गाड़ी आदि कई प्रकार हैं। डाकगाड़ी की चाल बहुत तेज होती है और वह बहुत कम स्टेशनों पर ठहरती है। एक्सप्रेस गाड़ी की चाल डाकगाड़ी से कुछ कम होती है, और डाकगाड़ी से कुछ अधिक स्टेशनों पर ठहरती है।

साधारण सवारी गाड़ी की चाल इन दोनों से कम होती है और वह छोटे बड़े प्रत्येक स्टेशन पर ठहरती है। सवारियों के आराम के हिसाब से रेल के डब्बों की चार श्रेणियाँ होती हैं—पहला दर्जा, दूसरा दर्जा, ड्योढ़ा दर्जा और तीसरा दर्जा। आराम के हिसाब से किराया भी अधिक खर्च करना पड़ता है। कई गाड़ियों में खाना खाने के डिब्बे भी साथ लगे रहते हैं, जिनमें बैठकर आराम से भोजन कर सकते हैं। यद्यपि तीसरे दर्जे के लोगों को बहुत कम सुविधाएँ रहती हैं तथापि उनके भी आराम का थोड़ा बहुत ख्याल रक्खा जाता है। अब तो यात्रियों की सुविधा के लिये मुख्य-मुख्य स्थानों से ऐसी गाड़ियाँ भी चलती हैं जो भारत के प्रधान तीर्थ-स्थानों की सैर करा देती हैं।

रेलगाड़ियों में प्रायः सभी प्रकार के डब्बे रहते हैं और एक ऐंजिन आगे लगा रहता है। यह ऐंजिन धुएँ के बादल उगलता हुआ वायु के वेग से सब को खींच ले जाता है। कभी-कभी जब डब्बे अधिक होते हैं, या चढ़ाई होती है तो पीछे भी एक ऐंजिन लगा दिया जाता है।

जिस स्थान पर रेल खड़ी होती है उसको स्टेशन कहते हैं। बड़े-बड़े स्टेशनों पर ऐंजिनों में कोयला और पानी भरा जाता है, और कहीं-कहीं पर ऐंजिनों, ड्राइवरों और गार्डों की बदली भी होती है। बड़े-बड़े स्टेशनों पर प्रायः सभी आवश्यक वस्तुएँ मिल जाती हैं। गाड़ी आने से पूर्व प्लेट-फार्म पर यात्रियों की खूब चहल-पहल रहती है। रेल की इन्तजारी का अपूर्व दृश्य होता है। कभी-कभी तो धूप में तपस्या भी करनी पड़ती है। पानी पिलाने वाले और खोंचे वालों की आवाज चारों ओर सुनाई पड़ती है। कहीं से 'दो पैसे गिलास लस्सी' की आवाज आती है तो कहीं आलू-छोले और पूड़ी वाले की पुकार सुनाई पड़ती है। रेल के आ जाने पर यात्रियों की दौड़-धूप मच जाती है और तीसरे दर्जे के डब्बों पर तो जीवन-संग्राम सा होने लगता है।

रेल की संस्था बड़े महत्व की है। रेल से हानियाँ कम हैं, और लाभ अधिक हैं। भारतवर्ष में रेल ने मानवी जीवन-संग्राम को एक विशेष उत्तेजना दे दी है। व्यापारिक प्रतियोगिता बढ़ गई है। दुर्भिक्ष के दिनों रेल से बड़ा उपकार होता है। दुर्भिक्ष-पीड़ित स्थानों में आदमियों के लिए अनाज और जानवरों के लिए चारा बड़ी सुविधा के साथ पहुँचाया जाता है। रेल ने भारतवासियों के प्रान्तीयभाव तथा छूआछूत के भावों को दूर करने में भी योग दिया है। बहुत से बेरोजगारों को भी रोजगार में लगाया है। जब कभी अभाग्यवश रेल में दुर्घटना हो जाती है—दो गाड़ियाँ टकरा जाती हैं, अथवा गाड़ी पटरी पर से उतर कर उलट जाती है—तब भयंकर जन-नाश होता है, और उस समय का दृश्य हृदय-विदारक होता है। रेल से सबसे बड़ी हानि जो भारत को हुई है, वह यह कि यहाँ का सारा धन विदेश चला गया है और भारत पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ दिया गया है।

हवाई जहाज

मनुष्य बहुत काल से उड़ने का स्वप्न देखता चला आया है। उसने जल और स्थल पर बहुत काल से विजय प्राप्त कर ली थी किंतु आकाश अभी उसके लिए एक प्रकार से दुर्गम ही रहा था। यद्यपि प्राचीन काल में हम वायुयानों का वर्णन पढ़ते हैं तथापि हमको यह नहीं मालूम कि वे किस प्रकार के होते थे। वे भौतिक बल से चलते थे अथवा योग-बल से। यदि प्राचीनकाल में यह कला थी भी, तो बहुत काल से लोग इसे भूल गए थे, पर इसमें कौशल प्राप्त करने के लिये उत्सुक थे। देवताओं के विमानों तथा कथाओं के उड़न-खटोलों का एवं परियों के इन्द्रलोक में आने जाने का वर्णन पढ़ और सुनकर मनुष्य का मन गगन-विहारी बनने के लिए

लालायित रहता था। कभी-कभी लोग पतंग को उड़ते हुए देखते थे। इसके अतिरिक्त हलकी हवा से भरे हुए गुब्बारे भी उड़ते दिखाई पड़ते थे। ये गुब्बारे क्रमशः बड़े बनने लगे और उनमें हाइड्रोजन आदि हल्की गैसों का प्रयोग होने लगा, जिससे वे अग्नि और धुएँ पर निर्भर न रहकर चिरकाल तक आकाश में स्थित रहने के योग्य बन गए। मनुष्य उनमें बैठकर उड़ने लगे; किंतु गुब्बारों में मनुष्य वायु के अधीन था, जिधर वायु ले गई उधर ही वे चले गए। फिर गुब्बारा सहज में उतरता भी न था, उससे कूदने के लिए छाते लगाने पड़ते थे। इन कठिनाइयों को देखकर वैज्ञानिक लोग इस बात के उद्योग में लग गये कि वे ऐसे यान बनावें जो यन्त्र-बल के कारण वायु के अधीन न रहें अर्थात् उनकी गति की दिशा और उनका क्रम इच्छानुकूल बदला जा सके। गति को नियन्त्रित करने के लिए एक विशेष प्रकार की संचालकशक्ति की आवश्यकता थी। रेल और जहाजों में वाष्प की संचालनशक्ति का प्रयोग होता था किन्तु वाष्प के एंजिन हलके नहीं बन सकते थे। वाष्पशक्ति से चलने वाली एक हवाई नाव बनाई भी गई थी, किन्तु वह सफल न हुई। इन्हीं दिनों में पैट्रोल-एंजनों का आविष्कार हुआ था। ये हलके होने के कारण सुगमता से हवाई यानों में रक्खे जा सकते थे। सन् १९०३ में एक उड़ाकू पहली बार पैट्रोल का एंजिन लगाकर थोड़ी देर उड़ा था।

शुरू-शुरू में हवाई जहाजों में गैस भी रहती थी और एंजिन भी रहता था, किन्तु उड़ने वाले वैज्ञानिकों ने चिड़ियों के उड़ने का विशेष अध्ययन कर इस बात का निश्चय किया कि उड़ने के लिए हवा से हलका होना आवश्यक नहीं है। चिड़ियाँ अपने परों को फटफटा कर हवा में वेग उत्पन्न कर लेती हैं और वह वेग उनको ऊपर उठाए रहता है। जहाजों और मोटर-नौकाओं के पंखे पानी में पीछे की ओर से वेग उत्पन्न कर जहाजों और नौकाओं को आगे बढ़ाते हैं। जो चीज जरा ऊपर को उठी

होती है वह पीछे से वेग मिलने पर ऊपर की ओर उठती चली जाती है। चिड़ियों का भी मुंह ऊपर को उठा रहता है। इसी सिद्धान्त के अनुसार हवाई जहाजों में केवल दो पहिए होते हैं और वे इस प्रकार रक्खे जाते हैं कि हवाई जहाज मोटर की शक्ति से थोड़ी दूर स्थल पर चल कर हवा में ऊपर उठने लगते हैं। अब तो हवाई जहाजों की गति का पूरी तौर से नियन्त्रण ही नहीं होने लगा है, वरन् वे नट की तरह आकाश में कलाबाजी भी खाने लगे हैं। इन पहियों के ऊपर हवाई जहाज का शरीर होता है जो कि मछली या लौकी के प्रकार का होता है। इसी लौकी या मछली के आकार वाले शरीर में दो पंख लगे होते हैं। जिन वायुयानों में परों की एक पंक्ति होती है वे मोनोप्लेन कहलाते हैं और जिनमें दो पंक्तियाँ होती हैं वे बाईप्लेन कहलाते हैं। अब ऐसे भी वायुयान बने हैं जो स्थल पर न चल कर जल के ऊपर से हवा में उठते हैं। भविष्य में हवाई बाईसिकलें बन जाने की भी संभावना है।

वायुयान के अनेक लाभ हैं। इसकी गति मोटर और रेल की गति से अधिक तेज होती है। वायुयान तीन चार सौ मील प्रति घंटे की गति से चल सकते हैं। इनके लिये रास्ते में कोई रुकावट नहीं होती। तीर की तरह सीधा जाने के कारण दूरी को और भी जल्दी तय कर लेते हैं। इनके लिये न सड़क बनवाने की आवश्यकता है और न पुल बँधवाने की। वायुयान के कारण महीनों का सफर हफ्तों का हो गया है। अब विलायत से एक हफ्ते में ही डाक आ जा सकती है और पार्सल वगैरह भी भेजे जा सकते हैं। वायुयान द्वारा समय की ही बचत नहीं हुई वरन् इसके द्वारा बद्री-केदारनाथ जी की यात्रा भी दुर्गम नहीं रही। वायुयान की उपयोगिता बढ़ाने के लिए बेतार के तार का भी साथ ही साथ आविष्कार हो गया था। बेतार के तार द्वारा उसे संसार का भी पता रह सकता है।

युद्ध के क्षेत्र में वायुयान का बहुत उपयोग होने लगा है अब इसके कारण दुर्ग 'दुर्ग' (जिन में मुश्किल से जाया जावे) नहीं रहे। खाई भी दुश्मन की अधिक रक्षा नहीं कर सकती। हवाई जहाजों द्वारा शत्रु की सारी सैनिक परिस्थिति का ही अवलोकन नहीं हो सकता वरन् उन पर ऊपर से बम-वर्षा भी की जा सकती है। यह विज्ञान का दुरुपयोग है। इस बम-वर्षा से बचना एक बड़ी भारी समस्या हो गई है। बम-वर्षा होने पर क्या करना चाहिए, इसका प्रदर्शन बड़े-बड़े शहरों में प्रायः किया जाता है। जिस प्रकार पहले जमाने में राष्ट्र अपनी जल-शक्ति पर गर्व करते थे उसी तरह अब वे वायु-शक्ति पर गर्व करने लगे हैं। इस महायुद्ध के प्रारंभ में जर्मनी ने हवाई शक्ति के कारण शुरू-शुरू में बड़ी विजय पाई और अन्त में इंग्लैंड, अमेरिका तथा रूस की हवाई शक्ति बढ़ जाने से ही जर्मनी की पराजय हुई।

वायुयान के सामाजिक उपयोग भी बहुत हैं। अब मित्रगण एक दूसरों के पास उड़ कर जा सकेंगे और उन्हें पंख न होने की शिकायत करने का अवसर न मिलेगा। डाक भी अब शीघ्रता से आने जाने लगी है। बिगड़ने या सड़ने वाली चीजें अब और भी अधिक शीघ्रता से स्थानान्तर में पहुँचाई जा सकेंगी। अगले कुछ वर्षों में हवाई जहाज का प्रयोग आम कार्यों में बहुत बढ़ जायगा। शायद हवाई जहाज सब से बड़ा यातायात का साधन हो जाय।

हिन्दू-तीर्थ

तीर्थ पवित्र स्थानों को कहते हैं। हिन्दू धर्म का उदय भारतवर्ष में ही हुआ है, इस कारण हिन्दुओं के तीर्थ हिन्दुस्तान में ही हैं। ये तीर्थ ऐसे ही स्थानों पर हैं जो प्राकृतिक शोभा तथा अवतारों और ऋषि मुनियों के निवास एवं गंगा-यमुना आदि पवित्र नदियों की स्थिति के कारण कुछ महत्त्व रखते हैं।

ये तीर्थ धार्मिक महत्त्व के अतिरिक्त जातीय महत्त्व भी रखते हैं। प्राचीन काल में जब रेल, मोटर आदि का इतना प्रचार न था और आना जाना आजकल का सा सुलभ न था तब लोग इन्हीं तीर्थों के कारण देश के एक छोर से दूसरे छोर तक जाते थे। इस प्रकार भिन्न-भिन्न प्रान्तों के लोग एक दूसरे के संपर्क में आते थे, जिससे किन्हीं अंशों में उनका प्रान्तीय भाव मिट जाता था। जो लोग भारतवर्ष को एक देश नहीं मानते, उन्हें हमारे तीर्थों में देश की एकता का प्रमाण मिल सकता है। भाषा और वेश की भिन्नता होते हुए भी लोग इन तीर्थों में एक ही भाव से प्रेरित होकर जाते हैं। हिन्दुओं के धर्म-तीर्थों में एक प्रकार से भारतवर्ष की चौहद्दी बँधी हुई है और उनके दर्शन कर लेने से पूरे देश की यात्रा हो जाती है। इन्हीं तीर्थों के बहाने मनुष्य उत्तराखंड में बद्रीनाथ और केदारनाथ के दर्शन कर पहाड़ी प्रदेशों की रमणीय प्राकृतिक शोभा का आनन्द अनुभव कर लेता है और उसे हिमालय का अर्थ (हिम=बर्फ+आलय=स्थान) पूरी तौर से पता लग जाता है। रामेश्वरम् में वह श्रीरामचन्द्र जी द्वारा स्थापित शिवमूर्ति के तथा कन्याकुमारी में कुमारी पार्वती जी की प्रतिमा के दर्शन कर दक्षिण देश का परिचय प्राप्त कर लेता है। पूर्व में जगन्नाथ पुरी जाकर बंगाल और उड़ीसा की सैर हो जाती है और द्वारकापुरी में जाकर यात्री पश्चिमी छोर को देख लेता है। अवन्तिका में मध्यभारत का ज्ञान प्राप्त कर लेता है।

हिन्दू धर्म में जो सात पुरी मानी गई हैं उनके नाम हैं:—मथुरा, माया (हरद्वार), काशी, काञ्ची, अवन्तिका, अयोध्या और द्वारिका। ये सभी स्थान बहुत प्राचीन हैं। इनका उल्लेख धर्म-ग्रन्थों के अतिरिक्त साहित्य-ग्रन्थों में भी है। महाकवि कालिदास ने मेघदूत में अवन्तिका और महाकाल का सुन्दर वर्णन किया है। मथुरा को कृष्ण ने अपनी लीला से पवित्र किया है। यह मधु राक्षस की बसाई हुई

कही जाती है। मथुरा शहर ही पवित्र नहीं माना जाता वरन् उसके आसपास के वृन्दावन, गोकुल, नन्दगाँव, बरसाना आदि ग्राम भी धार्मिक महत्त्व रखते हैं। इन सब ग्रामों का श्रीकृष्ण जी की लीलाओं से सम्बन्ध है।

मायापुरी में ही हरद्वार सम्मिलित था। यहीं से हर (महादेव) के स्थान कैलाश की पहाड़ी यात्रा प्रारंभ होती है, इसलिये इसे हरद्वार कहते हैं। यहीं पर गंगा जी के पवित्र दर्शन प्राप्त होते हैं। यहाँ से थोड़ी ही दूर चल कर पहाड़ी दृश्यों की छटा दिखाई देने लगती है।

काशी शिवपुरी मानी जाती है। कहा जाता है कि वह शिव जी के त्रिशूल पर बसी हुई है। प्रलय काल में भी उसका नाश नहीं होता और जो लोग यहाँ शरीर त्यागते हैं वे शिवलोक को प्राप्त होते हैं। विश्वनाथ जी काशी के प्रधान देवता हैं, इसी कारण वह विश्वनाथपुरी भी कहलाती है। काशी सदा से विद्या का केन्द्र रही है। उसको भारतवर्ष की ज्ञान-सम्बन्धी राजधानी कहना अनुपयुक्त न होगा। बुद्ध-देव ने भी अपने धर्म का प्रचार काशी से ही किया था। सारनाथ के भग्न-स्थान उसकी प्राचीनता का परिचय देते हैं। वहाँ पर एक नया बौद्ध-विहार भी बन गया है। हिन्दू विश्वविद्यालय भी यहीं है। ज्ञान का केन्द्र होने के कारण इस पुरी का नाम काशी (प्रकाश देने वाली) सार्थक हो रहा है। वरणा और असी के बीच में होने के कारण काशी को वाराणसी भी कहते हैं।

काञ्ची दक्षिण देश का तीर्थ है। उसके दो भाग हैं शिव-काञ्ची और विष्णु-काञ्ची। वे दोनों ही संप्रदायों के लिए पवित्र हैं।

अवन्तिका (उज्जयिनी या उज्जैन) नगरी बड़ी प्राचीन और पवित्र है। वीर विक्रमादित्य यहीं के राजा थे। यहाँ महाकाल का मन्दिर है। जिस प्रकार आजकल ज्योतिषी ग्रीनविच (Greenwich) को

प्रधानता देते हैं उसी प्रकार प्राचीन काल के ज्योतिषिगण अवन्तिका को मुख्यता देते थे। यहाँ पर सिप्रा नदी बहती है।

अयोध्या नगरी श्रीरामचन्द्र जी की जन्म-भूमि होने के कारण रामोपासकों के लिए बड़े महत्त्व का स्थान है।

द्वारिका कृष्ण जी के मथुरा के पश्चात् के चरित्र से सम्बन्ध रखती है। कृष्ण भगवान् इस नगरी में अपने पूर्ण ऐश्वर्य के साथ दिखाई पड़ते हैं। वृन्दावन-लीला में श्रीकृष्ण का माधुर्य प्रकट होता है और द्वारिका-लीला में उनके ऐश्वर्य और वैभव की झाँकी मिलती है।

इन पुरियों के अतिरिक्त और भी कई स्थान महत्त्व के हैं, जिनमें चित्रकूट, गया और प्रयाग प्रधान हैं। श्रीरामचन्द्र जी ने अपने वन-वास का जीवन चित्रकूट से ही आरम्भ किया था। यहीं पर भरत उनसे मिलने आए थे। इस स्थान की प्राकृतिक शोभा बड़ी मनोरम है। इस विचित्रता के कारण ही इस स्थान का नाम चित्रकूट पड़ा है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने चित्रकूट का बड़ा सुन्दर वर्णन किया है।

गया बिहार में है। यह बौद्धों का तीर्थ है। गया का तीर्थ पितृगण से सम्बन्ध रखता है। ऐसा माना जाता है कि गया तीर्थ की यात्रा करके पुत्र अपने पितरों को सद्गति देता है। गया के पवित्र स्थान पहाड़ियों पर हैं, उनमें प्रेतशिला, मोक्षशिला आदि अधिक प्रसिद्ध हैं।

प्रयाग तीर्थराज माना जाता है। यह जगह विशेष रूप से यज्ञों की थी। इसी से इसका नाम प्रयाग (प्र=प्रकर्षेण, याग=यज्ञ) पड़ा। यहाँ पर गंगा, यमुना और सरस्वती का संगम है। संगम में स्नान का बड़ा महत्त्व है और संगम की प्राकृतिक शोभा भी दर्शनीय है। तट पर पंडों के झंडे तथा तख्त और जल में नावों का दृश्य बड़ा सुन्दर प्रतीत होता है। कुंभ के समय यहाँ लाखों आदमियों की भीड़ एकत्र होती है। भरद्वाज मुनि का आश्रम, अक्षयवट आदि स्थान यहाँ बहुत पवित्र माने जाते हैं।

तीर्थों का राजनीतिक और सामाजिक महत्त्व होते हुए भी वे आजकल धार्मिक अत्याचार, पाखंड, व्यभिचार और गंदगी का केन्द्र बने हुए हैं। पंडा लोग वैसे सब तरह का आराम देते हैं, पथप्रदर्शक का भी काम करते हैं, किंतु दान-दक्षिणा के समय वे डाकुओं की वृत्ति धारण कर लेते हैं। अतएव तीर्थों का महत्त्व स्वीकार करते हुए भी यह कहना पड़ता है कि उनमें सुधार की आवश्यकता है, जिससे कि वे वास्तव में तीर्थ कहलाये जाने योग्य बन सकें। कविवर मैथिलीशरण गुप्त ने तीर्थों की वर्तमान दशा के सम्बन्ध में क्या ही अच्छा कहा है—

आरम्भ से ही जो हमारे मुख्य धर्म क्षेत्र हैं।
अब देखकर उनकी दशा, आँसू बहाते नेत्र हैं।
हा! गूढ़ तत्त्वों का पता ऋषि मुनि लगाते थे जहाँ,
सबसे अधिक अविचार का विस्तार है सम्प्रति वहाँ।
वे तीर्थ जो प्रभु की सभा में पूर्ण हो पूजित हुए,
राजर्षि-युत ब्रह्मर्षियों के कण्ठ से कूजित हुए।
अब तीर्थ-गुरु ही हैं अधिक उनको कलंकित कर रहे।

कुछ वर्णनात्मक निबन्धों की रूपरेखा

(१) फुटबाल-मैच

भूमिका

१. मैच से मनोरञ्जन। तुम्हारे कालेज की टीम प्रतियोगी कालेज की टीम के साथ भिड़ रही है।
२. टूर्नामेण्ट या दोस्ताना मैच।
३. फुटबाल-क्षेत्र और उसका वातावरण।
४. दर्शकों की भीड़, खिलाड़ियों की वर्दियां, सरगर्मी, आशा, निराशा।

५. मैच का आरम्भ; गोल कैसे किया जाता है ? खेल आधा समाप्त ।
६. खेल में तेजी और चातुरी; कुछ खिलाड़ी वाहवाह लूट रहे हैं; जीतने वाले पक्ष ने एक गोल और कर दिया; अभद्र खेल; एक खिलाड़ी क्षेत्र से बाहर निकाल दिया गया ।
७. खेल की समाप्ति; दर्शक क्षेत्र में घुस आए; विजेताओं को बधाई; हारे हुओं को थपकी ।

(२) गाँव का जीवन

भूमिका—आदर्श गांव का वर्णन ।

१. गांव के आदमियों का सबेरे से शाम तक का धन्धा । उनकी स्त्रियां क्या करती और कैसे समय गुजारती हैं ?
२. गांव का स्कूल, हस्पताल, चौपाल, पंचायत आदि ।
३. देश के शासन का मूल गांव और उसकी पंचायत है । प्राचीन काल में पंचायत प्रथा और उसके लाभ ।
४. गांव वालों का स्वास्थ्य, आचार-विचार आदि ।
५. गांव वालों की कमियां, समय की हानि, अज्ञान, अकर्मण्यता, अन्ध विश्वास आदि ।
६. गांव और नगर के जीवन ... ... ।

(३) कुतुब-मीनार

भूमिका—कब देखी ।

१. स्थान, इतिहास, वर्तमान दशा ।
२. भवन का वर्णन ।
३. उपसंहार—अतीत के विषय में विचार ।

(४) कलकत्ता

१. भूमिका—स्थान और इतिहास
२. हावड़ा की ओर से प्रवेश; मिलें और फैक्टरियां ।
३. हुगली, जहाज, बड़ी-बड़ी किश्तियां ।

४. विशाल भवन, सुन्दर सड़कें, विस्तृत पार्क ।
५. किला
६. शिक्षा का केन्द्र, सबसे बड़ा पुस्तकालय, अजायबघर;
७. नगर के दृश्य, संगमर्मर महल, जैन मन्दिर, विक्टोरिया मेमोरियल, चिड़ियाघर, झीलें, कालीघाट आदि ।
८. कलकत्ते के नेता ।
९. उपसंहार ।

(५) पहाड़-यात्रा

१. भूमिका—पर्वतों का आकर्षण और वर्णन ।
२. पर्वतों पर चढ़ना—एक मनोरंजन ।
३. पर्वत-यात्रा करने वाली सभा-सोसाइटियों का वर्णन ।
४. पर्वतों पर चढ़ने के लिये किये गए अनेक प्रयत्नों का और कनके करने वाले साहसिकों का वर्णन ।
५. पर्वत-यात्रा के लाभ और हानियां ।
६. उपसंहार

(६) प्रकृति-प्रेम

१. भूमिका—प्रकृति से प्रेम करना मनुष्य के लिये स्वाभाविक है। प्रकृति परमात्मा का शरीर या उसका परिधान है। मनुष्य परमात्मा की सुन्दरतम प्रतिकृति है। फलतः मनुष्य स्वभाव से प्रकृति को प्यार करता है ।
२. प्रकृति का सौंदर्य; महान् आकाश; विस्तृत पृथ्वी; ठंडा जल; विशाल नदियां; उन्नत पर्वत; अनन्त समुद्र; टिमटिमाते तारे; ज्वलंत सूर्य; आह्लादक चन्द्रमा ।
३. इनका मनुष्य पर हितकर प्रभाव; इनसे संतोष और आनन्द का लाभ; प्रतिभा को चेतना ।
४. उपसंहार—कवियों और मुनियों के उदाहरण ।

(७) पंजाब का फैशन

१. भूमिका—पंजाब के कालेजों में विद्यार्थियों के फैशन।
२. फैशन पर आवश्यकता से अधिक व्यय।
३. दूसरे प्रान्तों के साथ तुलना।
४. फैशन का आचार और अध्ययन पर प्रभाव।
५. फैशन के लाभ और हानि।
६. उपसंहार

(८) विश्वयुद्ध की दारुणता

१. भूमिका—युद्ध का अखाड़ा—
२. युद्ध के कारण—योरप की राजनीति; फ्रांस जर्मनी का बैर, इंगलंड की संतोलक नीति; पूंजीवाद और समाजवाद; जर्मनी और रूस, पश्चिमी योरप और रूस।
३. युद्ध का प्रसार—सारे विश्व में—संक्षिप्त इतिहास।
४. युद्ध का दारुण रूप—अगणित सैनिकों की मृत्यु; देशों का उजड़ना; सैकड़ों जहाजों का डूबना, हजारों हवाई जहाजों का गिरना; स्काच्ंड अर्थ पालिसी के रूप और परिणाम।
५. युद्ध का संसार पर प्रभाव। एशियाई देशों की मुक्ति; पूरब-पश्चिम का संतुलन।
६. उपसंहार।

(९) गाँव का मेला

१. भूमिका—बैसाखी का मेला; हनुमान जी का मेला, पीरजी का मेला। मेलों की रौनक, शोर-शरब्बा।
२. लोग सजधज कर निकलते हैं; वेश भूषा की विविधता।
३. लोगों के मजाक; पहलवानों की कुश्तियां; मेले में आए बहुत से खेल; जादूगरी, सपेरे आदि।

४. मेलों के लाभ—मनोरञ्जन; सामग्री-वितरण; आपस में स्पर्धा; स्नान का लाभ; परिचितों से मेल-मुलाकात।
५. मेलों में सुधार; इनके द्वारा जनता में जागृति और ज्ञान पैदा करना।
६. उपसंहार

विवरणात्मक निबन्ध

विवरणात्मक निबन्धों के निम्न भेद हैं:—

१. ऐतिहासिक निबन्ध—इस कोटि के निबन्धों में किसी ऐतिहासिक घटना के बारे में लिखा जाता है; जैसे—कोई प्रसिद्ध युद्ध, राज्याभिषेक, राजगद्दी से उतारा जाना, किसी का राज्य आदि। इन निबन्धों में ऐतिहासिक तथ्य पर ध्यान रखना आवश्यक है।

२. जीवन-निबन्ध—इनमें किसी महान् पुरुष की जीवनी का वर्णन रहता है। इस कोटि के निबन्धों में पुरुष-विशेष के जीवन की विशेष घटनाएं आनी चाहियें और खूबी के साथ उस जीवनी का उद्घाटन किया जाना चाहिये। जीवन का समालोचनात्मक निरीक्षण होना आवश्यक है।

३. आत्मकथा-निबन्ध—इस कोटि के निबन्धों में लेखक अपनी कथा अपने आप कहता है। इसमें सत्य पर ध्यान देना आवश्यक है और बिना झिझक के अपनी जीवनी को मनोरम प्रकार से (जैसी वह रही है) वैसी ही जनता के सामने रख देना अपेक्षित है।

४. यात्रा-निबन्ध—इनमें किसी यात्रा-विशेष का वर्णन रहता है और उसमें आने वाले साहसिक कृत्यों का संकेत रहता है।

आल्हा-ऊदल

पृथ्वीराज के समय में वर्तमान बुन्देलखण्ड में चन्देलों का राज था। चन्देल-राजा कन्नौजपति के अधीन और करद थे। उन दिनों वहां परमाल नाम का राजा राज्य करता था। राजा में शासन चलाने की योग्यता न थी, इसलिये आल्हा और ऊदल नाम के दो सरदार वहां का शासन चलाते थे। ये दोनों सरदार सगे भाई थे और इनके पिता ने राज्य की रक्षा के लिये बड़ी वीरता से लड़ कर अपने प्राण दिये थे। ऊदल बहुत कुशल राजनीतिज्ञ था और उसने राज्य का सारा कारबार संभाल रखा था। आल्हा राज्य की सेना का नायक और बड़ा भारी योद्धा था। उसने कई बार राज्य को मुसलमानों के आक्रमणों से बचाया था और युद्ध करके अनेक देशों को जीत अपने राज्य का विस्तार किया था।

एक बार पृथ्वीराज जब किसी युद्ध से लौट रहे थे, तब मार्ग में उनके कुछ घायल सैनिक रास्ता भूल गये और कुछ दिनों के बाद भटकते-भटकते चंदेलों की राजधानी महोबा नगर में पहुँचे। वहाँ उन लोगों ने राजा के एक बाग़ में डेरा डाला। किसी बात में बाग़ के मालियों और पृथ्वीराज के उन सैनिकों में कुछ झगड़ा हो गया। सैनिकों ने बिगड़ कर मालियों को मार डाला।

मालियों के मारे जाने पर उनकी स्त्रियाँ रोती हुई राजमहल में पहुँचीं और परमाल की रानी से पृथ्वीराज के सैनिकों के आने और मालियों के मारे जाने का सब वृत्तान्त कहके विलाप करने लगीं। रानी ने सब समाचार राजा से कहा और उसे उन सैनिकों को दण्ड देने के लिये उकसाया। तदनुसार राजा ने ऊदल को कुछ सेना लेकर जाने और उन सैनिकों को दण्ड देने की आज्ञा दी। ऊदल ने वहाँ पहुँचकर सबको घेर लिया और सैनिकों तथा उनके सरदार कनक चौहान को मार डाला। दिल्ली में पृथ्वीराज को जब अपने भूले हुए सैनिकों की इस दुर्दशा का

हाल मालूम हुआ, तब वह बहुत क्रुद्ध हुआ और उसने तुरन्त महोबा पर चढ़ाई करने की आज्ञा दी।

परमाल के दरबार में मेहला और भूपति नामक दो और सरदार रहते थे। आल्हा और ऊदल से उन दोनों को वैमनस्य था, अतएव वे लोग सदा राजा से आल्हा और ऊदल की निंदा किया करते थे। परमाल राजा अविचारी और कानों का कच्चा था। उसको मनुष्यों की पहचान न थी, इसलिए वह सदा औरों के कहने पर ही चलता था। लोगों के बहकाने से राजा का मन आल्हा और ऊदल की ओर से फिर गया।

परमाल ने क्रुद्ध होकर आल्हा और ऊदल को अपने राज्य से निकल जाने की आज्ञा दे दी। अस्तु, वे लोग अपनी माता तथा कुटुंबियों को साथ लेकर महोबा से कन्नौज पहुँचे और राजा जयचन्द के आश्रय में रहने लगे।

पृथ्वीराज बड़ी भारी सेना लेकर परमाल से युद्ध करने के लिये दिल्ली से रवाना हुआ। चंदेल के राज्य में पहुँचकर पृथ्वीराज के सैनिकों ने बहुत से गाँव और घर जला दिये और वहाँ के निवासियों तथा राजा के अनेक कर्मचारियों को मार डाला। जब इस उपद्रव का समाचार परमाल को मिला तब उसकी आँखें खुलीं। जब चारों ओर से प्रजा आ-आकर उसके दरबार में पुकार करने लगी, तब परमाल ने अपने कर्तव्य के निश्चय करने के लिये अपने सरदारों की एक सभा की। कुछ लोगों ने राजा को सम्मति दी—"आल्हा और ऊदल को महाराज ने रुष्ट होकर निर्वासित कर दिया है। यदि इस अवसर पर महाराज पुनः उन्हें सम्मान-पूर्वक अपने राज्य में बुला लें तो उनसे बहुत-कुछ सहायता मिल सकेगी और शत्रुओं से देश की रक्षा भी हो जायगी।"

सब सरदारों ने यह सम्मति मानली, लेकिन परमाल के पुत्र ब्रह्मजित को यह बात बहुत बुरी मालूम हुई। ब्रह्मजित ने यद्यपि कोई युद्ध न किया था, तथापि उसमें वीरता, साहस, आत्माभिमान आदि

क्षत्रियोचित सभी गुण वर्तमान थे। उसने भरी सभा में बिगड़कर कहा—"मालूम होता है कि अधिक वृद्ध हो जाने के कारण आप लोगों का पराक्रम जाता रहा है और इन्द्रियाँ शिथिल हो गई हैं। राजपूतों के घर में जन्म लेकर ऐसी बातें कहना बहुत ही लज्जाजनक है। आप लोगों ने आजतक वीरता के अनेक कार्य्य करके बहुत कीर्ति पाई है। आप ही लोग राज्य के स्तम्भ हैं। यदि आप लोग ऐसे अवसर पर आगे न बढ़ेंगे तो देश हाथ से जाता रहेगा और आप लोगों की अपकीर्ति होगी।"

कुछ लोगों की यह भी सम्मति थी कि परमाल अपनी सेना-सहित युद्ध के लिये महोबा में तैयार रहें और जयचन्द से सहायता माँगें। जब पृथ्वीराज सेना-सहित महोबा पहुँच जायँ तब इधर से महोबा की सेना और दूसरी ओर से जयचन्द की सेना उन पर आक्रमण करके परास्त कर दे। ब्रह्मजित् को यह बात भी पसन्द न आई। उसने कहा—"राजा का यह धर्म नहीं है कि वह स्वयं तो सहायता की अपेक्षा करता हुआ अपने क़िले में पड़ा रहे और शत्रु-दल को देश में प्रजा के सर्वनाश करने का अवकाश दे। क्षत्रिय के लिए इस प्रकार अपकीर्ति सहकर जीते रहने की अपेक्षा रणभूमि में मर जाना कहीं बढ़कर है। यदि आप लोगों में इतना साहस न हो तो चलिए, मैं आगे चलता हूँ।"

राजकुमार को इस प्रकार आवेश में देखकर सरदारों में कुछ उत्साह भर आया। पाँच सरदार आठ हजार सैनिकों को अपने साथ लेकर पृथ्वीराज से युद्ध करने के लिये महोबा से रवाना हुए। सिरसा नगर के पास दोनों दलों का सामना हुआ। राजा परमाल की ओर के बहुत-से आदमी मारे गये और पृथ्वीराज की जीत हुई।

जब इस पराजय का समाचार परमाल को मिला, तब उसे बहुत चिंता हुई। रानी ने कहा—"आपकी और राजकुमार की जो आशा

थी, उस पर तो पानी फिर गया। अब यही उचित है कि आप किसी न किसी प्रकार आल्हा और ऊदल को अपने राज्य में बुलवा लें और उन्हें साथ लेकर शत्रु से युद्ध करें। केवल इसी प्रकार आपकी तथा आपके राज्य की रक्षा संभव है। क़न्नौज से आल्हा और ऊदल को बुलवाने और फिर से युद्ध तैयारी करने के लिये आप पृथ्वीराज से दो मास का अवकाश लें।" राजा तथा उनके पार्श्ववर्त्तियों को यह बात बहुत पसन्द आई और उन्होंने ऐसा ही किया।

पृथ्वीराज ने दो मास का अवकाश दे दिया और भाट को पुरस्कार देने के सिवा उन्होंने परमाल के लिये एक बढ़िया तलवार और एक जड़ाऊ ढाल भी दी।

जब परमाल को युद्ध के लिये दो मास का अवकाश मिल गया तब आल्हा और ऊदल को लाने के लिये जगनीक भाट को कन्नौज भेजा। जगनीक ने उनको अनेक प्रकार से समझाया-बुझाया और कहा कि दुष्टों के बहकाने पर राजा ने आपके साथ ऐसा अनुचित व्यवहार किया था। पर अब स्वयं उन्हें पश्चात्ताप हो रहा है। अब आपका हठ करना और विशेषतः ऐसी दशा में जब कि राज्य की रक्षा आप ही पर निर्भर हो, ठीक नहीं है। आल्हा और ऊदल ने अपनी माता को भी परमाल का वह पत्र दिखलाया। राजा और जगनीक दोनों का इतना आग्रह देखकर माता ने उन लोगों को महोबा चलने की सम्मति दे दी।

जयचन्द ने उन्हें आज्ञा न दी, उलटे उन्हें महोबा जाने से मना किया और उनके रोकने के अनेक उपाय किये। उसने उनको अपने अपमान का स्मरण दिलाते हुए अपने दरबार में ही रखना चाहा। इस अवसर पर जगनीक भाट ने आगे बढ़कर जयचन्द को आशीर्वाद दिया। और उनकी प्रशंसा करते हुए वह पत्र आगे बढ़ाया, जो परमाल ने अलग जयचन्द के नाम भेजा था और जिसमें उसने जयचन्द से भी

इस युद्ध में सहायता देने की प्रार्थना की थी। उस पत्र को देखकर जयचन्द का विचार बदल गया और उसने बड़ी प्रसन्नता से उन दोनों भाइयों को महोबा जाने की आज्ञा दे दी।

आल्हा और ऊदल के आजाने पर परमाल ने राजमहल में एक बहुत बड़ा दरबार किया और सब सरदारों को एकत्र करके उनकी सम्मति से युद्ध आरम्भ करने की तिथि निश्चित कर पृथ्वीराज को उसकी सूचना दे दी। दोनों ओर से तैयारियाँ हो जाने के बाद रण-भूमि में सेनाएँ एकत्र हुईं। परमाल अपने राजकुमार ब्रह्मजित्, आल्हा, ऊदल अपनी पाँच सहस्र तथा जयचन्द की सहायतार्थ आई हुई सेना को लेकर रण-भूमि में पृथ्वीराज के सम्मुख जा खड़ा हुआ।

पृथ्वीराज की सेना भी सज-धजकर रण-भूमि में सामने आ खड़ी हुई। सबसे आगे सेना का वह भाग था, जिसका अधिकार कन्ह चौहान को दिया गया था। कन्ह तथा उसकी सेना को देखकर परमाल भयभीत हो गया। थोड़े-से सिपाहियों को साथ लेकर रण-स्थल से वह चुपचाप भाग गया और कालिंजर के किले में जा छिपा।

परमाल के कालिंजर भाग जाने पर आल्हा ने राजकुमार ब्रह्मजित् से कहा—"आप अभी सोलह वर्ष के बालक हैं। इसलिये आपको हम लोगों के साथ युद्ध-क्षेत्र में न रहना चाहिए। आपके लिए भी इस समय यही उचित है कि आप हम लोगों को मरने-मारने के लिए यहीं छोड़कर अपने पिता के पास कालिंजर के क़िले में चले जायँ।" लेकिन उस वीर क्षत्रिय ने यह बात न मानी और कहा—"इस प्रकार भागकर मैं नरक का अधिकारी नहीं होना चाहता। यदि क्षत्रिय रण-क्षेत्र में लड़कर अपने प्राण दे तो उसे इस लोक में कीर्ति तथा परलोक में स्वर्ग प्राप्त होता है।"

अपनी बात समाप्त करते हो ब्रह्मजित् एकदम शत्रुदल पर टूट पड़ा और मार्ग में आने वालों को काट-काटकर गिराने लगा।

तालनखाँ पठान के मरते ही कन्नौज से आई हुई फौज के पैर उखड़ चले और वह पीछे हटने लगी। अपनी सेना को भागते देख लाखन-सिंह आगे आया और सैनिकों को धैर्य और उत्साह दिलाकर फिर लड़ने लगा। बहुत देर तक वीरता से लड़ने के बाद लाखनसिंह भी मारा गया। संजमराय, चामुण्डराय और धीर पुंडीर ने महोबा और कन्नौज की सेनाओं के धुर्रे उड़ा दिये। चौहान की सेना प्रबल हो चली।

अपनी तथा कन्नौज से आई हुई सेना की यह दुर्दशा देखकर आल्हा और ऊदल, केसरी बाना पहनकर रण क्षेत्र में उतर आये। पहली ही बार में उन लोगों ने संजमराय को मृतप्राय करके ज़मीन पर गिरा दिया। थोड़ी देर बाद होश आने पर जब संजमराय ने उठना चाहा तो देवकर्ण ने उसके सिर पर गदा मारकर उसे फिर वहीं गिरा दिया। संजमराय फिर न उठ सका। इसके बाद ऊदल ने बड़ी वीरता से कन्ह पर वार करके उसे भी मूर्छित कर दिया। इतने में कैमास वहाँ पहुँच गया और ऊदल उसकी ओर बढ़ा। ऊदल की गदा से कैमास मूर्छित होकर गिर पड़ा।

जब कन्ह परिहार ने देखा कि ऊदल इन दोनों वीरों को समाप्त ही किया चाहता है, तब वह लपककर उसपर झपटा और अब कन्ह और ऊदल से युद्ध होने लगा। थोड़ी देर बाद कैमास ने भी उठकर कन्ह की सहायता की और ऊदल का सिर धड़ से उड़ा दिया। ऊदल बड़े आवेश में आकर युद्ध कर रहा था, इसलिये सिर कट जाने पर भी उसके नँगे धड़ ने कई वीरों को मार गिराया। चन्द ने ऊदल की इस वीरता की बहुत प्रशंसा की है।

जब ऊदल के मारे जाने का समाचार आल्हा को मालूम हुआ, तब वह बहुत क्रोध में आकर शत्रु-दल का बुरी तरह संहार करने लगा। लोग कहते थे कि आल्हा को एक सिद्ध से एक मोहनास्त्र मिला

था, जिसके कारण उसे परास्त करना बहुत असम्भव था। इसलिए पृथ्वीराज ने उसके मुक़ाबले के लिए देवी द्वारा रक्षित आततायी चौहान को भेजा था।

लड़ते-लड़ते अन्त में दोनों ही वीर बेतरह घायल होकर ज़मीन पर गिर पड़े। तब तक पृथ्वीराज ने ब्रह्मजित् को मार डाला। अपना सारा पराक्रम दिखला चुकने पर भी जब आल्हा ने विजय की कोई संभावना न देखी, तब अन्त में उसे वैराग्य हो गया और वह अपना धनुष-बाण तोड़ और फेंक अपने गुरु सिद्ध के उपदेशानुसार उनके साथ जंगल को ओर चला गया। अन्त में जीत पृथ्वीराज की हुई और चंदेले की सेना भाग गई।

चामुंडराय कालिंजर पर चढ़ाई करके वहाँ से परमाल को पकड़ लाया। उस क़िले में सात करोड़ रुपये थे, वह अपने साथ लें आया। अंत में पृथ्वीराज ने परमाल को गद्दी से उतार दिया और उसका देश अपने अधीन करके पज्जून कछवाहे को अपनी ओर से वहाँ का कर उगाने के लिए नियुक्त कर दिया।

(श्यामसुंदर दास)

महात्मा बुद्ध

गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है कि जब-जब धर्म में विकार आता है तब-तब धर्म की रक्षा के लिये मैं अवतार धारण करता हूँ। समय-समय पर धर्म में सुधार की आवश्यकता होती है। इसका कारण यह है कि लोग धर्म के असली तत्त्व को भूल जाते हैं और रूढ़ि-वाद धर्म का स्थान ले लेता है। ऐसे समय कोई महात्मा अवतार लेकर जनता की आँखें खोल देते हैं। ईसा मसीह से छः सौ वर्ष पूर्व हिन्दू धर्म की कुछ ऐसी ही स्थिति हो गई थी। वैदिक कर्म-कांड ने हिंसावाद का रूप धारण कर लिया था। धर्म के नाम पर हत्याकाण्ड रचा जाता था। अपनी इच्छाओं का बलिदान न कर लोग निरीह पशुओं

का बलिदान करते थे। यद्यपि हिन्दू धर्म में भी इस निर्दय पशुघात के विरुद्ध आवाज उठाई जा रही थी, तथापि उसका मूलोच्छेदन करने के लिए एक भारी क्रान्ति की आवश्यकता थी। उसी शान्तिमय क्रान्ति के लिए महात्मा बुद्ध का अवतार हुआ था।

महात्मा बुद्ध के पिता महाराज शुद्धोदन कपिलवस्तु के राजा थे। जन्म धारण करने के पश्चात् ही कुमार सिद्धार्थ (बुद्धदेव का बचपन का यही नाम था) अपनी माता रानी महामाया के प्रेम से वञ्चित हो गए और, उनके पालन-पोषण का भार उनकी विमाता प्रजावती पर पड़ा। महारानी प्रजावती ने उनका पालन-पोषण बड़े लाड़-प्यार और उत्तरदायित्व के साथ किया। राजा ने भी अपने इकलौते पुत्र के लिए खान-पान, वस्त्र-आभूषण और मनोविनोद की सामग्री उपस्थित करने में किसी बात की कमी न छोड़ी। पूत के पाँव पालने में ही पहचाने जाते हैं—कुमार सिद्धार्थ अपने बाल्य में ही सांसारिक विषयों से उदासीनता प्रकट करने लगे। उनके पिता ने उनको सांसारिक बन्धनों में बाँधकर उनकी वैराग्य-वृत्ति दूर करने के लिए रूप और गुण-सम्पन्न यशोधरा नाम की एक कुलवती कन्या से उनका पाणिग्रहण करा दिया। इसका भी उन पर अधिक प्रभाव न हुआ। रोग, बुढ़ापे और मृत्यु के दुःखमय दृश्यों ने उनके हृदय में सोती हुई वैराग्यवृत्ति को पुनः जागरित कर दिया। उन्होंने सोचा कि यदि शरीर की यही दशा होनी है तो राज्य के ऐश्वर्य-पूर्ण भोग-विलास से क्या लाभ? इस चिरव्यापी दुःख के शमन का उपाय खोजना चाहिए। कुछ दिन के अनन्तर यशोधरा पुत्रवती हुई, परंतु पुत्र और पत्नी का माया-बन्धन उनके विचारों को बदल न सका और एक रात उन्होंने दुःखों से मुक्ति पाने का मार्ग ढूँढ़ने के लिए घर से बाहर जाने का निश्चय कर लिया। संकल्प भङ्ग होने के भय से उन्होंने यशोधरा को नहीं जगाया। उसके ऊपर एक बार क्षणिक दृष्टिपात कर तथा

स्नेह-भरी दृष्टि से सुन्दर बालक को देखकर वहाँ से विदा हो वे चल दिये। घर से बाहर आकर उन्होंने अपना घोड़ा कसवाया और अपने साईस छन्दक को अपने साथ ले लिया। कपिलवस्तु से कुछ दूर जाकर उन्होंने अपने केशों को तलवार से काटा और अपने वस्त्राभूषण छन्दक को सौंपकर उसे कपिलवस्तु लौट जाने की आज्ञा दी। बेचारे छन्दक की अवस्था सुमन्त्र से भी खराब थी। सुमन्त्र दशरथ की आज्ञा से रामचन्द्र जी को वन में छोड़ने गया था, छन्दक तो राजा की आज्ञा के बिना ही गया था। अतः कुमार सिद्धार्थ को लौटाने के उसने बहुत यत्न किये किंतु वे सब निष्फल हुए।

घर से निकल कर बुद्धदेव ने पाँच ब्रह्मचारियों के साथ कुछ दिन तप किया। तप में उन्होंने अपने शरीर को बिलकुल घुला दिया। कुछ दिनों में उन पर तप की निस्सारता प्रकट हो गई और उन्होंने विचार द्वारा बोध प्राप्त करने का निश्चय किया। इस निश्चय से वे गया में एक पीपल के वृक्ष के नीचे समाधिस्थ होकर बैठ गए। मार (कामदेव) ने उनको बहुत से प्रलोभन दिये किंतु भगवान् बुद्ध ने उन सब पर विजय पाई। अन्त में चैत्र की पूर्णिमा की निर्मल ज्योत्स्ना में उनको ज्ञान की प्राप्ति हो गई। उन्होंने जान लिया कि दुःख का कारण हमारी वासनाएं हैं। वासनाओं का निरोध ही दुःख पर विजय पाना है।

बुद्धदेव ने दुःख का कारण तथा उसके शमन का उपाय निश्चय कर अपने ज्ञान से दूसरों को लाभ पहुँचाने का संकल्प किया। सबसे पहले उन्होंने बनारस में जाकर उपदेश दिया। बनारस में सारनाथ के भग्नावशेष उसी 'धर्म-चक्र-प्रवर्तन' के स्मारक हैं। भगवान् बुद्ध ने अत्यधिक भोग-विलास तथा कठिन तपश्चर्या दोनों को छोड़कर बीच का साधन-मार्ग अपनाने के लिये कहा। उनका कहना था कि जो लकड़ी जलकर राख हो गई है, उसके द्वारा आग जलाने की चेष्टा

अवश्य व्यर्थ होगी। इसलिए कठिन तपस्या (निवृत्ति) क्लेशदायक और व्यर्थ है। साथ ही इन्द्रियों के सुख-भोग की लालसा (प्रवृत्ति) मनुष्य को मनुष्यत्व-हीन और नीच बना देती है। जीव-मात्र पर दया तथा सदाचार उनके धर्म के मुख्य अङ्ग थे। अहिंसा और प्रेम से उन्होंने दिग्विजय करनी चाही। ऊँच-नीच के भेद-भाव तथा कर्म-काण्ड के आडम्बरों के विरुद्ध उन्होंने घोर आन्दोलन प्रारम्भ किया। मनुष्य मात्र में समता तथा मानसिक शुद्धि द्वारा निर्वाण-पद पाने का उन्होंने प्रचार किया। शीघ्र ही बुद्धदेव की ख्याति सारे भारत में फैल गई। उनके पुत्र राहुल तथा अन्य स्वजनों ने भी उनके धर्म और संघ की शरण ली तथा और भी बहुत से राजा महाराजाओं ने उनके धर्म को अपनाया।

बुद्धदेव बहुत काल तक अपने सिद्धान्तों का प्रचार करते रहे। और कई स्थानों में चातुर्मास व्यतीत कर उन्होंने नाना प्रकार के उपदेश दिए। ८० वर्ष की परिपक्व अवस्था में उन्होंने उदर-विकार से पीड़ित होकर महा-निर्वाण को प्राप्त किया। उनके शव का संस्कार राजाओं की भाँति धूम-धाम से किया गया। उनकी अस्थियों के आठ भाग करके आठों दिशाओं में उनके स्मारक-स्तूप बनवाये गए।

इस प्रकार इस महापुरुष का संपूर्ण जीवन सांसारिक दुःखों से मुक्त होने के उपाय ढूंढने, उनका पता लगाकर उन्हें सारे देश में फैलाने, लोगों को कल्याण का मार्ग दिखाने और विश्वभ्रातृ-भाव फैलाने में ही व्यतीत हुआ। यद्यपि उनका नश्वर शरीर तो मिट गया तथापि उनका यशःशरीर सदा के लिए अमर हो गया। आज हजारों वर्षों के बाद भी ५५ करोड़ मनुष्य 'बुद्धो में शरणम्' कहकर अपने को कृतार्थ मानते हैं। उनके मरने के पश्चात् बौद्ध धर्म सारे भारत में फैल गया। महाराज अशोक ने उसे लङ्का आदि देशों में पहुँचाया। क्रमशः तिब्बत, चीन, जापान आदि एशिया के कई देश बौद्ध धर्म

के झण्डे के नीचे आ गए। एक समय ऐसा था कि बौद्ध धर्म के अनुयायियों की संख्या सब धर्म वालों से अधिक थी। भारतवर्ष में तो शंकराचार्य आदि के प्रभाव से बौद्धधर्म उठ गया किंतु चीन, जापान, लङ्का, ब्रह्मा, तिब्बत आदि में अब भी बौद्ध-धर्म का राज्य अविकल चल रहा है। अब भारतवर्ष में भी बौद्धधर्म के पुनरुद्धार का यत्न हो रहा है।

संघमित्रा

संघमित्रा सुप्रसिद्ध दिग्विजयी सम्राट् अशोक महान् की पुत्री थी। अंग्रेज इतिहासकारों ने संघमित्रा को अशोक की बहिन बताया है; परंतु यह उनकी भूल है।

मौर्य सम्राट् अशोक का स्वभाव पहले बहुत क्रूर था। वह स्वार्थी और धर्महीन जीवन व्यतीत करता था। इसी क्रूरता के कारण वह चण्डाशोक, अर्थात् यमदूत के नाम से प्रसिद्ध था। राज्याधिरोहण के बाद उसने कलिङ्ग देश पर चढ़ाई की। इस युद्ध में वह विजयी तो हुआ, किंतु युद्ध में अपार नरसंहार से उसका कठोर हृदय भी पिघल गया और उसके हृदय में करुणा का बीज उगा। पूर्वकृत पुण्यकर्मों का जब उदय होता है, तब पापी के हृदय से भी पाप-वासना नष्ट हो जाती है और उसके जीवन में पुण्य का प्रभात उदित होता है। अशोक की भी यही दशा हुई; उसके हृदय में वैराग्य उत्पन्न हुआ, उसकी दूसरों का राज्य जीतने की इच्छा नष्ट हो गई। ऐसे समय में एक शक्तिशाली बौद्ध भिक्षुक वहाँ आया। अशोक के जीवन पर उसने अधिकार कर लिया। उसके मन में आध्यात्मिक शक्ति काम करने लगी। उसने बौद्ध-धर्म की दीक्षा ली, भगवान् बुद्ध के महान् आदर्श को उसने स्वीकार किया और उसका हृदय विश्वप्रेम से परिपूर्ण हो गया।

अशोक ने धर्म के प्रचार में अपना जीवन लगा दिया। बौद्ध धर्म राजधर्म हो गया, पशु हिंसा बंद कर दी गई, पशुओं के लिये राज्य में यत्र-तत्र चिकित्सालय और रोगियों के लिये शुश्रूषा-भवन खोले गये; सड़कों पर प्रपा का प्रबन्ध हुआ। दीन-दुखियों के लिये अन्न-वस्त्र बाँटने का प्रबन्ध किया गया। प्रजा के धर्म-ज्ञान की उन्नति के लिये विभाग खोले गये। साधु-संतों के लिये मठ बने। धर्म का व्यापक प्रचार होने लगा। मन्दिर-मठों की दीवारों पर, पर्वत-शिलाओं पर, स्तूपों पर, तथा नगर में, गाँव में—सर्वत्र स्थान-स्थान पर धर्म-शिक्षाएँ, सम्राट् की धर्माज्ञाएँ अङ्कित की गईं। विद्वान् भिक्षुक-संन्यासियों की सभा करके धर्मतत्त्व का निर्णय कराया गया और योग्य धर्मोपदेशक देश-विदेश में भगवान् बुद्ध के विश्वप्रेम का प्रचार करने के लिये भेजे गये।

इस प्रकार के धर्मनिष्ठ सम्राट् की देख-रेख में राजकुमार महेन्द्र और राजकुमारी संघमित्रा का लालन-पालन तथा शिक्षा-दीक्षा संपन्न हुई। ये दोनों भाई-बहन जितने सुन्दर और तेजस्वी थे, उतने ही शील और विनय में भी बढ़े-चढ़े थे। इनको ऊँची शिक्षा दी गई और साधु-सन्त तथा विद्वान् गुरुजनों के बीच रहने से इनके हृदय में धर्मभाव जागृत हुआ। महेन्द्र की आयु बीस वर्ष और संघमित्रा की लगभग अठारह वर्ष की हो गई। महाराज ने महेन्द्र को युवराज के पद पर अभिषिक्त करना चाहा। उसी अवसर पर बौद्ध-धर्म के एक आचार्य सम्राट् के पास आये और बोले—'राजन्! जिसने धर्मसेवा में अपने पुत्र और पुत्री को अर्पण किया है, वही बौद्ध-धर्म का सच्चा मित्र है।'

आचार्य की यह बात अशोक को जँच गई। उसने स्नेहार्द्र दृष्टि से अपने पुत्र और पुत्री की ओर देखा और पूछा—'क्यों, तुम लोग भिक्षुक धर्म स्वीकार करने के लिये तैयार हो?' महेन्द्र और संघमित्रा दोनों का हृदय-कमल पिता के इस प्रश्न को सुनते ही खिल गया।

उनके मन में सेवा-धर्म की भावना तो थी ही, सम्राट् की सन्तान होने के कारण उनको यह आशा न थी कि उन्हें संघ की शरण लेने का सौभाग्य प्राप्त होगा। उन्होंने उत्तर दिया—'पिताजी! भिक्षु और भिक्षुणी बनकर करुणामय भगवान् बुद्ध के दया धर्म के प्रचार में जीवन लग जाय तो इससे बढ़कर आनन्द की बात और क्या हो सकती है। आपकी आज्ञा मिल जाय तो इस महान् व्रत का पालन कर हम अपना मनुष्य-जन्म सफल करें।'

सम्राट् का हृदय यह सुन कर बाँसों उछलने लगा। उसने भिक्षुसंघ को सूचना दी कि 'भगवान् तथागत के पवित्र धर्म के लिये अशोक अपने प्यारे पुत्र और पुत्री को अर्पण कर रहा है।' यह बात बिजली की भांति पाटलीपुत्र तथा मगधराज्य में कोने-कोने पहुँच गई। सब लोग 'धन्य-धन्य' कहने लगे!

महेन्द्र और संघमित्रा बौद्ध धर्म में दीक्षित होकर भिक्षु और भिक्षुणी बन गये। महेन्द्र का नाम धर्मपाल और संघमित्रा का नाम आयुपाली पड़ा। दोनों अपने-अपने संघ में रहकर धर्म-साधना करने लगे। महेन्द्र बत्तीस वर्ष की आयु में धर्म-प्रचार के लिये सिंहल द्वीप भेजा गया। उस देश का राजा तिष्ठ आध्यात्मिक ज्योति से भासित महेन्द्र के सुन्दर स्वरूप को देखकर विस्मित हो उठा। उसने बहुत ही श्रद्धा और सत्कार पूर्वक महेन्द्र को अपने यहां रक्खा। सिंहल में सहस्रों स्त्री-पुरुष महेन्द्र के उपदेश को सुनकर बौद्ध धर्म ग्रहण करने लगे।

थोड़े दिनों के बाद सिंहली राजकुमारी अनुला ने पांच सौ सखियों के साथ भिक्षुणी व्रत लेने का संकल्प किया। उस समय महेन्द्र के मन में आया कि इन सब स्त्रियों को अच्छी तरह धर्म की शिक्षा देने तथा स्त्रियों में धर्म प्रचार करने के लिये एक शिक्षित और धर्मशील भिक्षुणी की आवश्यकता है। इसलिये उसने अपनी बहिन संघमित्रा को सिंहल भेजने के लिये अपने पिता अशोक के पास पत्र लिखा। राजकुमारी संघमित्रा को तो धर्म के सिवा किसी दूसरी वस्तु की

चाहना थी नहीं। उसने जब सुना कि धर्म-प्रचार के लिये उसे भाई महेन्द्र के पास सिंहलद्वीप जाना है तब उसके हृदय में आनन्द न समाया। पुण्यशील संघमित्रा ने धर्मप्रचार के लिये सिंहलद्वीप को प्रस्थान किया।

भारत के इतिहास में यह पहला ही अवसर था, जब एक महा-महिमाशाली सम्राट् की कन्या ने सुन्दर शिक्षा-दीक्षा तथा धर्मानुष्ठान द्वारा जीवन की पूर्णता को प्राप्त कर दूर देश की नारियों को अज्ञानान्धकार से मुक्त करने के लिए देश से प्रयाण किया हो। उस समय भारत में संघमित्रा के इस धर्म-प्रयाण के समाचार से लोगों के हृदय में उसके प्रति कैसी उदात्त भावना का उदय हुआ होगा, इसकी आज कल्पना भी नहीं की जा सकती। संघमित्रा जब सिंहल पहुँची तब उसकी तेजस्विनी मुख-मुद्रा, तपस्वी वेष तथा अपूर्व धर्म-भावना देखकर वहां के स्त्री-पुरुष चित्रलिखित-से रह गये। संघमित्रा ने वहां एक भिक्षुणी-संघ स्थापित किया और अपने भाई महेन्द्र के साथ उसने सिंहलद्वीप के घर-घर में बौद्धधर्म की वह अमर ज्योति जगाई, जिसके प्रकाश में आज ढाई हजार वर्ष बीतने पर भी सिंहलनिवासी नर-नारी अपनी जीवन-यात्रा कर रहे हैं, और भगवान् तथागत, उनके धर्म और संघ की शरण में जयघोष करते हैं।

महावंश नामक बौद्ध ग्रन्थ में संघमित्रा का उल्लेख मिलता है। महावंश का लेखक लिखता है कि 'संघमित्रा ने पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया था। सिंहल में रहते समय धर्म की उन्नति के लिए उसने बहुतेरे पुण्य कार्य किये थे। सिंहल के राजा ने बड़े ही आदर-सत्कार तथा ठाठ से उसकी अन्त्येष्टि-क्रिया की थी।

जो हो, इस पवित्र भारत देश में एक-से-एक बढ़कर आदर्श जीवन यापन करने वाली नारियां हुई हैं; परंतु संघमित्रा का काम सम्राट् अशोक की पुत्री के अनुरूप ही था। सम्राट् को इतिहासकारों ने

'महान्' पदवी से विभूषित किया। परंतु देवी संघमित्रा की महत्ता उससे कहीं अधिक थी; सिंहल का इतिहास इस बात का साक्षी है। महाराजाधिराज अशोक की पुत्री देवी संघमित्रा के पवित्र और उन्नत जीवन का स्मरण कर आज भी हमारा शीश श्रद्धा से झुक जाता है।"

छत्रपति शिवाजी

हिन्दू-धर्म रक्षक वीर-शिरोमणि शिवाजी का जन्म सन् १६२७ ई० में पूना के निकट हुआ था। उनके पिता का नाम शाहजी और माता का नाम जीजाबाई था। शाहजी एक साधारण से जमींदार थे। जीजाबाई सुशिक्षिता विदुषी थीं। जिस समय शिवाजी का जन्म हुआ उस समय समग्र भारत मुसलमान विजेताओं द्वारा पादाक्रान्त हो रहा था।

माता जीजाबाई ने तत्कालीन मुसलमानी अत्याचारों का बहुत कुछ अनुभव करते हुए, शिवाजी को उनके विरुद्ध तैयार करने का निश्चय कर लिया था। वे उनको रामायण और महाभारत से वीरों के चरित्र सुनातीं और हिन्दू-धर्म की शिक्षा देती थीं। बाल्य-काल से ही हिन्दुओं की वीरता की उत्साह-वर्धक गाथाएँ सुनकर शिवाजी का हृदय अदम्य शौर्य्य और साहस से भर गया। बीस वर्ष की आयु तक उन्होंने अस्त्र-शस्त्र चलाना, कुश्ती लड़ना, घोड़े की सवारी और सेना संघटन करना सीख लिया था। इस तरह उन्होंने युद्ध के प्रत्येक विभाग में कौशल प्राप्त कर लिया था।

इन्होंने मराठों में एकता का मन्त्र फूका और उनका संघटन किया। मराठा सैनिकों का एक दल संघटित करके उन्होंने आस-पास के किलों पर धावा करना आरम्भ किया। पुरन्धर, तोरण, रैरी आदि कितने ही क़िले कुछ ही दिनों में ले लिये। बीजापुर का सुलतान शिवाजी की यह उन्नति देखकर मन ही मन चिन्तित होने लगा। उसने शिवाजी को पकड़ना चाहा, पर यह कोई आसान काम न था। जब सुलतान शिवाजी को पकड़ न सका, तो उसने उनके पिता शाहजी को कैद कर लिया,

परंतु शिवाजी ने मुग़ल-सम्राट् शाहजहाँ के साथ पत्र-व्यवहार कर, उसके द्वारा बीजापुर-नरेश को शाहजी को मुक्त करने के लिये बाध्य किया।

तब सुलतान ने अपने एक प्रबल सेनापति अफ़ज़लखाँ को एक विराट् सेना के साथ शिवाजी को वश में करने को भेजा और उसे यह आज्ञा दे दी कि शिवाजी को बन्दी करके ले आओ। अफ़ज़लखाँ ने शिवाजी से संधि करने का प्रस्ताव किया और शिवाजी से मिलने की इच्छा प्रकट की। शिवाजी उससे मिलने आए, पर बहुत ही सतर्क हो कर। उन्होंने शरीर पर लोहे का कवच धारण करके ऊपर सुन्दर अँगरखा पहन लिया। उन्होंने हाथ में बघ-नखा लगा रक्खा था जो मुट्ठी बाँधने पर अँगूठी सा मालूम होता था, पर हाथ खोल देने पर लोहे के बहुत पैने नाखून निकल आते थे। उधर अफ़ज़लखाँ भी अपने दाव-घात में लगा था और अपनी कपट-युक्ति से उन्हें मारने के मनसूबे बाँध रहा था।

अफ़ज़ल ने अपनी कपट-युक्ति से ज्यों-ही शिवाजी को मारने की तैयारी की, त्यों ही उन्होंने अपना बघनखा अफ़ज़ल के पेट में घुसेड़ कर उसका काम तमाम कर दिया। मराठों की सेना भी गुप्त रूप से खड़ी थी, वह शिवाजी का इशारा पाते ही बीजापुर की सेना पर टूट पड़ी और उसे मार भगाया। इसके बाद बीजापुर के सुलतान ने कई बार शिवाजी को परास्त करने का उद्योग किया, परंतु वह असफल रहा। अन्त में उसने शिवाजी की स्वाधीन सत्ता मान ली, और जो देश उन्होंने जीते थे उनका उन्हें शासक स्वीकार कर लिया।

इसके बाद शिवाजी का ध्यान मुग़ल-साम्राज्य की ओर गया, और उस पर उन्होंने जहाँ-तहाँ आक्रमण करने आरम्भ कर दिये। सम्राट् औरंगजेब के अत्याचारों से हिन्दू अत्यन्त ही पीड़ित हो रहे थे। शिवाजी ने उसका विरोध करने का निश्चय किया। शिवाजी की बढ़ती हुई

शक्ति को देखकर औरंगजेब ने अपने मामा शाइस्ताखाँ और राजा जसवन्तसिंह को उन्हें दबाने के लिये भेजा। शिवाजी ने अचानक एक दिन रात को शाइस्ताखाँ के महल पर हमला कर दिया, जिससे उसे पूना छोड़कर भागना पड़ा।

अब औरंगजेब बहुत घबराया और शिवाजी को वश में करने के उपाय सोचने लगा। इस बार उसने जयपुर के राजा जयसिंह को शिवाजी के विरुद्ध भेजा। जयसिंह मुग़ल साम्राज्य के अग्रगण्य योद्धा थे। इसके सिवाय शिवाजी हिन्दुओं से लड़ना भी नहीं चाहते थे। इसलिए शिवाजी ने जयसिंह से संधि कर ली और मुग़लों के जो दुर्ग जीते थे वे लौटा दिये। जब औरंगजेब ने शिवाजी और जयसिंह के बीच संधि का समाचार सुना तो उसने शिवाजी से मिलने की इच्छा प्रकट की। जयसिंह के आश्वासन देने पर शिवाजी औरंगजेब के निमंत्रण को न टाल सके। १६६६ में शिवाजी आगरे के लिए रवाना हुए। पर स्वागत करने के बदले औरंगजेब ने उनका अपमान किया, और उन्हें कैद कर लिया। शिवाजी भी कुछ कम चतुर न थे। वे अपनी चालाकी से मिठाई के एक टोकरे में बैठ, पहरे वालों को चकमा देकर, वहाँ से निकल गये और अनेक कष्टों और खतरों का सामना करते हुए कई महीनों के बाद पूना पहुँचे।

दक्षिण पहुँच कर शिवाजी ने फिर अपनी सेना का संगठन किया। औरंगजेब को दिये हुए कई दुर्ग उन्होंने फिर जीत लिये, और कई नए प्रदेश भी जीते। अब शिवाजी सब तरह शक्तिशाली और समर्थ थे। उन्होंने मुग़ल-सेनाओं को बारंबार परास्त किया। सन् १६७४ में शिवाजी ने नियमित रूप से देश का अधिपति बनने का आयोजन किया। रायगढ़ में छत्रपति नरेन्द्र की हैसियत से उनका राज्याभिषेक हुआ। इसके बाद उन्होंने दक्षिण में दूर तक अपनी विजय-वैजयन्ती फहराई। कितने ही प्रबल दुर्गों पर उन्होंने अधिकार किया, और प्राचीन

विजयनगर साम्राज्य के अधिकांश भाग को अपने राज्य में मिला लिया। बीजापुर और गोलकुंडा के राजाओं ने उन्हें कर देना स्वीकार किया। दक्षिण में उनका दबदबा बैठ गया। इस प्रकार अपने बुद्धिबल और बाहुबल से शिवाजी ने शक्तिशाली राज्य की स्थापना की। सन् १६८० में ५३ वर्ष की आयु में उनका स्वर्गवास हुआ।

शिवाजी का शासन-प्रबन्ध भी अत्युत्तम था। शासन के कार्य में वे उतने ही चतुर थे, जितने युद्धक्षेत्र में। राज्य शासन के लिए उन्होंने एक सभा बनाई थी जिसका नाम "अष्ट-प्रधान" था। इसके आठ सदस्य थे। प्रत्येक सदस्य राज्य के एक-एक विभाग का संचालक होता था। इसी सभा की सलाह से शिवाजी राज्य-कार्य करते थे।

शिवाजी का प्रायः सारा जीवन ही युद्ध भूमि में बीता था। एक साधारण जागीरदार के घर में पैदा होकर और विशाल राज्य के अधिपति औरंगजेब के लगातार घोर विरोध करते रहने पर भी उन्होंने अपने बाहुबल और चतुरता से सुदृढ़ राज्य की नींव डाली। यह असाधारण कार्य बिना दुर्लभ मानवीय गुणों के न हो सकता था। युद्ध करते हुए शिवाजी ने जैसा उत्तम राज्य-प्रबंध किया था, वैसा बहुत कम लोग शान्तिकाल में भी कर सके हैं। कट्टर हिंदू, गो-ब्राह्मण सेवक, एवं हिंदू धर्म के भक्त होते हुए भी शिवाजी में धार्मिक असहिष्णुता का लेश न था। औरंगजेब के मथुरा, काशी आदि तीर्थों को ध्वंस करने के समाचार सुनते रहने पर भी शिवाजी ने कभी किसी मुसलमान के विरुद्ध अमानुषिक अथवा पक्षपातपूर्ण व्यवहार नहीं किया। कभी कोई मस्जिद आदि नहीं गिरवाई। शत्रु की स्त्रियों के कैद हो जाने पर भी उन्होंने उन्हें आदरपूर्वक उनके सम्बन्धियों के पास पहुँचा कर अपनी सहृदयता का परिचय दिया। साहस, दृढ़ता और जोश उनकी रग-रग में भरा था। बुद्धिमत्ता, दूरदर्शिता और चातुरी उन्होंने विशेष रूप से पाई थी। ईश्वर और धर्म पर उनका दृढ़

विश्वास था। युद्धक्षेत्र में भी वे ईश्वर की उपासना और नित्यकर्म करने के लिए समय निकाल लिया करते थे। इन व्यक्तिगत एवं राजकीय विशेषताओं के होने के कारण ही शिवाजी ने वह काम कर दिखाया जो बहुत कम लोगों के लिए संभव है। इस लिए उनका नाम बड़े आदर और श्रद्धा से लिया जाता है तथा आगे भी सदा इसी तरह लिया जाता रहेगा।

महाराजा रणजीतसिंह

गुरु गोविंदसिंह ने सिक्ख जाति में जो क्षात्र-बीज बोया था उसके फलस्वरूप सिक्ख जाति योद्धा जाति बन गई। गुरुजी के आत्म-त्याग, बलिदान, धर्म-प्रेम और वीरता से भरे हुए रचनात्मक कार्यों का शीघ्र ही प्रत्यक्ष फल दृष्टिगोचर हुआ। उन्होंने जिस आदर्श को देश के सामने रक्खा, उसी का अनुकरण कर आगे चलकर पञ्जाब में सिक्ख-राज्य की स्थापना हुई।

गुरु गोविंदसिंह के बाद सिक्खों का कोई धर्मगुरु नहीं हुआ, परन्तु उनका सैनिक नेता बंदा बैरागी बना। उसने कितने ही स्थानों पर मुसलमानों को हराया और उनके प्रदेशों पर अपना अधिकार कर लिया, परन्तु अन्त को बादशाह फर्रुखसियर ने उसे बहुत से साथियों समेत पकड़ कर बड़ी क्रूरता से मरवा डाला। इसके पश्चात् सिक्खों पर अकथनीय अत्याचार हुए। इससे सिक्ख-शक्ति कुछ काल के लिए क्षीण अवश्य हो गई, पर दबी नहीं।

जब नादिरशाह और अहमदशाह अब्दाली मुगल-सल्तनत और विशेषतया पंजाब को कुचल कर वापिस लौट चुके थे, तब सिक्ख सरदारों ने फिर सिर उठाना शुरू किया; पर इस समय उनका कोई एक नेता नहीं था। भिन्न-भिन्न सरदारों ने अपने अलग-अलग जत्थे बना लिए थे जो मिसल कहलाते थे। इन मिसलों के सरदार मुसलमान शासकों पर छापे मारते और लूट-मार किया करते थे। इसी लूट-मार

के जोर पर रणजीतसिंह के पिता महासिंह ने भी ३ लाख की आमदनी का इलाका अपने अधीन कर लिया था। महासिंह का विवाह जींद के राजा राजपतिसिंह की कन्या राजकुँवरि से हुआ था। उसी के गर्भ से सन् १७८० में महाराजा रणजीतसिंह का जन्म हुआ। जिस दिन रणजीतसिंह का जन्म हुआ, उस दिन इनके पिता युद्ध में संलग्न थे। ठीक उसी दिन उन्होंने आक्रमणकारियों को पराजित कर रण में विजय प्राप्त की थी। अतएव उन्होंने अपने पुत्र का नाम रणजीतसिंह रक्खा। नाम के अनुसार रणजीतसिंह ने रण में सदा विजय ही प्राप्त की। बाल्यावस्था में इनकी शिक्षा की ओर ध्यान नहीं दिया गया, इसलिये ये कुछ पढ़ लिख नहीं सके; परन्तु उत्साह और पराक्रम-रूपी वीरोचित शिक्षा का संचार इनकी नस-नस में हो गया था।

रणजीतसिंह अभी १२ वर्ष के ही थे कि इनके पिता का देहांत हो गया और इन पर शासन का बोझ आ पड़ा। रणजीतसिंह बड़े बुद्धिमान शासक और चतुर सैनिक थे। अपनी बुद्धिमत्ता और वीरता के कारण वे शीघ्र ही अन्य मिसलों के सरदारों से आगे निकल गये। १९ वर्ष की अवस्था में ये अब्दाली के पुत्र अफ़गान-नरेश जलालशाह की ओर से लाहौर के सूबेदार बनाये गये। तब इन्होंने राजा की पदवी धारण की। तीन वर्ष के भीतर ही ये आजाद हो गये। इधर अफ़गानों में घरेलू युद्ध हो रहे थे, उन्हें इनकी ओर ध्यान देने का अवसर नहीं था। इसी समय में इन्होंने सिक्खों के धर्म-स्थान अमृतसर को जीता। काश्मीर को विजय करके तथा सतलुज के उत्तर की समस्त मिसलों को अपने अधिकार में करके ये पंजाब के एक-छत्र राजा बन बैठे।

कुछ समय तक सतलुज उनके राज्य की दक्षिण-पूर्वी सीमा रही। सन् १८०६ में कुछ सिक्ख सरदारों में, जिन्हें सतलुज और यमुना के बीच में जागीरें मिली हुई थीं, आपस में झगड़ा हो गया और उन्होंने

उन से फैसला करने को कहा। इस पर उनके विरोधियों ने ब्रिटिश सरकार से अपील की, क्योंकि यह प्रदेश (जो कुछ समय सरहिंद के नाम से मशहूर रहा था और जिस पर किसी समय सिंधिया का अधिकार था) सिंधिया की पराजय के बाद अंग्रेजों के अधिकार में चला गया था। लार्ड मिंटो अपने पड़ोस में सिक्ख शक्ति को प्रबल होने देना नहीं चाहता था। अतः उसने समझौते के लिए मैटकाफ को पंजाब में भेजा। बहुत कुछ वाद-विवाद के बाद सन् १८०९ में अमृतसर में एक सुलहनामा तैयार किया गया, जिसके अनुसार सतलुज नदी को सिक्खों के राज्य की सीमा मान लिया गया, और लुधियाना में अंग्रेजों की सीमान्त छावनी हो गई।

इनका कार्य यहीं तक नहीं रुका। भारत का पश्चिमोत्तर प्रान्त अफ़गानों के आधिपत्य में था। इन्होंने अपनी रणकुशल सेना लेकर उन पर आक्रमण कर दिया और घोर संग्राम के बाद संसार का सबसे मूल्यवान कोहेनूर हीरा शाहशुजा से प्राप्त किया। इसके बाद उन्होंने उत्तर और पश्चिम में राज्य-विस्तार करने का निश्चय किया और धीरे-धीरे मुलतान, काश्मीर और अटक को अपने राज्य में मिला लिया।

रणजीतसिंह अपने समय के प्रतापी राजा थे। इनके पास एक विशाल सुव्यवस्थित और रण-कुशल सेना थी। उसको इन्होंने पाश्चात्य ढंग से शिक्षा दिलाई थी और स्वयं उसका निरीक्षण किया करते थे। इनका शासन प्राचीन हिन्दू प्रणाली से होता था। राज्य में सर्वत्र शान्ति और समृद्धि छाई हुई थी। जो देश कुछ वर्ष पहले भीषण युद्धों से जर्जरित हो गया था, जिसमें अराजकता फैली हुई थी, दिन-दहाड़े लूट-खसोट होती और आए-दिन विदेशियों के आक्रमण होते थे उसे इन्होंने एक समृद्ध राज्य में परिवर्तित कर दिया। दूर के जिलों में कभी-कभी गड़बड़ हो जाती थी, परन्तु इनकी कुशल राजनीति और प्रभुत्व

द्वारा राज्य के कोने-कोने में इनका आतंक छाया हुआ था। अपराधियों को कठोर दंड दिया जाता था।

इनके दरबार में धार्मिक सहिष्णुता थी। हिन्दू और मुसलमान सब को बिना भेद-भाव के प्रतिष्ठित और उच्च पदों पर नियत किया जाता था। धार्मिक पक्षपात को इन्होंने कभी अपने भीतर नहीं आने दिया। जिस प्रकार राजा गुलाबसिंह और ध्यानसिंह आदि सिक्ख सरदार आदर के पात्र थे उसी प्रकार काजी अजीजुद्दीन भी इनके विश्वास-पात्र मंत्रियों में गिने जाते थे। तात्पर्य यह है कि ये सब के साथ समान भाव से बरताव करते थे। अपनी हिन्दू और मुसलमान प्रजा पर पक्षपात से रहित हो न्यायपूर्वक पिता की न्याईं शासन करते थे और राज्योन्नति के साथ-साथ उनके सुख-दुख की चिन्ता रखते थे।

बचपन में इनको चेचक ने कुरूप कर दिया था। इनकी एक आँख चेचक से मारी गई थी; परन्तु फिर भी ये तेजस्वी दीखते थे। इनका ऐसा तेज और पराक्रम था कि किसी को हँसी करने अथवा दरबार के नियम को उल्लघन करने की हिम्मत नहीं पड़ती थी। यद्यपि ये पढ़े-लिखे न थे तथापि राज्य-शासन में पूर्ण कुशल थे, और युद्ध-विद्या में अत्यन्त दक्ष थे। समय पड़ने पर साम, दाम, दंड, भेद, सबसे कार्य लेते थे। जब तक ये जीते रहे इन्होंने राज्य की बागडोर अपने हाथ में रखी और उसे सब प्रकार से सुसंयत रक्खा। किंतु कराल काल ने इस प्रतापी पंजाब-केसरी को २७ जून सन् १८३९ ई० को भारत-भूमि से,सदा के लिए उठा लिया।

इनकी मृत्यु के बाद इनका विशाल राज्य, जिसके ये प्राण थे, शीघ्र ही नष्ट होकर धूल में मिल गया। इनके सारे पुत्र एक-एक करके मौत के शिकार बने। केवल एक दिलीपसिंह बच गए थे। जब अंग्रेजों का साम्राज्य पंजाब में फैल गया तब वे विलायत जाकर ईसाई हो गये। अब तो केवल लाहौर के किले के पास बनी हुई इनकी समाधि पराधीन

पंजाबियों को ही नहीं, अपितु पराधीन भारतवासियों को उन स्वर्ण-दिनों की बरबस याद दिला देती है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती

प्रत्येक प्राचीन धर्म में समय-समय पर सुधार की आवश्यकता पड़ती है। लोग धर्म के तत्त्व को भूलकर बाहरी आडंबरों में फँस जाते हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में हिन्दू-धर्म अन्ध-परंपरा और रूढ़िवाद का शिकार बन गया था। सामाजिक कुरीतियाँ बहुत बढ़ गई थीं। लोग वर्णाश्रम धर्म का असली तत्त्व भूल रहे थे और उसको उन्होंने खान-पान के संकुचित नियमों में जकड़ रक्खा था। इन नियमों के कारण हिन्दू-समाज का क्षेत्र भी संकुचित होता जा रहा था। सामाजिक अत्याचारों से तंग आकर लोग ईसाई और मुसलमान धर्म को स्वीकार करने लगे थे। उस समय हिन्दू धर्म को ऐसे सुधारकों की आवश्यकता थी जो असली तत्त्व बतलाकर लोगों को विधर्मी होने से बचा सकें। बंगाल के राजा राममोहन राय ने समय के अनुकूल हिन्दू धर्म का संशोधन किया, किंतु उस संशोधन में हिन्दू-धर्म के बहुत से असली तत्त्व भी निकल गए। स्वामी दयानन्द ने वेदों की मर्यादा को रखते हुए हिन्दू-धर्म में से बहुत-सा रूढ़िवाद हटा कर उस को एक ऐसा रूप दिया जो कि पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित भारतवासियों को ग्राह्य हो सकता था।

स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म सन् १८२४ ई० में गुजरात प्रान्त के अन्तर्गत मोरवी नामक नगर में हुआ था। मूल नक्षत्र में पैदा होने के कारण उनका नाम मूलशंकर रक्खा गया था। इनके पिता अंबाशंकर औदीच्य ब्राह्मण और नामी जमींदार थे। पाँच वर्ष की अवस्था होने पर मूलशंकर की शिक्षा का आरम्भ हुआ। उस समय की प्रथा के अनुसार उन्होंने रुद्री और शुक्ल यजुर्वेद का अध्ययन आरम्भ किया। कुशाग्रबुद्धि होने के कारण १३ वर्ष की अवस्था में ही

उन्होंने संस्कृत में अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। उस समय तक वे अमरकोष और संस्कृत की अन्य छोटी पुस्तकों का अध्ययन कर चुके थे।

बाल्यावस्था में अपने पिता की भाँति उन में भी बड़ी धर्मनिष्ठा थी। उनके पिता कट्टर शैव थे। शिवरात्रि के दिन उन्होंने व्रत रक्खा। पुत्र ने भी हठ-पूर्वक उनका अनुकरण किया। सारा दिन उन्होंने शिव की पूजा की और वे व्रती रहे। रात्रि के समय शिव-मन्दिर में और सब लोग तो सो गए परंतु मूलशंकर को नींद न आई। इसी समय उन्होंने देखा कि एक चुहिया शिवजी की मूर्ति पर उछल-कूद मचा कर पूजा के अक्षत को खाने लगी। उनके मन में अनेक प्रकार की शङ्काएँ उठने लगीं। उन्होंने सोचा कि सर्वशक्तिमान जगदाधार महेश में एक चुहिया को भगाने की भी सामर्थ्य नहीं है ? यही घटना उनके धार्मिक सिद्धान्तों में परिवर्तन का कारण हुई।

बीस वर्ष की अवस्था में मूलशंकर के चाचा का स्वर्गवास हो गया। इस मृत्यु का उनके ऊपर गहरा प्रभाव पड़ा। वे सोचने लगे, क्या संसार में कोई अमर नहीं हो सकता ? उनके हृदय में अनेकों शंकाएँ उठतीं, परन्तु उनका समाधान करने वाला कोई नहीं था। इस समय उनमें कुछ वैराग्य की प्रवृत्ति उत्पन्न हो गई। थोड़े दिन बाद उनके पिता ने उनको विवाह द्वारा सांसारिक बंधनों में बाँधना चाहा किंतु उनका मन धार्मिक खोज में लगा था। वे विवाह का प्रस्ताव सुन कर घर से भाग खड़े हुए। उनके पिता ने सूचना पाकर सिद्धपुर के मेले पर उन्हें जा पकड़ा किंतु तीसरे दिन रात को पहरेदार के सो जाने पर उपयुक्त समय पाकर वे फिर भाग गए और घूमते-घामते नर्मदा नदी के किनारे जा पहुँचे। वहीं उन्होंने स्वामी परमानन्द से संन्यास ग्रहण किया। इसी समय से उनका नाम दयानन्द सरस्वती पड़ा।

संन्यास धारण करने के बाद कभी वे वेद का अध्ययन करते, कभी योग-साधन की कठिन क्रियाएँ सीखते, कभी व्याकरण पढ़ते, परन्तु

उनके चित्त को शान्ति नहीं मिलती थी। इस प्रकार वे मथुरा पहुँचे और वहाँ उन्होंने स्वामी विरजानन्द सरस्वती को अपना गुरु बनाया। यद्यपि उनके गुरुदेव भौतिक नेत्रों की ज्योति से हीन थे, तथापि उनके हृदय के नेत्र खुले हुए थे। वे प्रज्ञाचक्षु कहलाते थे और संस्कृत के अद्वितीय थे। उनके यहाँ स्वामी जी ने ढाई वर्ष तक विविध विषयों का अध्ययन किया। शिक्षा समाप्त होने पर गुरुदेव ने कोई आर्थिक भेंट स्वीकार ., अपितु गुरुदक्षिणास्वरूप यह वचन लिया कि वे संसार में वैदिक धर्म का प्रचार करेंगे।

गुरु से विदा लेकर स्वामी जी कुंभ के मेले पर हरद्वार पहुँचे। वहां उन्होंने अपनी 'पाखंड-खंडिनी पताका' गाड़ी और व्याख्यान देकर तीर्थयात्रियों को धर्म का सच्चा स्वरूप बतलाया। वहाँ से उन्होंने समस्त देश का पर्यटन करना आरम्भ किया। स्थान-स्थान पर उन्होंने शास्त्रार्थ और व्याख्यानों द्वारा अन्ध-विश्वास, अज्ञान, अविद्या, दुराचार, पाखंड और कुरीतियों को दूर करने का प्रयत्न किया। वे हरद्वार, आगरा, अजमेर, अहमदाबाद, बम्बई, पूना, काशी, कलकत्ता आदि प्रसिद्ध नगरों में गये और सब जगह उन्होंने अपनी प्रखर प्रतिभा का परिचय दिया। स्वामी जी ने सबसे पहले बम्बई में आर्यसमाज की स्थापना की। काशी में अनेक विद्वानों से शास्त्रार्थ करके उन्होंने अपनी विद्वत्ता का सिक्का जमा दिया। इस प्रकार सारे देश में उनके वैदिक सिद्धान्तों की दुन्दुभि का नाद सुनाई पड़ने लगा।

स्वामीजी बड़े निर्भय थे। समस्त देश में अपने उपदेशामृत की वर्षा कर उन्होंने राजपूताने की ओर दृष्टि फेरी। लोगों ने उन्हें मृत्यु का भय दिखाकर उधर जाने से रोकना चाहा, परन्तु वे डरने वाले नहीं थे। घूमते-घामते स्वामीजी जोधपुर पहुँचे। वहाँ के महाराज श्री यशवन्तसिंह स्वामी जी के उपदेश सुनकर उनके परम भक्त बन गए। एक दिन स्वामीजी ने उन्हें नन्हीजान वेश्या के प्रेम-रूपी दुष्कर्म से

बचने की प्रेरणा की। वेश्या ने दूध में शीशा मिलवाकर रसोइये द्वारा स्वामीजी को दिलवा दिया। उससे स्वामीजी के शरीर में घोर पीड़ा हुई, किन्तु वे बड़े धैर्य और अलौकिक शान्ति के साथ अन्त समय तक उपदेश देते रहे। ३० अक्टूबर सन् १८८३ ई० को ५९ वर्ष की अवस्था में अपनी अक्षय-कीर्ति छोड़ कर स्वामीजी ने स्वर्गयात्रा की।

स्वामीजी निराकार ब्रह्म की उपासना पर जोर देते थे। वे मूर्ति-पूजा, अवतार, तीर्थ, श्राद्ध और जातीय भेद-भाव के कट्टर विरोधी थे। वर्ण-व्यवस्था को मानते थे, परन्तु जन्म के अनुसार नहीं, अपितु कर्म के अनुसार। स्त्री-शिक्षा, विधवा-विवाह, गो-रक्षा, समुद्र-यात्रा, शुद्धि और अछूतोद्धार के पक्षपाती थे। उन्होंने शारीरिक, सामाजिक और आत्मशक्ति के विकास करने का उपदेश दिया। वे बाल-विवाह और वृद्ध-विवाह के घोर विरोधी थे; सदाचरण और ब्रह्मचर्य के प्रतिपादक थे, स्वराज्य और स्वतंत्रता के पक्के समर्थक थे। वास्तव में वे देश, समाज और राष्ट्र के सच्चे हितैषी थे। स्वामीजी की शिक्षाओं में हम बहुत से वर्तमान राजनीतिक आन्दोलनों का पूर्व-रूप पाते हैं। उनका कहना था कि 'सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सदैव तत्पर रहो। यदि उनकी भी कोई बात झूठ हो तो उसे न मानो।' इससे उनके हृदय की विशालता और चरित्र की उज्ज्वलता झलकती है। वे शास्त्रों के अनुशीलन पर बड़ा जोर देते थे।

स्वामी जी ने हिन्दू-समाज में फैली हुई कुरीतियों और अंध-विश्वासों को दूर करने का प्रयत्न किया और इसी के लिये उन्होंने अपने प्राण तक दिये। अपने सिद्धान्त के प्रचार और समाज सुधार के कामों को जारी रखने के लिए उन्होंने जगह-जगह आर्य-समाज की स्थापना की। आजकल आर्य-समाज काफी शक्तिशाली संस्था है। आर्य-समाज की तरफ से स्थान-स्थान पर स्थापित गुरुकुल, स्कूल, कालेज, अनाथालय और विधवाश्रम आदि उनकी कीर्ति को बढ़ा रहे हैं।

महात्मा गाँधी

जिन महापुरुषों के कारण आज भी गुलाम भारत का नाम संसार में उज्ज्वल हो रहा है, उनमें महात्मा गाँधी प्रमुख हैं। महात्मा गाँधी का पूरा नाम मोहनदास कर्मचन्द गाँधी है। इनका जन्म गुजरात प्रांत के पोरबन्दर नामक स्थान में सन् १८६९ ई० में हुआ था। इनके पिता कर्मचन्द जी पहले पोरबन्दर और बाद में अन्य रियासतों के दीवान रहे। इनकी माता पुतलीबाई बड़ी भक्त थीं। बचपन से ही इनकी माता, पिता, गुरु आदि में बड़ी भक्ति थी।

जब अभी ये स्कूल में ही पढ़ते थे और कुल चौदह वर्ष के ही थे तभी माता-पिता ने इनका विवाह कर दिया था। थोड़े ही दिन बाद इन के पिता का देहान्त हो गया। पिता की मृत्यु के दो वर्ष बाद सन् १८८७ में इन्होंने मैट्रिक परीक्षा पास कर ली। अब इनके बड़े भाई ने इन्हें इंगलंड जाकर बैरिस्टरी पढ़ने की सलाह दी। स्त्री का गहना बेच कर इन्होंने इंगलंड जाने की तैयारी की। इंगलंड जाते समय इनकी माता ने इनसे मांस न खाने तथा शुद्ध आचरण रखने की प्रतिज्ञा करा ली। माता जी के साथ की हुई प्रतिज्ञाओं को इन्होंने पूरी सचाई से निबाहा। बड़ी सादगी और कम खर्च में वहाँ गुजारा करते रहे। तीन वर्ष में कानून का अध्ययन समाप्त कर बैरिस्टरी पास करके सन् १८९१ में ये भारत लौट आए।

पहले-पहल ये वकालत में सफल न हुए। अदालत में जाते तो सब कुछ भूल जाते। पैरवी करने खड़े होते तो हाथ-पाँव काँपने लगते। निराश होकर ये अपने घर राजकोट लौट आये।

इसी समय गुजरात के किसी प्रसिद्ध व्यापारी का मुकदमा दक्षिणी-अफ्रीका में चल रहा था। मुकदमे की पैरवी करने के लिए उस व्यापारी ने इन्हें अफ्रीका भेजा। वहाँ इन्होंने दोनों दलों में समझौता करा कर मुकदमे का काम तो समाप्त कर दिया, पर साथ ही

उस काम का श्रीगणेश कर दिया जिससे आगे चलकर इनका इतना नाम हुआ।

उन दिनों दक्षिणी अफ्रीका में भारतीयों पर बड़े अत्याचार होते थे। वे कुली कह कर पुकारे जाते थे। रेल का पहले दर्जे का टिकट खरीदने पर भी उन्हें तीसरे दर्जे में सफर करना पड़ता था। घोड़ा-गाड़ी में वे गोरों के साथ न बैठ सकते थे, उन्हें पायदान के ऊपर बैठना होता था। हौटल में वे ठहर नहीं सकते थे; फुट-पाथ पर वे चल न सकते थे। रात को नौ बजे के बाद बिना परवाने के घर से न निकल सकते थे। ज़मीन के मालिक भी वे न बन सकते थे और तीन पौंड का कर दिये बिना वहाँ रह भी न सकते थे। इतने पर भी एक नया कानून पास होने लगा, जिसके अनुसार ट्रांसवाल में रहने की इच्छा वाले भारतीय स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध को एक परवाना लेना पड़ता; जिसके लिये उन्हें दोनों हाथों की अँगुलियों और अँगूठे के निशान देने पड़ते, उनके शरीर के चिह्न नोट किये जाते और हमेशा यह परवाना साथ रखना होता। अफ्रीका के रहने वाले भारतीय इन अत्याचारों से तंग थे पर बेचारे विवश थे। महात्मा गाँधी से उन्होंने इन अत्याचारों के विरुद्ध आन्दोलन करने को कहा। महात्मा जी ने इस काम को अपने हाथ में लिया। इसके लिए उन्होंने कुछ उठा न रखा। कई बार गोरों से मार खाई, पठानों के हाथ से मरते-मरते बचे, सत्याग्रह किया, हजारों साथियों के साथ कई बार जेल गये; और भी पर्याप्त कष्ट उठाये पर पीछे नहीं हटे। अन्त में सरकार ने भारतीयों के कष्ट दूर करने का वचन दिया। इस तरह आठ वर्ष का जीवन अफ्रीका में व्यतीत कर वहाँ विजय पाकर ये भारत में वापस आये।

अफ्रीका से लौट कर इन्होंने भारतीयों को भी स्वतंत्रता पाने के लिये सत्याग्रह करने का पाठ पढ़ाया। देशवासियों को विदेशी सरकार से असहयोग करने, विदेशी वस्तुओं का त्याग करने तथा स्वदेशी

वस्तुओं को अपनाने, विशेष कर हाथ का कता, हाथ का बुना कपड़ा पहनने को कहा। असहयोग आन्दोलन से देश में नवीन जागृति फैल गई। लाखों आदमियों ने खद्दर पहनना शुरू कर दिया। हजारों भारतीय इनके कहने से सन् १६२१, १६२२, १६३०, १६३२, १६४० तथा १६४२ में जेल गये। यरवदा जेल तो इनका घर ही बन गया। सन् १६३० में यह आन्दोलन इतना बढ़ा कि उस समय के भारत के वायसराय लार्ड इरविन को इनके साथ समझौता करना पड़ा। उस समय जितने कैदी जेलों में थे, सब छोड़ दिये गये। गाँधीजी कांग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में लंडन में गोलमेज़ कान्फ्रेंस में सम्मिलित हुए, जहाँ उस समय यह फैसला हो रहा था कि भारतीयों को अपने देश में कौन-कौन से अधिकार दिये जायँ; और भारत का शासन-विधान कैसा हो। वहाँ से आते ही इनको फिर सत्याग्रह प्रारम्भ करना पड़ा। इस पर इनको फिर गिरफ्तार किया गया। गोलमेज़ सभा में महात्मा जी ने अछूतों के पृथक् निर्वाचन-अधिकार का घोर विरोध किया था, क्योंकि इससे हिन्दू जाति के दो टुकड़े हो जाते थे। परन्तु प्रधान-मंत्री मैक्डानल्ड ने उन्हें पृथक् निर्वाचन अधिकार दे दिया। इसके विरोध में जेल में रहते हुए महात्मा जी ने प्रतिज्ञा की कि यदि वह पृथक् निर्वाचन-अधिकार नष्ट न कर दिया गया तो मैं २० सितम्बर १६३२ से आमरण व्रत कर दूँगा। फलतः इन्होंने उपवास प्रारम्भ कर दिया। सब जानते थे कि महात्मा जी अपनी बात के पक्के हैं, अतः सारे देश में गहरी हलचल मच गई। संसार इनके उपवास से काँप उठा। अन्त में महामना मालवीय जी के सभापतित्व में पूना में एक सभा हुई, जिसमें यह समझौता हुआ कि हरिजनों का पृथक् निर्वाचन-अधिकार हटाकर उन्हें कौंसिल में अधिक स्थान दिये जायँ। तब सातवें दिन इन्होंने अपना उपवास त्यागा। इसके बाद इन्होंने हरिजनों के उद्धार के लिए सारे भारत का दौरा किया।

सन् १९२१ से अखिल भारतीय कांग्रेस की बागडोर इनके हाथ में ही है या यह कहा जा सकता है कि महात्मा जी ही कांग्रेस हैं। यद्यपि बम्बई कांग्रेस के समय से महात्मा जी स्वयं कांग्रेस के सदस्य नहीं रहे, परन्तु अब तक कांग्रेस का कोई फैसला इनकी सम्मति के बिना नहीं होता। जब कांग्रेस ने विभिन्न प्रान्तों में पहली बार मंत्रि-मंडल बनाये थे तब सबकी नज़र शेगाँव—जहाँ महात्मा जी उन दिनों रहते थे—की ओर ही रहती थी। बाद में महात्मा जी की आज्ञानुसार सारे प्रान्तों के कांग्रेसी मंत्रियों ने त्यागपत्र दे दिए। गत महा-युद्ध को महात्मा जी का सहयोग प्राप्त नहीं था, उन्होंने तो अंग्रेजों को भारत छोड़ जाने तक के लिये कहा। अपनी बात मनवाने के लिये वे अहिंसात्मक योजनाएँ तैयार कर रहे थे कि ९ अगस्त १९४२ को गवर्नमेंट ने उनको और उनके साथियों को गिरफ्तार कर लिया। उनके जेल जाने पर प्रायः सारे भारत में विद्रोहाग्नि फैल उठी।

सन् १९४५ में वायसराय ने इन्हें और कांग्रेस के अन्य नेताओं को जेल से रिहा कर दिया और इनकी 'भारत छोड़ो' की माँग स्वीकार कर कांग्रेस को भारत के शासन का उत्तरदायित्व लेने का निमंत्रण देकर बातचीत करने के लिए शिमला बुलाया। महात्माजी कांग्रेस के परामर्शदाता की हैसियत से शिमला गए। शिमला-कांन्फ्रेंस सफल न हुई। तब इंगलंड के तीन सचिव भारत आए। उन्होंने कांग्रेस को विधान-परिषद् में सम्मिलित हो कर स्वाधीन भारत का भावी विधान बनाने का निमंत्रण दिया। कांग्रेस ने महात्मा जी के परामर्श को मान कर विधान-परिषद् में जाने का निश्चय किया। १५ अगस्त सन् १९४७ को भारत के दो टुकड़े करके अंग्रेजों ने भारत छोड़ दिया। पाकिस्तान और भारत के पश्चिमी प्रदेशों में सांप्रदायिक दंगे हुए, जिन में लाखों निरपराध व्यक्ति मारे गये। तब इन्होंने इस सांप्रदायिकता की आग को बुझाने का बीड़ा उठाया। इनके इस कार्य से असंतुष्ट

होकर एक पथ-भ्रष्ट युवक ने ३० जनवरी सन् १९४८ को गोली से इनकी हत्या कर दी। समस्त देश में शोक छा गया। १३ दिन शोक मनाकर देश ने १२ फरवरी को राष्ट्र-पिता के फूल त्रिवेणी-संगम में विसर्जन किए। समस्त विश्व ने इन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की।

असहयोग-आन्दोलन, खद्दर-प्रचार और हरिजन-उद्धार के अतिरिक्त इन्होंने सारे भारत में राष्ट्र-भाषा हिन्दी के प्रचार का कार्य भी प्रारम्भ करवाया। सुदूर दक्षिण तक हिन्दी का प्रचार इनके ही प्रयत्नों का फल है।

इन सब महान् कार्यों में ये इसी कारण सफल हुए थे और देश इनके कथन को जादू की तरह इसलिए मानता है, कि इनके जीवन का मूल मन्त्र सत्य और अहिंसा थी। ये सत्य की साक्षात् मूर्ति और अहिंसा के अवतार थे। सत्य को ये ईश्वर समझते थे। मन, वाणी और कर्म से ये अहिंसा के पुजारी थे। यहाँ तक कि जो इनको दुःख देते थे उनको भी ये दुःख नहीं देना चाहते थे। अफ्रीका में कई बार गोरों ने इनका अपमान किया, इनको मारा-पीटा। सरकार उन गोरों पर मुकद्दमा चलाना चाहती थी; पर इन्होंने नहीं माना और उन्हें छुड़ा दिया। जब कभी इनके साथियों ने बुरा काम किया, तब इन्होंने उनको कुछ नहीं कहा, पर स्वयं उपवास करके प्रायश्चित्त किया। पतित की भी सेवा करना ये अपना सर्व-श्रेष्ठ कर्तव्य समझते थे। हिन्दू, मुसलमान, ब्राह्मण, अछूत, सबको ये समान समझते हैं। गरीब भारतीयों को कपड़े पहनने को नहीं मिलते, इसलिये ये भी केवल एक कपड़ा पहन कर रहते थे। इनकी इस महान् आत्मा के कारण भारतीय इन्हें अवतार या अपना रक्षक समझते हैं। हिंदू इनके जितने भक्त हैं खूंखार पठान भी इनकी उतनी ही इज्जत करते हैं। अनेक विदेशी भी इनके भक्त और शिष्य हैं। भारत का कोई ही ऐसा गांव होगा जहाँ गाँधी जी का नाम न पहुँचा हो या जो एक बार 'महात्मा गांधी की जय' के नारों से न गूंज उठा हो।

हिटलर

एडोल्फ हिटलर आस्ट्रिया का एक सिपाही था जो १९१४ के विश्वयुद्ध में लड़ा था और घायल हो गया था। वह सामान्य सिपाही के पद से जर्मनी के उच्चतम पद पर पहुँचा था, किंतु उसे अन्त तक अपनी गरीबी के दिन याद रहे थे। उसकी कठोर आदतें, उसका अडिग सदाचार, बनावट से उसकी घृणा, उसका अपने ध्येय के पीछे अटल होकर चलना ये सब गुण उसमें अपनी आरंभिक शिक्षा और गरीबी से प्राप्त हुए थे।

हिटलर ने अपना राजनीतिक जीवन कम्युनिस्ट और यहूदियों के प्रति कठोर शत्रुता के साथ आरम्भ किया। उसकी समझ में १९१४ के विश्वयुद्ध में जर्मनी का पराजय कम्युनिस्ट और यहूदी लोगों के षड्यन्त्रों के कारण हुआ था। १९२० में हिटलर ने नात्सी आन्दोलन आरम्भ किया। अपने लेखों में उसने धन की असमता और विषमता को प्राकृतिक सिद्ध किया और सहकारी केन्द्रीय शासन की नींव डाली। हिटलर प्रभावशाली वक्ता था; उसका व्यक्तित्व धड़ल्लेदार था; इसलिये उसे जल्दी ही दिग्गज शिष्य मिल गए। इन शिष्यों में जनरल ल्युडेनडोर्फ भी एक थे।

हिटलर का आदर्श जातीय समाजवाद था और इसी का प्रचार मुसोलीनी ने इटली में किया था। हिटलर वेर्साय संधि का प्रबल विरोधी था, वह कम्युनिस्ट और यहूदियों का कट्टर दुश्मन था। १९२४ में जब उसने राजशक्ति के लिये खुला प्रयत्न किया तब उस पर मुकदमा चलाया गया और उसे कैद कर दिया गया। उसी वर्ष उसकी रची माइन कांप्फ (मेरा युद्ध) का पहला भाग प्रकाशित हुआ। इसमें हिटलर ने उन बातों और आदर्शों का तरतीबवार सजीव वर्णन किया है जिनका वह जर्मनी में प्रचार करना चाहता था। माइन कांप्फ का जर्मनी में आशातीत आदर हुआ। १९२४ से १९२७ तक नात्सी

अपनी शक्ति बढ़ाते रहे। १९२८ में पार्टी की राजनीतिक धाक देश पर बैठ गई और १९३१ में राइशस्टाग के चुनावों में हिटलर की भारी विजय हुई।

नात्सियों का उदय ऐसे समय में हुआ जब संसार पर निराशा के बादल छाए हुए थे। ऐसे समय में हिटलर ने जर्मनी के युवकों को उनके महान् अतीत ऐश्वर्य की झांकी दी और उसे एक बार फिर लौटा लाने की प्रतिज्ञा की। पराजय से पराभूत हुए जर्मनों को हिटलर देवता दीख पड़ा और वे एक-आवाज हो उसके पीछे चल पड़े। यहूदियों के प्रति हिटलर की घृणा और कम्यूनिस्ट लोगों के प्रति उसके दारुण द्वेषभाव ने उसे जर्मन युवकों का आदर्श बना दिया। १९३२ में हुए चुनावों में नात्सी लोगों की विजय हुई और हिटलर देश का चांसलर बना।

किंतु इन्हीं दिनों हिटलर के विरुद्ध एक षड्यन्त्र चल रहा था, जिसका भाग्य से उसे ठीक समय पर पता चल गया। १९३४ में भयंकर हत्याकाण्ड हुए और षड्यन्त्रकारियों को खाक में मिला दिया गया। इस घटना के कुछ ही दिन बाद हिंडेनबर्ग चल बसा और अब हिटलर एक साथ देश का चांसलर और प्रेजिडेण्ट बन गया और इस प्रकार संक्षेप में वह देश का सर्वेसर्वा हो गया। वह देश का नेता था; 'नेता को नमस्कार' यह ध्वनि देश में एक ओर से दूसरी ओर तक गूंज गई।

शनैः शनैः हिटलर ने देश में व्यवस्था स्थापित की। उसने वेर्सायसंधि को ठुकरा दिया और विजयी देशों को जो कुछ देना किया था, हवा में उड़ा दिया। हिटलर के अधीन जर्मनी लीग आफ नेशंस से अलग हो गया। स्ट्रेसाविमर्श के बाद इङ्गलंड ने जर्मनी के साथ नौ-संधि कर ली और अब जर्मनी में धड़ाधड़ जहाज और पनडुब्बियां बनने लगीं।

कुछ ही वर्षों में जर्मनी हिटलर के अधीन एक महान् शक्ति बन गया, जिसके सामने संसार के राष्ट्र झुकने लगे। हिटलर ने एक ही झड़प में फ्रांस से सार ले लिया; झिड़कियां देकर जर्मनी को तमाम ऋणों से मुक्त करा दिया और थोड़े ही दिनों में उसने संसार की सर्वश्रेष्ठ सेना सजाकर खड़ी कर दी।

अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में हिटलर ने दूरंदेशी और सख्ती से काम लिया जिससे यूरोप पर उसकी धाक बैठ गई। संसार के सभ्य लोग समझने लगे कि हिटलर एक देवता है जो विश्व को बोल्शेविज्म के अंधकार से त्राण देगा, और उन्होंने लुक छिपकर उसकी स्तुति आरम्भ कर दी। अपने मित्र डा० गोइबल्स की सहायता से हिटलर ने प्रचार की ऐसी परिपाटी चलाई कि विश्व में जल्दी ही उसका नाम, उसके काम और उसके लक्ष्य ख्यापित हो गये। इन सब कामों के साथ-साथ वह जर्मनी की सैन्यशक्ति को दिनदूनी रातचौगुनी बढ़ाता रहा जिसका परिणाम यह हुआ कि जर्मन सैन्य के नाम से संसार थर्राने लगा।

समय आया देख हिटलर ने माइन कांप्फ में निर्धारित की रूपरेखा पर चलना आरम्भ कर दिया। १९३४ में आस्ट्रिया में जर्मनी के साथ मिलकर एक हो जाने का जो आन्दोलन चला था, वह मुसोलीनी के विरोध करने के कारण दब गया था। हिटलर ने मुसोलीनी के साथ मैत्री स्थापित की। उसने देश में जबरन भरती की प्रणाली डाल दी और यहूदियों को देश-निकाला देना आरम्भ कर दिया।

१९३६ में हिटलर ने राइनलैंड पर कब्जा कर लिया। फ्रांस ने धमकी दी, फौज भी बढ़ाई; किंतु इंगलंड चुप रहा और हिटलर ने खून की एक बूंद बहाए बिना ही जो चाहा ले लिया। १९३८ के मार्च में आस्ट्रिया को जर्मनी के साथ मिला लिया, और मुसोलीनी चुपचाप देखते रहे। इसके बाद हिटलर ने घोषणा की कि अब उसे

योरप में और कुछ नहीं लेना है। किंतु इस घोषणा के कुछ ही दिन बाद सुडेटनलैंड में जर्मनों के प्रति किये गए दुर्व्यवहार के आधार पर उसने झेकोस्लोवाकिया के विरुद्ध विषवमन करना आरम्भ कर दिया; और लड़ाई का डर दिखाकर सुडेटनलैंड की मांग पेश की। सितम्बर १९३८ में इंगलंड, फ्रांस, इटली और जर्मनी का म्युनिक में एक समझौता हुआ, जिसमें जर्मनी की विजय हुई। मार्च १९३९ में सारे झेकोस्लोवाकिया पर हिटलर का बोलबाला हो गया। अब युद्ध के लिये हिटलर पूरी तरह तैयार था, और वह जानता था कि मित्रराष्ट्र अभी सोए हुए हैं। उसने रोम-बर्लिन-टोकियो की धुरी तैयार की और संसार को आपस में बांटने के बारे में विचार-विनिमय किया और उसके आधार पर आपस में संधियां कीं। इसके बाद हिटलर ने अपनी प्रचार-मशीन पौलेंड के विरुद्ध चलाई और पौलेंड से डानत्सिग मांगा, जो पहले कभी जर्मनी के अधीन था। पौलेंड की पीठ पीछे इंगलंड और फ्रांस का हाथ था, उसने डानत्सिग देने से मना कर दिया। अगस्त १९३९ में जबकि अभी इङ्गलंड, फ्रांस और रूस के मध्य संधि-चर्चा चल ही रही थी—हिटलर ने रूस के साथ संधि घोषित कर दी और इङ्गलंड देखता रह गया। इस प्रकार हिटलर ने पूरब में अपने देश का बचाव कर लिया और पहली सितम्बर को डानत्सिग पर अपना झण्डा गाड़ दिया। ३ सितम्बर के दिन इङ्गलंड और फ्रांस ने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध घोषणा कर दी।

पोलंड की हार हुई; उसका आधा हिस्सा रूस ने हड़प लिया और आधे पर जर्मनी का झण्डा गड़ गया। ६ मास प्रतीक्षा में कटे; मित्रराष्ट्रों को इस बात का ज्ञान न हो सका कि हिटलर की सैन्य कितनी है और उसकी आकाश सेना कितनी प्रबल है। अप्रैल १९४० में हिटलर ने नार्वे पर छापा मारा और मित्रराष्ट्रों की नौसेनाओं के सामना करने पर भी सारे देश पर अधिकार कर लिया। उसके बाद

उसने पश्चिम में अपनी फौजें उतारीं और कुछ ही दिनों में लक्सेम्बर्ग, बेल्जियम और हालैंड उसके हाथ आ गए। संसार में पहली बार हिटलर ने आकाश से फौजें उतारीं और शत्रुओं को अचम्भे में डाल दिया। हिटलर ने अभेद्य मेजिनो लाइन को बगल से पार कर बेल्जियम के रास्ते फ्रांस पर धावा बोला। इसी समय इटली युद्ध में आ कूदा। फ्रांस का पतन हुआ और वह संधियाचना करने लगा।

हिटलर ने सोचा था कि वह बिजली की लड़ाई में इङ्गलंड को अनायास ही पछाड़ देगा, किंतु ऐसा न हुआ और गोयरिंग की आकाश-सैन्य लडन पर गोलाबारी करके भी इङ्गलंड के साहस और धैर्य को न तोड़ सकी। इङ्गलंड में मुंह की खा हिटलर रूमानिया और बलगेरिया की ओर बढ़ा और उसने उन्हें अपने कब्जे में किया। इसी बीच इटली ने ग्रीस पर धावा बोला, पर ग्रीस ने इसका मुंहतोड़ जवाब दिया। आखिर हिटलर की फौजें उधर बढ़ीं और उन्होंने ग्रीस पर फतह पाई।

लीबिया और ईराक पर छापे मार कर हिटलर ने रूस पर आँख फिराई और उक्रेन के गेहूँ क्षेत्रों पर और बाकू के तैलक्षेत्रों पर अधिकार पाने की नीयत से रूस पर धावा बोल दिया।

रूस पर धावा बोलना हिटलर के लिये घातक था, और उसके सेनापति इस आक्रमण के विरोध में थे। किंतु हिटलर पासा फेंक चुका था; वह मर्द था; उसने रूस में जान की बाजी लगादी।

तीन साल प्रलयंकारी युद्ध करके हिटलर क्रीमिया, उक्रेन और श्वेत रूस में थक गया। दिसम्बर १९४१ में उसकी सहायता के लिये जापान युद्ध में कूदा, किंतु जापान के विरुद्ध अमरीका उतर आया; जिसने युद्ध का रूप ही बदल डाला। इङ्गलंड के वायुक्षेत्रों ने जर्मनी पर बमबाजी की, रूस में हिटलर की चुनी हुई फौजें गर्क होने लगीं, अफ्रीका में इटली की हार हुई, १९४३ में इटली ने घुटने टेक दिये;

इन बातों ने जर्मनी को चिंता में डाल दिया; किंतु विजयी हिटलर आन पर मरने वाला था; उसने योरप के श्रेष्ठ सैनिकों को युद्ध की भट्टी में डाल दिया और शत्रुओं के दाँत खट्टे किये। किंतु कब तक; १९४४ में अंग्रेज सिपाही फ्रांस में दाखिल हो गए और जिस बात का हिटलर को भय था वह सिर पर आ गई,-अर्थात् योरप में दूसरा फ्रंट।

मरता क्या न करता; उसने अपने गुप्त अस्त्रों का प्रयोग किया। राकेट, उड़न बम्ब, गोली की तरह फेंके हवाई जहाज उसने सभी का प्रयोग किया, किंतु सब विफल। अब हिटलर के विरुद्ध सारा संसार खड़ा था; विश्व की समस्त शक्तियां उस एक आदमी के सामने खड़ी थीं; वह लड़ा, अन्त तक लड़ा और जब उसने शत्रुओं को बर्लिन में घुस आया देखा तब २ मई १९४५ के दिन चांसलरी में आत्म-हत्या कर संसार से बिदा ली।

हिटलर संसार में बिजली की तरह उठा था; वह बिजली ही की तरह विलीन हो गया।

संसार उसे अपशब्दों में याद करता है; विश्व के इतिहासकार उसे मनुष्यजाति का द्वेषी बताते हैं। किंतु इतनी जल्दी ऐसे महान् विक्रमी का निर्णय नहीं हुआ करता। सदियां बीत जायंगी; तब कभी इतिहास शांति के साथ हिटलर के विषय में अपना निर्णय देगा।

पश्चिमी सभ्यता हिटलर को बुरा नहीं कह सकती। उसका सिद्धान्त ही निर्बलों पर शासन करना रहा है।

हां, भारतीय सिद्धान्त के अनुसार हिटलर ने हत्या और हिंसा का मार्ग पकड़कर अनर्थ किया था; उसी पाप का उसे इतनी जल्दी फल मिल गया।

आत्मकथा-निबन्ध

दूसरों की जीवनी तो सभी लिखा करते हैं किंतु कुछ महाशय अपनी जीवनी अपने आप लिखते हैं—इसी को 'आत्मकथा' या 'मेरी कहानी' कहते हैं। महात्मा गांधी, जवाहरलाल, राजेन्द्र बाबू, एच: जी वेल्स, हिटलर तथा फ्रैंकलिन आदि की आत्मकथाएँ प्रसिद्ध हैं।

अभ्यास के लिये विद्यार्थियों को आत्मकथा लिखते समय अपने आपको किसी पदार्थ या व्यक्तिविशेष के साथ एक बनाना होता है। जैसे पानी, पैसा, रुई और जमना की आत्म-कथा लिखते समय छात्र अपने आपको पानी, पैसा, रुई, और जमना के साथ एक कर लेता है और तब इनकी कहानी लिखता है।

आत्मकथा लिखते समय सीधी भाषा में उस वस्तु की कहानी लिख डालो जिसके विषय में तुम्हें लिखना है। इसके लिये वर्ण्य वस्तु के विषय में पूरा ज्ञान होना अपेक्षित है। किंतु ध्यान रहे घटनाएँ यथार्थ दीख पड़ें, उनका सिलसिला अटूट रहे, वे थोड़े शब्दों में कही जांय; और शब्द तथा वाक्य नपे-तुले और रुचिर हों। पाठक का मन कहानी में रम जाय और उसे मालूम पड़े कि सचमुच पैसा अपनी कहानी सुना रहा है या सचमुच जमना अपनी कहानी कह रही है।

आत्मकथा के उदाहरण:—

प्रवासी की आत्म-कथा

दक्षिण अफ्रीका में सन् १९१४ की जनवरी में बंदी-मोचन के पश्चात् प्रिटोरिया से गांधी जी का एक पत्र मिला, जिसमें यह आदेश था कि मुझे सपत्नीक फिनिक्स आश्रम में रहना चाहिए और "इण्डियन ओपिनियन" के हिन्दी अंश का सम्पादन करना चाहिये। मेरे मन की मुराद पूरी हो गई। जब जहाज से उतर कर मैं गांधी जी के दर्शन के लिये फिनिक्स गया था, तभी से उस ऋषि-आश्रम में कुछ दिन निवास करने की मेरी आंतरिक आकांक्षा थी, प्ररन्तु परिस्थिति के प्रभाव से मैं अपनी इच्छा की पूर्ति नहीं कर सका था। इसलिये गांधी जी का संदेश पाकर मेरे सन्तोष की सीमा नहीं रही। मैं झट फिनिक्स पहुँच कर अपने काम में लग गया। पर जगरानी उस समय रुग्ण-शय्या पर पड़ी हुई थी। जेल में उसका स्वास्थ्य भग्न हो गया था और वे रुग्ण शरीर लेकर बन्दी घर से निकली थीं। डरबन में अच्छे-अच्छे डाक्टरों से उनका उपचार कराया गया, पर "मरज बढ़ता गया, जूँ जूँ दवा की" वाली लोकोक्ति ही चरितार्थ हुई। जब रोग अत्यन्त असह्य हो गया और डाक्टरों की सारी चेष्टाएं विफल हो गईं तो बापू उनकी दशा पर दया कर उनको अपने साथ ही फिनिक्स लाये। बापू के आदेश से उनको आश्रम में ले जाने के लिये हाथ से खींची जाने वाली गाड़ी स्टेशन पहुँच गई थी। बापू ने बहुत संभाल कर जगरानी को रेलगाड़ी से उतारा और ठेला गाड़ी पर लिटा दिया। इसके बाद बापू ने जो कुछ किया वह मेरे लिऐ तो कल्पनातीत घटना थी। वे स्वयं ठेला गाड़ी खींचने लगे और वह भी अकेले ही। हम लोगों में से कई आदमी बापू के हाथ से गाड़ी ले लेने के लिये आगे बढ़े, पर उन्होंने किसी को पास फटकने तक न दिया और साफ कह दिया कि मुझे सहायता की आवश्यकता नहीं है। उन्होंने अकेले ही ठेला गाड़ी खींचते हुए लगभग तीन मील की ऊबड़ खाबड़ मंजिल तय की।

मैं तो ग्लानि से गड़ा जा रहा था। जब बापू ने मुझे ठेला गाड़ी खींचने का अवसर नहीं दिया तो 'खिसियानी बिल्ली खम्भा नोचे' की भांति मैं बिगड़ कर जगरानी से बोला—"तुम बापू से गाड़ी खिंचवाती हो, नरक में जाने का यह सबसे सीधा रास्ता है।" मेरी इस हृदय-हीनता पर उनकी आंखों से आंसू की धारा बह चली और वे व्यथित होकर बोलीं—"आप ठीक कहते हैं। इससे बढ़ कर पाप कर्म और क्या होगा ? बापू से गाड़ी खिंचवाने की अपेक्षा तो मेरे लिये मौत अच्छी है, पर मांगे पर मौत भी कहां मिलती है ? यदि धरती फट जाती तो मैं उसमें समा कर इस दुष्कर्म से बच जाती। मुझे तो नरक में भी स्थान नहीं मिलेगा।" असल में जगरानी की व्याधि असह्य हो गई थी, उनमें उठने बैठने की भी शक्ति नहीं थी और वह जीवन-मरण के अधर में लटक रही थी।

बापू ने रुग्ण जगरानी की परिचर्या का भार बा को सौंपा। उस समय कारावास के कष्ट से स्वयं बा का स्वास्थ्य काफी गिर गया था, फिर भी उन्होंने अपने शरीर की कोई परवाह नहीं की और अपनी अथक एवं स्नेहमयी सेवा-शुश्रूषा से जगरानी की जान बचा ली। गांधी जी की चिकित्सा से, जिसमें केवल मिट्टी की पुल्टिस बांधी जाती थी और अखण्ड उपवास कराया जाता था, केवल एक सप्ताह में जगरानी का स्वास्थ्य सुधर गया—उनको नया जीवन मिल गया। क्षीण-काय और अस्वस्थ बा ने जिस लगन, परिश्रम और प्रेम से जगरानी की परिचर्या की, वह उनकी सहृदयता और स्नेह-शीलता के अनुरूप ही था। बा का शरीर दुर्बल था सही, पर उनका हृदय बड़ा बलवान था। सेवा की वे सजीव मूर्ति थीं।

आश्रम के बहुमुखी कार्यों में व्यस्त होते हुए भी बापू वहां के डाक्टर भी थे और बा नर्स के रूप में खुशी से उनके काम में हाथ बँटाती थीं। बापू रोगियों का उपचार करते, उनके कपड़े धोते और मल-मूत्र तक

साफ करते। उनका जीवन आत्म-संयम का साक्षात् स्वरूप था; तन और मन को अपने अधीन करके उनसे वे इच्छानुसार काम लिया करते थे, पर मेरे लिए तो यह नितान्त नया दृश्य था। इतने बड़े नेता इतने छोटे काम भी कर सकते हैं, यह सोच कर मैं स्तब्ध रह गया। मेरे सामने नेतृत्व का नया नमूना था, देश सेवा की नई मिसाल और मनुष्यता की नई कसौटी।

आश्रम की पाकशाला भी बापू और बा की ही देख-रेख में चलती थी। भोजन पकाने, लोगों को परोस कर खिलाने और जूठे बरतन मांजने में भी बापू और बा को कोई परहेज न था। बापू की विधि से डबल रोटियां पकती थीं, जो ऐसी कड़ी होती थीं कि उनको खाना मानो लोहे के चने चबाना था—किसी तरह उनको गले के नीचे उतारने के योग्य बनाने में दाँतों के छक्के छूट जाते थे। आस्ट्रेलिया का मैदा स्वास्थ्य की दृष्टि से उपयोगी नहीं जंचा, इसलिए बापू ने हाथ से आटा पीसने की व्यवस्था की। आटा पीसने में वे सबको मात कर देते थे। इससे जहां स्वास्थ्य की रक्षा होती थी वहां खर्च की बचत। अन्य प्रकार के व्यंजनों को बनाने में भी बापू की पाक-विधियां काम में लाई जाती थीं। मिर्च, मसाला और घी के तो दर्शन भी दुर्लभ थे जिनसे भारतीयों की प्रिय कढ़ी दाल और तरकारी चरपरी, रसनीय और स्वादिष्ट बनती हैं। वहां तो सभी प्रकार की साग-भाजी पानी में उबाल दी जाती थी। ऊपर से जो कोई चाहे जैतून का कच्चा तेल मिला सकता था।

इस विधि से पानी में उबाली हुई साग भाजी में भी 'अलोना' और 'सलोना' का भेद होता था। कुछ लोग अलोना खाते थे और कुछ लोग सलोना। किसी पर कोई दबाव नहीं था। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी इच्छा से भोजन पसन्द करने की आज़ादी थी। पर एक बार यह संकल्प कर लेने पर कि कौन किस अवधि तक 'अलोना'

खायेगा, बापू इस बात की पूरी चौकसी रखते थे कि उसकी प्रतिज्ञा में अन्तर न आने पाए। इस विषय पर मुझसे जब पूछा गया तो मैंने साफ़ जवाब दिया कि मेरे लिये तो अलोनी शाक-भाजी गले के नीचे उतारना असम्भव है। वहाँ के सलोने भोजन से भी मेरी तृप्ति नहीं होती थी, इसलिये मैं सप्ताह में चार दिन फ़िनिक्स में रहता और शेष तीन दिन स्वादिष्ट भोजन के लिये डरबन में।

एक दिन आश्रम में एक विचित्र घटना हो गई। अलोना दल वाले कुछ तरुण प्रवासी अपने स्वादहीन भोजन से ऊब गये। बापू को प्रसन्न करने के लिये वे प्रतिज्ञा तो कर बैठे थे—साधना के लिये कृत-संकल्प हो चुके थे—पर उनकी वासना और रसना विद्रोह कर उठीं। उन्होंने डरबन से घी की पूरी-कचौरियाँ, बेसन की नमकीन बरी-पकौड़ियाँ, मसालेदार चरपरी तरकारियाँ और रसदार मिठाइयाँ चोरी से मँगवाईं और लुक-छिपकर पेट भर खाया। बापू से यह बात छिपाने के लिये सभी प्रतिज्ञाबद्ध थे। पर देवदास गाँधी अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ न रह सके। उन्होंने बापू के सामने अपना अपराध स्वीकार करते हुए सारा भण्डा फोड़ कर दिया।

शाम को प्रार्थना के बाद बापू ने हर एक चटोरे से पूछा, पर किसी ने देवदास के कथन को सत्य नहीं बतलाया। सत्य की अवहेलना होते देखकर बापू का अन्तः करण आकुलित हो उठा, मुख पर सत्य की अप्रतिम आभा एवं नेत्रों में दया और करुणा की ज्योति प्रदीप्त हो उठी।

"इसमें तुम लोगों का कोई दोष नहीं है; मुझ में ही सत्य का अभाव है। अभी मैंने अपने जीवन को सत्यमय नहीं बना पाया है। इसी से मेरे सामने सत्य प्रकट करने में तुम्हें संकोच हो रहा है।" यह कह कर बापू दूसरों को दण्ड देने की अपेक्षा अपने ही गालों पर तड़ातड़ तमाचे लगाने लगे। ऐसा भासित हुआ कि धरती हिल रही है, आकाश

फट रहा है। सभी के शरीर थर-थर कांपने लगे, हृदय हठात् हिल गये। चटोरे लज्जित और व्यथित हो कर खड़े हो गये और अपराध स्वीकार कर क्षमा के प्रार्थी हुए।

फिनिक्स के प्रवासी ठीक चार बजे सवेरे उठ जाया करते थे; पर बापू ने मेरी स्थिति पर दया कर यह रियायत कर दी थी कि मुझे छः बजे उठाया जाय। मध्यान्ह में नहाने का ढंग निराला ही था। प्रेस के पास एक कूप था। वहां अधिकांश आश्रम वासी इकट्ठे हो जाते। पहले सब नंग धड़ंग होकर धूप खाते और फिर शीतल जल से नहाते। मुझे जेल में इस प्रकार कैदियों के साथ नग्न स्नान करने का अभ्यास पड़ गया था, अतएव यहाँ भी विशेष झिझक नहीं हुई। तभी से मुझे नग्न-स्नान की जो आदत पड़ी सो आज तक नहीं छूटी है। फर्क इतना ही है कि तब बाहर नहाना पड़ता था और अब स्नानागार का द्वार बंद करके नहाता हूँ।

एक दिन की बात है। सत्याग्रह की समाप्ति पर अनेक प्रख्यात अंग्रेज आश्रम पर आये हुए थे; खासकर बापू से भारतीय समस्या पर सलाह मशविरा करने के लिये। बड़े कमरे की लम्बी मेज के चौगिर्द लोग बैठे हुए थे, उनके बीच में बापू विराज रहे थे। बाहर बिल्कुल सन्नाटा था, अन्दर गम्भीर राजनीतिक चर्चा चल रही थी। उसी समय अचानक मेरा बच्चा रामदत्त खेलते-खेलते ठोकर खाकर गिर पड़ा, फिर तो न उसने आव देखा न ताव—न माता के पास आया, न पिता के पास, चिल्लाते हुए, वह बापू के पास पहुँच कर उनसे लिपट गया। वह विचार सभा बाल-क्रन्दन से गूँज उठी, वार्तालाप का सिलसिला टूट गया। सब का ध्यान रोते हुए रामदत्त की ओर खिंच गया। हम लोग तो सन्न रह गये। बालक इतनी ढिठाई कर सकेगा, इसकी हमें आशंका नहीं थी। जगरानी बच्चे को रोते देख कर चुप कराने के लिए दौड़ पड़ी थी पर उनके पहुँचने के पहले ही बच्चा बापू की गोद

में पहुँच गया। यदि बापू के स्थान पर मैं होता तो बच्चे को डांट डपट कर हटा देता और उसके माता पिता को भी खरी खोटी सुनाने से न चूकता। पर मेरे और बापू के स्वभाव में उतना ही अन्तर ठहरा जितना गंगा और गड्ढी में होता है। बापू ने उस सभा की, जिसमें प्रवासी भारतीयों के भविष्य का नक्शा खींचा जा रहा था, उतनी परवाह नहीं की जितनी कि बच्चे की पुकार सुनने और उसे पुचकार कर खुश करने की। बच्चे को गोद में लेकर थपकियां देते हुए बापू कमरे में टहलने लगे और साथ ही उस गम्भीर विचार में योग भी देने लगे। सब के प्रति अपने इस प्रकार के समान बर्ताव और समवृत्ति के कारण महात्मा गांधी 'बापू' या 'पिता' के नाम से पुकारे जाने लगे।

मैं सम्पादक बन कर फिनिक्स गया था। सन् १६१३ के अंतिम सत्याग्रह में हिन्दी और तामिल भाषियों ने आत्मोत्सर्ग का ऐसा उच्चतम परिचय दिया था कि उनके प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के लिये बापू ने 'इण्डियन ओपीनियन' में हिन्दी और तामिल अंश जोड़ दिया। हिन्दी अंश का काम मुझे सौंपा गया। उससे पूर्व मैं भागलपुर (बिहार) से निकलने वाले मासिक "आर्यावर्त" का सहकारी सम्पादक रह चुका था, इस कारण मुझे अभिमान था कि सम्पादन कला का मैं एक निष्णात विद्वान् हूँ। पर फिनिक्स में 'इण्डियन ओपीनियन' के सम्पादकीय विभाग में प्रविष्ट होते ही मेरा सारा अहंकार चूर-चूर हो गया और मुझे पता लग गया कि मैं इस कला का अभी ककहरा भी नहीं जानता हूँ। इस समय 'इण्डियन ओपीनियन' के सम्पादकीय विभाग में गांधी जी और पोलक साहब जैसे विश्वश्रुत पत्रकार काम कर रहे थे। उनके चरणों के पास बैठ कर मैंने सम्पादन कला की शिक्षा पाई, जो मेरे भावी जीवन में अत्यन्त उपयोगी एवं लाभदायक सिद्ध हुई।

मैं अपनी सारी विद्या-बुद्धि लगा कर लेख तय्यार करता पर जब बापू को दिखाता तो मुझे बहुधा निराश होना पड़ता। वे उसमें से कुछ। कुछ दोष ढूँढ़ निकालते और मुझे दोबारा लिखने के लिये विवश करते। एक बार बापू ने जनरल स्मट्स की नीति और सोलमन कमीशन की प्रवृत्ति पर एक आलोचनात्मक अग्रलेख लिखने की आज्ञा दी। मैंने रात-रात जाग करके एक लम्बा और लच्छेदार लेख लिखा और सवेरे देखने के लिये बापू के हाथ में देकर उनका मुख देखने लगा। बापू लेख पढ़ कर पहले तो मुसकाये, फिर गम्भीर होकर बोले—"इसको लिखने में तुमने काफ़ी मेहनत की है अवश्य, पर वह व्यर्थ गई। यह लेख 'इंडियन ओपीनियन' में अग्रस्थान पाने योग्य नहीं बन पड़ा। इसमें शब्दाडंबर के घटाटोप में भाव ऐसे प्रच्छन्न हो गये हैं कि वे साधारण हिन्दी पाठक के लिये बोधगम्य नहीं रहे। थोड़े से थोड़े शब्दों में अधिक से अधिक बातें कहना ही लेखन कला की विशेषता है। एक भी फालतू शब्द का उपयोग करना मानों अपनी कलम का दुरुपयोग करना है। जो कुछ कहना चाहो, सीधे ढंग से सरल शब्दों में साफ़-साफ़ कहो, उसे शब्दालङ्कार के आवरण से ढंको मत।"

"दूसरी बात यह है कि इस लेख में जनरल स्मट्स के विरुद्ध जो बातें कही गई हैं क्या यही बातें तुम उनके मुंह पर कहने का साहस कर सकते हो? यदि हाँ, तो इस से शिष्टाचार का संहार होगा और यदि नहीं तो फिर तुम्हें ऐसी बातें लिखने का क्या अधिकार है? जब किसी के विचार और व्यक्तित्व पर सार्वजनिक हित की दृष्टि से टीका-टिप्पणी करना आवश्यक समझो तो अपने मन में यह कल्पना कर लो कि वह व्यक्ति तुम्हारे सामने बैठा है और जो बात बिना किसी संकोच के तुम उसके मुंह पर कह सकते हो वही बात लिखो भी, उस से एक शब्द भी अधिक नहीं। यह याद रखना चाहिये कि पत्र-कार के रूप से तुम जिसकी टीका कर रहे हो, वह टीका उसकी दृष्टि से ओझल नहीं

रह सकती। यह भी मत भूलो कि किसी भी नीति, प्रवृत्ति और अभिमत की आलोचना जहाँ जन-हित की दृष्टि से वांछनीय है वहाँ किसी पर व्यक्तिगत आक्षेप करना सर्वथा अनुचित है। यदि किसी का व्यक्तित्व सार्वजनिक हित में बाधक हो रहा हो तो उसकी टीका करना पत्रकार का नैतिक अधिकार है।" बापू का यह सदुपदेश मेरे पत्रकार-जीवन का मुख्योद्देश्य बन गया।

मैंने फिनिक्स में बड़ी शान से अपना काम आरम्भ किया था, क्योंकि मुझे इस बात का अभिमान था कि एक इतिहास-प्रसिद्ध पत्र का सम्पादक कहलाने का सम्मान मुझे प्राप्त है। अधिकांश आश्रम-वासी पत्र के लिये अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी और तामिल में टाइप बैठाया करते पर मैं अपनी कुर्सी से हिलना डुलना पसन्द नहीं करता। जब पत्र मुद्रण का दिन आता और सभी लोग बारी-बारी 'सिलेंडर मशीन' चलाते तब मैं भी संकोच में पड़ कर पन्नों की तह लगाने में लग जाता। पर मेरी यह स्थिति शीघ्र ही बदल गई। एक दिन बापू मेरी मेज के पास आए और यह कह कर चले गये—"तुमको घड़ी दो घड़ी टाइप बैठाने का काम भी सीखना चाहिये।" बस उस दिन से मेरी आधी सम्पादकी लुप्त हो गई।

अब मैं कुछ घंटे कम्पॉजिटर बन कर टाइप सेट करता। इसी से मेरा पिंड नहीं छूटा, अभी भाग्य में कुछ और भी बदा था। वहाँ एक बहुत बड़ी पत्र छापने की 'सिलेंडर' मशीन थी जो पहले स्टीम एंजिन से चलती थी। बापू ने एंजिन को तो पेन्शन दे दी और सिलेंडर के चक्र में डंडा लगा कर हाथ से चलाने की व्यवस्था की। उन्होंने अपने लिये यह नियम बना लिया था कि सामने एक घड़ी रख लेते थे और लगातार घंटा भर स्वयं मशीन का चक्का चलाते थे। इस बीच में कई आदमियों की अदला बदली हो जाती थी। कोई भी इतनी देर तक बापू के साथ ठहर नहीं सकता था। मैं चालाकी से काम लेता। जब पत्र

छपने लगता तो छपे पत्रों की तह लगाने में जुट जाता। इस प्रकार मैं मशीन का चक्का घुमाने की कड़ी मेहनत से सहज ही बच जाता। मेरी यह कारगुजारी बापू की तेज निगाह से कब तक छिपी रहती। एक दिन उन्होंने मेरा नाम लेकर पुकारा। मैं सुनकर भी बहरा बन गया और अपने काम में ऐसा व्यस्त बन गया कि मानों कुछ सुना ही नहीं। वहां सभी नवयुवक मेरी इज्जत करते थे। इसलिये मेरे बदले उनमें से एक तरुण दौड़ गया किंतु बापू मुझे कहां छोड़ने वाले थे। उन्होंने हंसते और ठट्ठा करते हुए युवक से पूछा, "क्या तुम्हीं भवानी दयाल हो?" बेचारा नौजवान लज्जित होकर लौट पड़ा। अब क्या करता? कोई चारा नहीं रहा। लाचार होकर मुझे मशीन का चक्का घुमाने के लिये जाना ही पड़ा। चक्र के डंडे को एक ओर बापू ने पकड़ा और दूसरी ओर मैंने। लगी मशीन चलने। पांच मिनिट में ही मेरी सांसों ने त्यागपत्र दे दिया—दम उखड़ने लगा। मेरी अवस्था बापू से छिपी नहीं रही। उन्होंने दयार्द्र होकर पूछा—"थक गये न?"

"नहीं; अभी तो नहीं थका हूँ" कहकर मैंने अपनी कमजोरी छिपाने का यत्न किया और दो तीन मिनिट और भी चक्का चलाया। पर मेरा दिल ही जानता था कि मेरे दम की क्या गति हो रही है। आखिर बापू को दया आ गई और उन्होंने मेरी रिहाई कर दी। इस प्रकार फिनिक्स में मेरी उन्नति होती गई, एडिटर से कम्पोजिटर बना और कम्पोजिटर से खासा मजदूर।

फिनिक्स में ही मुझे पहले-पहल साधु चार्ल्स फ्रियर एण्ड्रूज के दर्शन हुए। पहली झांकी में ही उनके प्रति मेरे हृदय में श्रद्धा उत्पन्न हो गई। उनका बाह्य रूप आरसी की भांति इतना स्वच्छ था कि उस पर उनके हृदय के सारे भाव झलक रहे थे। उन से परिचय और वार्तालाप होने पर मुझे निश्चय हो गया कि यह कोई साधारण पादरी नहीं हैं, प्रत्युत एक ऐसा महापुरुष है जो गरीबों का गर्व, दासता का

शत्रु, श्रमिकों का मसीहा, किसानों का कर्णधार, स्वतन्त्रता का संदेश-वाहक और भारत का भक्त बन कर विश्व में पूजित होगा।

सच बात तो यह है कि अंग्रेजों के अन्याय, अधमता और अत्याचार देखकर मैं उस जाति को ही घृणा की दृष्टि से देखने लगा था, पर साधु सी० एफ० एण्ड्रूज के सत्संग से मुझे अपना विचार बदलने पर बाध्य होना पड़ा। वस्तुतः किसी देश या जाति के न सब व्यक्ति अच्छे ही होते हैं और न सब खराब ही।

"उपजहिं एक संग जल माहीं।
जलज जोंक जिमि गुण बिलगाहीं॥

जहां हिरण्यकश्यप उत्पन्न हुआ था, वहीं प्रह्लाद भी; जिस भूमि पर रावण ने जन्म लिया था उसी पर विभीषण ने भी। जो नगर कंस का जन्म दाता है वही कृष्ण का भी। इसी प्रकार जिस इंग्लंड के गोरे नेटाल में प्रवासी भारतीयों के साथ अमानुषिक अत्याचार कर रहे हैं; उसी इंगलंड ने एण्ड्रूज जैसे पवित्रात्मा को प्रवासी भारतीयों की सेवा और सहायता के लिये प्रदान किया है।

उन दिनों दक्षिण अफ्रीका के अंग्रेजों के पत्रों में साधु एण्ड्रूज की बड़ी कड़ी टीका हो रही थी। बात यह हुई कि जब एण्ड्रूज डरबन में जहाज से उतरे तो पोतस्थान पर उन्होंने प्रवासी भारतीयों की भारी भीड़ पाई। पोलक से परिचय होने पर उन्होंने पूछा—"गांधी जी कहां हैं।" मजदूर के रूप में महात्मा जी वहीं पोलक के पास खड़े थे। इसलिये एण्ड्रूज के पूछने पर बापू ने कहा—"मैं ही गांधी हूँ"। एण्ड्रूज ने झुक कर भारतीय विधि से बापू के चरण छुए और हाथ जोड़ कर नमस्कार किया।

यह दृश्य अंग्रेज रिपोर्टरों के लिये असह्य हो गया। दक्षिण अफ्रीका के पत्रकार-संसार में भूकम्प हो उठा, अंग्रेजों के मर्यादामयंक पर ग्रहण लग गया। वे क्रोधानल में जल-भुन कर खाक हो गये।

अंग्रेजी पत्रों में अभिमानी अंग्रेजों को उभारने के लिये, इस घटना पर रंग चढ़ाते हुए लिखा गया—"ईसाइयों के धर्म-गुरु कहलाने वाले रेवरेण्ड महोदय गांधी के पैरों पर गिर पड़े, उन्होंने गांधी के चरण भी चूमे और उन के तलवे की धूल उठा कर बड़ी श्रद्धा भक्ति से अपने माथे पर रगड़ी।"

एण्ड्रूज को इन व्यर्थ व्यंगोक्तियों की परवाह ही कब थी ? वे तो बापू के व्यक्तित्व में अपने प्रभु ईसा मसीह का रूप देख रहे थे। एक दिन डरबन के अंग्रेजों के गिरजाघर में एण्ड्रूज साहब प्रवचन करने गये और अपने साथ बापू को भी ले गये पर हिन्दुस्तानी होने के कारण बापू को गिरजे के अन्दर जाने से रोका गया। ईसाई धर्माध्यक्षों की इस वर्ण-विद्वेष-मूलक मनोवृत्ति और प्रवृत्ति पर एण्ड्रूज को बड़ा ही विस्मय और विषाद हुआ और उनकी आत्मा गिरजापंथियों से विद्रोह कर उठी। उन्होंने अपने वक्तव्य में स्पष्ट घोषणा कर दी कि "मैं दक्षिण अफ्रीका के सारे गिरजा घरों में मशाल लेकर ढूंढ़ आया, पर कहीं अपने प्रभु ईसा को नहीं पाया। अन्त में वे मुझे मिले तो सही, पर कहां ? प्रभु ईसा के नाम पर निर्मित गिरजों में नहीं, प्रत्युत हिन्दुस्तानी सत्याग्रहियों के जीवन के उच्च उद्देश्य में, उनके सत्य और अहिंसा के संदेश में, उनके त्याग और बलिदान के आदेश में।"

उस समय साधु एण्ड्रूज से मेरा जो स्नेह-सम्बन्ध स्थापित हुआ वह उनके जीवन की अन्तिम घड़ी तक अविच्छिन्न रहा। कई बार प्रवासी भारतीयों के प्रश्नों पर परस्पर सैद्धान्तिक मतभेद भी हुआ पर व्यक्तिगत प्रेम प्रवाह में कोई अन्तर नहीं पड़ा। प्रथम मिलन में ही उनके महान् व्यक्तित्व का मुझ पर अमिट प्रभाव पड़ा। उन पर मेरी श्रद्धा हो गई और मुझ पर उनकी प्रीति। मैंने उनके चरित्र में कृष्ण के निष्काम कर्म का, बुद्ध के संयम, सत्य और अहिंसा का, ईसा की

दया और क्षमा का अद्भुत संयोग पाया। उनको समझने में मुझ से भूल नहीं हुई थी क्योंकि कुछ ही वर्षों के अनन्तर हिन्दुस्तान ने उनको 'दीन-बन्धु' कहकर पुकारा और संसार ने मानवता का पुजारी कहकर।

साधु एण्ड्रूज के साथी श्री डबल्यू० डबल्यू० पियर्सन से भी मेरा परिचय हुआ था और उनके व्यक्तित्व और सुकृत्य से भी मैं प्रभावित हुए बिना न रहा। वह अंग्रेज नर-पुङ्गव इस संसार में नहीं रहे, पर प्रवासी भाइयों के इतिहास में उनका नाम अमर रहेगा। वे बंग भाषा के विशिष्ट विद्वान् थे। महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर के 'गोरा' का उन्होंने बंगला से अंग्रेजी में अनुवाद किया था। वे बड़े पुरुषार्थी और क्रिया-शील व्यक्ति थे। उन्होंने नेटाल में गन्ने की कोठियों में, चाय के बाग़ों में, कोयले की खानों में और भिन्न-भिन्न स्थानों पर पहुँच कर उनकी दशा की पूरी-पूरी जांच की थी और बहुत अच्छी रिपोर्ट तैयार की थी। वे नेटाल की यात्रा के उपरान्त एण्ड्रूज साहब के साथ फ़िजी भी गये थे और उनकी रिपोर्ट प्रकाशित होने पर भारत में ऐसी क्रान्ति मची कि अर्द्ध गुलामी—गिरमिट की प्रचलित—प्रथा का अन्त आ गया।

उन्हीं दिनों हिन्दुस्थान सरकार के प्रतिनिधि सर बेंजामिन राबर्टसन, रायसाहब सरकार और श्री स्लेटर भी फिनिक्स पधारे थे। इनसे भेंट और बात-चीत करके मैं इस परिणाम पर पहुँचा कि ये लोग मानो ब्रिटिश साम्राज्यवाद रूपी विशाल मशीन के कल पुर्जे हैं जो अपनी-अपनी जगह पर जड़े हुए हैं और परिमित परिधि में घूम रहे हैं। इनके पास न मानवी हृदय है और न उसमें परदुःख-कातरता का अभिव्यंजन। सोचा कि बेंजामिन राबर्टसन और स्लेटर भी अंग्रेज हैं तथा एण्ड्रूज और पियर्सन भी अंग्रेज हैं। एक ही पृथ्वी पर जन्मे, एक ही वातावरण में पले; एक ही देश में शिक्षा पाई, पर इनके स्वभाव और चरित्र में कितना अन्तर है? एक ब्रिटिश-साम्राज्यवाद की

शोषण नीति का रक्षक है तो दूसरा भारतीय स्वाधीनता का संदेश-वाहक। ठीक ही है, समुद्र में जहाँ सीप होती है वहीं सीपज भी।

फिनिक्स प्रवास की स्नेहमयी स्मृतियां मेरे जीवन की स्थायी संपत्ति हैं। बापू भारत के वर्तमान युग की आत्मा हैं, इस युग का संदेश उन्हीं की वाणी से निकल रहा है। उनका सहवास एवं सङ्ग किसी के लिये भी सौभाग्य की बात है। यदि मैं उन दिनों की सारी स्मृतियों को लिखने लगूं तो एक पोथी बन सकती है। मेरे जीवन की अन्य चिन्ताएँ मिटी नहीं थी पर बापू के शुभ सङ्ग की कामना से उन्हें पास नहीं फटकने देता था। जब बापू और बा फिनिक्स से सदा के लिये बिदा लेने को प्रस्तुत हो गये तब मेरी चिन्ताएँ भी बलवती हो गईं और मैं भी फिनिक्स से जर्मिस्टन के लिये प्रस्थान कर गया।

(गोस्वामी भवानीदयाल संन्यासी)

समुद्र की आत्मकथा

यदि तुम समग्र पृथ्वी के चार भाग कर डालो; तो तीन भागों में मुझे ही बैठा पाओगे। शेष में तुम्हारी धरती होगी; अर्थात् मैं धरती से प्रायः तिगुना बड़ा हूँ। मेरे जल में इतना नमक घुला हुआ है कि यदि वह निकाल लिया जाय तो समस्त संसार का काम चार सौ बरस तक सुविधापूर्वक चल जाय। नमक की अधिकता के कारण ही तुम मेरा पानी नहीं पी सकते। हां, उसे औटाकर काम में ला सकते हो। जहाज वाले औटाकर ही मेरा पानी काम में लाते हैं। औटाने से नमक बरतन की तली में रह जाता है और खाने के काम में आ सकता है।

मैंने शांत रहना सीखा ही नहीं है। मैं सदा तुम जैसे चंचल लड़कों की नाईं उछलकूद मचाए रहता हूँ। छह घण्टों तक मेरी लहरें धरती की ओर और छह घण्टों तक उलटी बहती हैं। इसी उतार-चढ़ाव को लोग ज्वार भाटा कहते हैं। चौबीस घण्टे में दो बार ज्वार-भाटा आता है। ज्वार भाटे का कारण चन्द्रमा है। पूर्णिमा के दिन

मेरी लहरें बहुत ऊँची उठती हैं. और उस दिन ज्वारभाटे का वेग भी अधिक होता है।

लोगों ने मेरे पांच बड़े-बड़े नाम रख लिये हैं। योरप और अमरीका के बीच मेरा नाम अटलांटिक महासागर है; एशिया और अमरीका के मध्य प्रशान्त महा सागर, अफ्रीका भारतवर्ष और आस्ट्रेलिया के बीच भारत महासागर,उत्तर दक्षिण के ध्रुव देशों में मेरा नाम क्रमशः उत्तर ध्रुव॰ सागर और दक्षिण ध्रुवसागर है। ये भाग महासमुद्र कहाते हैं। छोटे-छोटे भाग समुद्र या सागर के नाम से प्रसिद्ध हैं; जैसे अरब-समुद्र, भूमध्य-सागर, लालसागर। बहुत छोटे भाग को खाड़ी वा आखात कहते हैं जैसे बंगाल की खाड़ी और ईरान का आखात।

सब प्रकार के जहाज मेरे वक्षःस्थल पर दौड़ लगाया करते हैं। कोई-कोई जहाज मेरे वक्षःस्थल को चीर कर, मेरे भीतर भी दौड़ा करते हैं। ये सब मैरीन या पनडुब्बी कहाते हैं। पनडुब्बी युद्ध में काम देती है।

कभी-कभी मैं अपनी लहरें बहुत ऊँचे फेंककर अच्छे-अच्छे जहाजों को मलियामेट कर डालता हूँ। ऐसे समय जहाज अपना बचाव करने के लिये लंगर डालकर ठहर जाते हैं। जहाज पर बैठे हुए आदमियों को चारों ओर जल ही जल दीख पड़ता है। फिर भी जहाज वाले अपना मार्ग नहीं भूलते। दिशा-सूचक यंत्र उन्हें मार्ग का पता बताता रहता है। इसे अंगरेजी में कंपस और हिन्दुस्तानी में कुतुबनुमा कहते हैं। यह यंत्र घड़ी के आकार का होता है। इसमें एक सुई रहती है। तुम इसे ऊंचा, नीचा, उलटा, सीधा जैसा चाहो रखो, पर इसकी सुई की नोक सदा उत्तर दिशा की ओर रहती है। इसी यन्त्र के सहारे दिशाओं का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। जब यह यंत्र नहीं बना था, तब जहाज वाले ध्रुवतारे को देख दिशाओं का पता लगाते

थे। यह तारा उत्तर दिशा में ही रहता है। जहाज चलाने के लिये बहुत से मल्लाहों और खलासियों की आवश्यकता रहती है। इनके सबसे बड़े अफसर को कप्तान कहते हैं।

मुझ में मछली, सांप, मगर, शंख, सीपी 'घोंघा आदि सैकड़ों प्रकार के जीवजन्तु रहते हैं। इन जीवों में ह्वेल सबसे बड़ा है। अष्टपद और शार्क बड़े भयंकर जीव हैं। जिन कौड़ियों से तुम खेला करते हो, वे मेरे यहां के एक जीव की अस्थियां हैं। स्थल पर तुम अपने आराम के लिये बाग़-बगीचे बनाते हो; इधर मैंने भी अपने भीतर जीवों के मनोरंजन के लिये बाग़-बगीचे बना रखे हैं।

तुम गले में मोतियों की माला पहने हो। उन्हें मैं ही सीप से पैदा करता हूँ। मेरी तली में मूंगे भी मिलते हैं। मूंगा एक प्रकार के कीड़ों का घर है। कहीं-कहीं तो इतने मूंगे पाए जाते हैं कि उनके पहाड़ के पहाड़ बन गए हैं, इसी कारण मेरा एक नाम रत्नाकर भी है। मूंगा, मोती निकालने के लिये गोताखोरों को बड़ा कष्ट उठाना पड़ता है। कभी-कभी उन्हें शार्क, अष्टपद आदि मार खाते हैं। इनसे बचने के लिये गोताखोर एक विशेष प्रकार की पोशाक पहरते हैं।

स्याहीचूस के समान एक पदार्थ भी मैं तुम्हें देता हूँ। इसका नाम स्पंज है। यह बर्रं के छत्ते की तरह होता है। इसे मेरा एक कीड़ा बनाता है। स्पंज जल को सुखा लेता है। नदियों के समान सिवाल भी मैं तुम्हें देता हूँ जो सज्जी बनाने के काम आता है। यही मेरी संक्षिप्त कथा है।

कपास की आत्मकथा

मेरी माता का नाम धरती है। वैसे तो तुम भी धरती को माता कहते हो, किंतु मैं तो पैदा ही धरती के उदर से हुई हूँ। मेरी माता ने मेरा सारा भोज्य अपने गर्भ में जोड़ रखा था। मेघ से पानी मिल जाने पर मैं अपने आप ही इस भोजन को प्राप्त करने लग गई।

तुम्हारी माता की तरह मेरी माता के हाथ-पांव नहीं हैं, जिससे वह मेरे मुंह में भोजन डाल देती। इसलिये जन्मते ही मुझे स्वयं हाथ पांव मारने पड़े, मैंने शैशव में ही भोजन की खोज में इधर-उधर हाथ फैलाए, मेरी जड़ के, जो छोटे-छोटे पतले-पतले सूत तुम्हें दीखते हैं, वही मेरे हाथ हैं। इनको कभी न तोड़ना; नहीं तो मैं भूखी मर जाऊँगी। थोड़े दिन गर्भ में रहकर वायु तथा प्रकाश के लिये मैंने अपना सिर धरती से बाहर निकाला। जिस तरह तुम वायु व प्रकाश के बिना नहीं रह सकते, उसी तरह मैं भी इनके बिना नहीं जी सकती। मेरे नाक नहीं हैं। मैं सांस अपने पत्तों व पौधे के छोटे-छोटे छिद्रों में से लेती हूँ। मेरे पत्ते ही मेरे प्राण हैं। भू-गर्भ से जो भोजन मैं अपनी जड़ के द्वारा खींचती हूँ वह पौधे में से होकर ऊपर पत्तों में पहुँचता है। यहीं पर आकर वह वायु व प्रकाश से मिलकर पच्य भोजन का रूप धारण करता है। इसको पचाकर मैं बढ़ती तथा फलती-फूलती हूँ।

फूलने के साथ मेरी कथा एक दुखभरी कहानी में बदल जाती है। मुझ अभागिन को अब कठोर-हृदय मनुष्य ने अपनी दासी बना लिया। अभी तक तो मनुष्य ने मेरे लिये कुछ भी नहीं किया था। बस आषाढ़ के महीने में वह कुछ दाने धरती में डाल कर गया था, और घर जाकर सो गया था। मेघ बरस जाते तो मैं भोजन बटोर लेती, नहीं तो भूखी मरती। हां कभी-कभी आकर वह मेरे प्रतिद्वंद्वी घास फूसों को अवश्य काट जाता था। अब जो मैं अपने परिश्रम से फली-फूली तो वह मेरा स्वामी बन बैठा। सच है, मैं निर्बल थी; निर्बल का दुनिया में कौन होता है?

किंतु यह कहानी अब बीत चुकी है। मेरे दिन बदले, मुझ पर फूल आए, पुष्पित होने पर मुझे बड़ा अभिमान होगया। मैं वायु के झोंकों में बड़े गौरव से लहराने लगी। आते-जाते लोग मेरी प्रशंसा करते। हम बहुत सी बहनें थीं। हमारा घना दल दूर-दूर तक छाया हुआ था।

श्यामम पत्तों पर श्वेत पुष्प ऐसे प्रतीत होते थे, मानों तारक-समूह सहित नील-नभ नीचे गिर पड़ा हो। अब सूर्य की प्रखर किरणें हमें तपाने लगीं। हम समझती थीं कि प्रेम-पीड़ित सूर्य अपने अग्नि-कर पसार कर विवाह-याचना कर रहा था। कुछ भी हो; दिन मजे से गुजरे।

पर सब दिन होत न एक समान

सुख चिरस्थायी नहीं है। थोड़े ही दिनों में गाँव से पाली रात को आ-आकर हम पर आक्रमण करने लगे। मेरी बहुत सी बहनों को पौधों से तोड़कर ले गए। गाँव में जाकर वह उन्हें बनिये की दुकान पर बेच देते और मूंगफलियां तथा बताशे ले आते। एक दिन क्या देखती हूँ, किसान अपनी स्त्री-बच्चों समेत आ धमका। वे सब के सब हमें चुनने लगे। घर लेजाकर हमें एक कोठे में बंद कर दिया गया। वहां पर मेरी बहुत सी बहनें पहले ही से आई हुई थीं। इसलिये कोठे में बड़ी भीड़ हो गई। सांस भी कठिनाई से आता था। थोड़े दिनों के कारावास के पश्चात् हमें बैलगाड़ियों में लादा गया। उस रात गांव की बहुत सी गाड़ियों को शहर जाना था। इसलिये बहुत से गाड़ी वाले इकट्ठे हो गए। वह हंसते-हंसते हमें प्रातःकाल ही शहर ले पहुंचे। शहर में हमें एक बड़े कारखाने में उतार दिया गया। अब मैं डरती थी कि पता नहीं भाग्य में और क्या लिखा है? अपने पुराने स्वामी में मेरी भक्ति हो गई थी। वह सीधा था भोला भाला था और हमें बड़े लाड़ चाव से रखता था। उसकी स्त्री तो मुझे बहुत ही प्यारी लगती थी। वह प्रति दिन कोठार खोलकर हमें संभालती थी। जब कोई बालक हमारी कोमलता से आकृष्ट हो हमारे ऊपर आ चढ़ता तो वह झट से उसे हम पर से उतार देती। वहां दिन भर हमारी चर्चा रहती। उस घर से मुझे प्रेम हो गया था।

शहर में आते ही बनिये ने हमें एक मशीन में धकेल दिया। मैं खूब पीसी गई। ऐसी पीड़ा मैंने कभी न भोगी थी। यदि तुम उस

मशीन में दिये जाओ तो तुरन्त मर जाओ। किंतु मेरा तन बड़ा नर्म है; इस नम्रता ने ही मुझे वहां भी बचाया। किंतु मशीन से निकलते ही मैं हलकी हो गई। अब मेरा गात्र पुष्प से भी अधिक कोमल और हलका हो गया। मेरे भीतर जो ठोस बीज था वह निकाल लिया गया। इस बीज को बिनौला कहते हैं। यह भैंसों को खिलाया जाता है। जो घी तुम खाते हो वह मेरे बिनौलों से ही बना है।

इस संस्कार के पश्चात् मैंने लंबी यात्रा आरम्भ की। मुझे रेलगाड़ी में बिठाकर बंबई पहुँचाया गया। रेलयात्रा मैंने पहली ही बार की थी। बड़ी अच्छी लगी और मैं शीघ्र ही बंबई आ पहुंची। यहां पर हमारे बहुत से गट्ठे बंधे पड़े थे। एक बड़े भारी जहाज़ में हमें लादा गया। अपनी जन्मभूमि छोड़ने का विचार आते ही मुझे बड़ा शोक हुआ। अथाह समुद्र के हजारों मील आगे पड़े थे। न जाने रास्ते में क्या-क्या भय हों? किंतु क्या कर सकती थी! अबला थी। कितने हाथों बिक चुकी थी, और कितने हाथों और बिकना था? छाती पर मुक्का मार कर बैठ रही।

अब मैं मांचेस्टर पहुंची। यह इंगलड का विशाल नगर है। दूर से ही अनेक चिमनियां दिखाई देती हैं। उनके धुएं के बादल आकाश में छाए होते हैं। मुझे एक मिल में पहुंचा दिया गया। मिल में बड़ा कोलाहल था। लोहे की बड़ी-बड़ी विशाल मशीनें काले-काले राक्षसों के समान द्रुत गति से घूम रही थीं। मनुष्य रंग के तो गोरे थे, किंतु बड़े दुबले-पतले थे। मलिन वस्त्र पहने हुए थे। उनके चेहरे शून्य थे। लोहे से मिलकर वह लोहा ही हो गए थे। हमारे सौन्दर्य, कोमलता अथवा नम्रता की ओर उनका कोई ध्यान न गया। एक निष्ठुर ने मुझे उठाया और मशीन में दे दिया। मेरा शरीर मेरी बहनों के शरीर से तो पहले ही छूट चुका था। अब हम सब को लंबे-लंबे तारों में खींचा गया। खिंचते-खिंचते बहुत धागे बन गए। कुछ धागों

की लड़ियां बनाकर बाहर भेज दिया गया। किंतु हमें एक और मशीन पर ताना गया और मुझ जैसे अनेक धागों से मिलकर हमारा एक बड़ा अच्छा कपड़ा तैयार हो गया।

कपड़ा बनते ही हमें फिर भारत लौटा दिया गया। पहले तो मैं बंबई की एक बड़ी दूकान पर पहुँची, किंतु थोड़े ही दिन पश्चात् एक छोटे से नगर की एक छोटी दूकान पर भेजी गई। यहां मैं बहुत दिन पड़ी रही। इस बनिये की बिक्री बहुत थोड़ी थी। मेरा गाहक लगता भी तो मूल्य सुनकर लौट जाता। आखिर एक नवयुवक बाबू आया और मुझे ले गया। उसने मुझे दरजी के यहां दे दिया। दरजी बड़ा दुष्ट था। उसने हमारी दुर्गति की। कुछ बहनों को तो कैंची से काटकर फैंक दिया। हमारे शरीर को सूई से छेद दिया। सूई शरीर के आरपार निकल जाती थी। परमात्मा इस दुष्ट को अपने किये का फल देगा।

किंतु दरजी ने मेरी काया-पलट अवश्य कर दी। अब वह नवयुवक मुझ से बड़ा प्रेम करने लगा। क्यों न करता? उसके शरीर की शोभा को तो मैं ही बढ़ाती थी। हमारा आपस में बड़ा संबन्ध हो गया और मैं जीर्ण-शीर्ण होकर ही उसके शरीर से पृथक् हुई। मुझे सारे जीवन में दो बार ही प्रेम का अनुभव हुआ है। एक तो किसान के कुटुंब के साथ, दूसरा इस नवयुवक के साथ।

ख़ैर, जब मैं छिन्न-भिन्न हो गई तब इस नवयुवक ने भी मुझे उतार दिया। मैं इधर-उधर गलियों में ठोकरें खाती रही। हा दैव! यह दिन भी देखने पड़े।

एक दिन एक पुरुष मुझे उठाकर ले गया। उसके घर में और भी मेरी तरह विपन्न बहनें पड़ी थीं। हम सब को टीटागढ़ ले जाया गया। वहां पर हमें पानी में गलाया गया और गलाकर कागज़ के रूप में परिणत किया गया। फिर छापेखाने में जाकर मेरे मुंह को काले अक्षरों से कील दिया। मैंने इस बात को पसंद न किया, किंतु फिर

विचार आया कि इस तरह से मैं संसार की सब से बड़ी सेवा करने चली हूँ। इस सेवा के लिये रूप-शृंगार त्याग दिया तो क्या हुआ? अन्त में मैं एक पुस्तक का पृष्ठ बन गई और पुस्तकालय में भेजी गई। मुझे हजारों आदमियों ने पढ़कर आनन्दलाभ किया। अब मैं बूढ़ी हो चली, किंतु अपने जीवन को सफल समझती थी। जब वह पुस्तक बेकार हो गई तो फिर इसको टीटागढ़ ले जाया गया। वहीं हमारा पुनर्जन्म होता है। यहाँ से नई बनकर फिर एक और पुस्तक का पृष्ठ बनी। फिर हजारों आदमियों ने मुझे पढ़ा। आगे और भी न जाने कितने जन्म लूंगी और न जाने कितनी साहित्य-सेवा करूंगी।

अब तुम जान गए होगे कि सभ्यता के प्रसार में मेरा कितना हाथ है। मैं न होती, तो या तो तुम वलकल पहनते अथवा ऊन के कपड़े। गरमियों में ऊन के कपड़े कौन पहर सकता है? यदि पहने भी तो इस काम के लिये और कितनी भेड़ पालनी पड़ें। साथ ही ऊन बहुत मंहगी है; मेरे न होने पर तो गरीब आदमियों को नंगे फिरना पड़ता। सरदियों में तुम्हारी रजाइयों में होती हूँ और तुम्हें सरदी से बचाती हूँ। सारे संसार का वेष-सौन्दर्य मुझ पर निर्भर है। फिर कागज़ बनकर मैंने सभ्यता की जितनी वृद्धि की है, उसका अनुमान स्वयं लगा सकते हो। मेरे बिनौले का तुम घी खाते हो और उससे पुष्ट बनते हो। बिनौलों से ही बारूद बनाते हो और शत्रुओं से अपनी रक्षा करते हो।

जल की आत्मकथा

मेरा नाम संस्कृत में जल, हिन्दी में पानी, फ़ारसी में आब और अंग्रेज़ी में वाटर है। मेरी माता का नाम हाइड्रोजन और पिता का नाम आक्सीजन है। ईश्वर ने मुझे अधिक प्यारा समझ संसार में उपकार करने को भेजा है। यदि मैं न होऊँ तो वनस्पति, प्राणी और अनेक पदार्थों का पता न लगे।

ईश्वर ने मुझे संसार में भेजते समय अपने कुछ गुण उधार दे दिये हैं। इसी से मैं प्रायः सर्वव्यापक और अनेक रूप वाला हूँ। नाना प्रकार के रूप धारण कर संसार का उपकार करता हुआ मैं निरन्तर विचरता रहता हूँ। मैं अकेला पूरा काम नहीं कर सकता, इस लिये ईश्वर ने मुझे एक सहायक और दिया है, जिसकी सहायता से मैं बड़े-बड़े अनोखे काम करता रहता हूँ। मेरे सहायक का नाम उष्णता है।

मेरा सहायक मुझ से भी बढ़कर गुणवान् है और होना भी ऐसा ही चाहिये। क्या यह देखने में नहीं आता कि बड़े-बड़े राजाओं के राज्य की पोल उनके चतुर सहायकों के कारण नहीं खुल पाती।

उष्णता भी अनेक रूप धारण कर दिलोजान से मेरी सहायता करती है। इसमें अद्भुत गुण यह है कि यह अदृश्य है और इसमें कुछ बोझ नहीं। इन्हीं दो गुणों से मुझे अत्यन्त सहायता मिलती है। यदि उष्णता मुझे सहायता न दे, तो मैं अपना रूप नहीं बदल सकता, और न संसार में इतना उपकार ही कर सकता हूँ। मेरे तीन रूप हैं:—

हिम, जल और वाष्प

हिमावस्था में मेरे मुख्य निवासस्थान उत्तरीय और दक्षिणीय ध्रुव हैं। पृथ्वी के ऊंचे-ऊंचे पर्वतों के सिर पर भी मैं रहता हूँ। इनमें मुख्य स्थान भारत के उत्तर में एक पर्वत है, जिसे मेरे ही कारण लोग हिमालय कहते हैं। उष्णता की सहायता से मैं इस पर्वत से उतर कर गङ्गा, यमुना आदि नदियों में बारहों मास बहता रहता हूँ। उद्योग ही सर्वप्रधान प्रिय वस्तु है, यह विचार कर पर्वतों पर मैं चुप नहीं बैठा रहता। उष्णता की पहुँच से पहले ही मैं सरकने लगता हूँ। तब लोग मुझे ग्लेशियर कहते हैं। तब मेरी रगड़ से पर्वतों से पत्थरों

के बड़े-बड़े चट्टान टूट गिरते हैं, जिन्हें मैदान में लाते-लाते मैं कंकड़ बना देता हूँ।

पर्वतों के तोड़ने का मेरे पास एक उपाय और है। उष्णता की सहायता से मैं पर्वतों की दरारों में घुस जाता हूँ। फिर उष्णता के चले जाने पर मैं फूलने लगता हूँ और पर्वतों के टुकड़े-टुकड़े कर देता हूँ। हिमावस्था में मैं समुद्र के जल से हलका रहता हूँ, इसीलिये कभी-कभी मेरा पर्वताकार शरीर समुद्र पर बहता हुआ दिखाई देता है। जब मल्लाह लोग आँख मींचकर काम करते हैं, तब उनका जहाज़ मुझ से टकराकर नष्ट हो जाता है। ग्रीष्मकाल में जब उष्णता लोगों को बहुत सताने लगती है, तो उसे समझाने के लिये वे मुझे हिमरूप में अपने पेट में भेजना चाहते हैं। प्रायः पेट में जाने के बाद ही मैं उष्णता को सोडा, लेमोनेड, या स्वच्छ जल के ग्लास से ही समझा बुझा कर शान्त करने लगता हूँ।

ठंड के दिनों में रात्रि के समय मोतियों का रूप धारण कर मैं पत्तों तथा घास आदि पर जा बैठता हूँ; तब मेरा नाम ओस पड़ता है। परंतु कभी-कभी अधिक सर्दी पड़ने से मैं जम जाता हूँ; तब लोग मुझे पाला या तुसार कहने लगते हैं। मुझे मेरे मां-बाप हाइड्रोजन और आक्सीजन ने पैदा किया और पाला है। फिर मेरी समझ में नहीं आता कि ये लोग मुझे पाला क्यों कहते हैं। बस, इसी बात पर चिढ़कर मैं उनकी खेती का नाश करने लगता हूँ। हिम की अवस्था में मुझमें एक गुण और भी है। यदि मेरे दो टुकड़े खूब जोर से दबाओ, तो मैं जुड़ भी जाता हूँ, ठंडे देशों में छोटे बालक इसी तरह मेरी गेंदें बनाकर खेलते हैं।

हिमावस्था में यदि मुझ पर शोरा, लवण आदि छिड़का जाय तो मैं और भी ठंडा हो जाता हूँ। फिर लोग मेरे शरीर में दूध की कुल्फियां गाड़-गाड़ मलाई की कुल्फियां बनाते हैं। आकाश से जब मैं

हिमत्राणों के रूप में गिरता हूँ उस समय यदि कोई मुझे सूक्ष्मदर्शक यन्त्र से देखे, तो नाना प्रकार के सुन्दर और सुडौल दाने देखकर अचम्भा करेगा।

साधारणतः मैं द्रवावस्था में पाया जाता हूँ। इस रूप में, मैं और भी अधिक चमत्कार दिखाता हूँ। स्मरण रहे, मैं पहले कह चुका हूँ कि उष्णता की सहायता से मैं हिमरूप छोड़कर जलरूप धारण करता हूँ। जिन्हें विश्वास न हो वे इस तरह मेरी बात की सचाई परख सकते हैं। हिमावस्था में मेरा एक टुकड़ा लो, छूकर देखो कि मैं कितना ठंडा हूँ; फिर बरतन में रखकर नीचे से आँच लगाओ। सारा गल चुकने से जरा पहले फिर स्पर्श कर देखो कि द्रवावस्था में भी मैं उतना ही ठंडा हूँ। अच्छा, तो जो आंच दी गई उसका क्या हुआ? वह हिमावस्था से जलावस्था में लाने पर अंतर्धान हो गई। एक बात और है। हिमावस्था से तरलावस्था में आने पर मैं शरीर में कुछ कम हो जाता हूँ। चाहो, देख लो, गिलास भर बर्फ का गिलास भर पानी न बनेगा। परंतु लगातार उष्णता देने पर फिर मैं बढ़ने लगता हूँ। मेरे इसी गुण से समुद्र, नदी, नालों के जीवजन्तु शीतकाल में बर्फ जम जाने पर भी नहीं मरते।

तरलावस्था में मेरा बसेरा नदी-नाले, कुआं-तालाब, झील-झरनों, और समुद्रों में होता है। शीतकाल में वहां मैं सिकुड़ कर तंग आजाता हूँ, तो निडर शीत का सामना करता हूँ। अभय होने की खुशी में मैं खूब फैलकर ऊपर बहने लगता हूँ और शीत को अपने आर-पार नहीं जाने देता, जिससे नीचे के जीवों का बचाव होता है।

इसी रूप में, मुझ में, एक यह गुण भी होता है कि मैं कई पदार्थों को अदृश्य कर देता हूँ। क्या यह बाज़ीगर के खेल से कम तमाशा है? मिश्री की एक डली मेरे हाथ में दे दो, फिर क्या मजाल कि थोड़ी देर बाद उसका पता लग सके। इतना ही नहीं, यदि

तुम उष्णता को मेरी सहायता के लिये भेज दो, तो एक नहीं, कई डलियां हड़प जाऊँगा। इस इन्द्रजाल की कुंजी मैं तुमको बताए देता हूँ। मैं ऐसे पदार्थों के अनन्त अंश कर अपने में मिला लेता हूँ।

मुझे जिह्वा पर रखो, स्वाद अदृश्य पदार्थ का आवेगा, अर्थात् मैं पदार्थों को अदृश्य बना देता हूँ। यद्यपि पदार्थ वहीं रहते हैं। इसकी पहचान यह है कि प्रायः पदार्थ अपना रंग-स्वाद मुझे अर्पण कर देते हैं। कई पदार्थों का रासायनिक प्रयोग भी मेरे द्वारा होता है। सूखे चूने और नौसादर को मिलाओ, कुछ भी न होगा। परंतु ज़रा मुझे प्रवेश करने दो, क्या रंगत दिखाता हूँ। फौरन सिर का दर्द मिटाने वाला अमोनिया गैस निकाल बाहर करता हूँ। सोडे और फटकरी को मिलाओ, कुछ न होगा; परंतु मेरे एक हाथ में सोडा दो, दूसरे में फिटकरी; दोनों हाथों को मिलाते ही एक नया पदार्थ बन जाता है।

मैं बड़ा बलवान् हूँ। किसी को हाथी पर चढ़ाऊँ, किसी को ऐसा पछाड़ूं कि जन्म भर याद रखे। गंधक का तेजाब मनुष्य नहीं पी सकता; किंतु जब मैं उसके पास जाकर एक पछाड़ बताता हूँ तो उसकी हड्डियों को चूर्ण कर देता हूँ। फिर मनुष्य उसका जो चाहे करे। इस झगड़े में मुझे बड़ा जोश आता है। शरीर में उष्णता इतनी बढ़ जाती है कि मैं वाष्परूप होकर कूदने तक लगता हूँ। जिस तरह मैं किसी का ज़ोर तोड़ता हूँ, वैसे ही किसी-किसी को बल-प्रदान भी करता हूँ।

होमियोपेथों से पूछो; जितना मेरा अंश बढ़ाते हैं, उतना ही मैं ओषधि का बल बढ़ाता हूँ। प्रकाश भी मुझ से मिलकर अद्भुत चमत्कार दिखाता है। रंग-बिरंगी शीशियों में मुझे बंद रखकर लोग मनुष्य-जाति के नाना प्रकार के रोगों को मिटाते हैं। साधारणतया मेरा रंग सफेद है; परंतु नदी और समुद्रों में, जहां मैं बहुत मोटा

होता हूँ, मेरा रंग नीला दिखाई देता है, जिसे लोग भूल से आकाश का प्रतिबिंब भी कहते हैं।

मैं निराकार हूँ, व्यापक हूँ, स्वादरहित हूँ। लोग मुझे मीठा या खारा कहते हैं। मीठापन या खारापन मेरा गुण नहीं है, किंतु मेरे हृदय से लिपटे हुए मेरे मित्रों का है। 'संग तारे कुसंग डोबे'—मित्रों के भले बुरे होने से मुझे भी भला बुरा कहाना पड़ता है। जिन लोगों को मित्रता सीखनी हो मुझ से और मेरे पूर्ण स्नेही मित्र दूध से सीखें। संयोग होने के बाद वियोग हमको बहुत बुरा मालूम होता है; यहां तक कि नाक में दम हो जाता है। जब निर्दय लोग दूध से मेरा बिछोह कराना चाहते हैं, तब दूध आग में जल मरने को तैयार होता है, किंतु दूर से ही मेरी लौटनी सूरत देखकर प्रसन्न चित्त हो जाता है।

जे एम एम गहलौत

यमुना की आत्मकथा

हिमालय पर्वत-श्रेणी के उच्चतम शिखर सदा हिमाच्छन्न रहते हैं। वर्षों से एकत्र हुई बर्फ कालान्तर में एक हिमसरिता के रूप में शनैः-शनैः फिसलती हुई तराई में आ पहुँची। यहां सूर्यताप से द्रवीभूत हो उसने मुझे जन्म दिया। मैं तत्काल ही स्वजननी का साथ छोड़ एक क्षुद्र जलधारा बनकर बह निकली।

मेरी जीवन-यात्रा आरम्भ हो गई। मेरे दोनों ओर महाकाय भूधर अभिमान-पूर्वक शीश उठाए खड़े थे। ऐसा प्रतीत होता था कि मानों मेरी माता की अनुपस्थिति में उन्होंने मुझ असहाय शिशु की रक्षा का भार अपने ऊपर ले लिया हो। उनके गगनचुंबी धवल श्रृङ्ग चांदी की भांति भासमान होते थे। उनकी कटि में मेघरूपी दुपट्टा बंधा हुआ था। मैं इनकी संरक्षकता में उछलती-कूदती चली जाती थी कन्दराओं में रहने वाली अश्वमुखी किंनर स्त्रियों की भांति-भांति की क्रीडाएँ निहारकर मैं हर्ष से पुलकित हो जाती थी। उनके मधुर गान

पर मैं थिरक-थिरक कर नाच उठती थी। परंतु मेरा मार्ग निपट सुखमय नहीं था। पाषाणहृदय चट्टानें मेरे मार्ग में अनेक विघ्न-बाधाएँ डालती थीं। कभी-कभी तो मैं चुपचाप उनका यह अभ्यास सहन कर लेती, एवं अपना पथ बदल देती थी। किंतु कभी-कभी मैं क्रुद्ध हो उनके साथ घमासान युद्ध करती थी। ज्ञात नहीं उस समय मुझ में कहां से इतना बल आ जाता था। किसी गुह्य शक्ति की सहायता से मैं उनका शीश फोड़कर उन्हें पदतल से कुचलती हुई आगे चली जाती थी। उस समय मैं विजय-मद-मत्त हो घोर शब्द करती हुई अत्यन्त वेग से बहती थी। कभी-कभी मुझे किसी ध्यानस्थ महात्मा के भी दर्शन हो जाते थे। उनकी शान्त मूर्ति देख मैं अपनी उग्रता पर पश्चात्ताप करती थी, किंतु उन दिनों मैं अपने नटखट स्वभाव से लाचार थी।

शैवालिक पर्वतों के मध्य में से होती हुई मैं एक निबिड कानन में आई। वहाँ विशाल वृक्षों के अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु दृष्टिगोचर न होती थी। इनमें से जो भी मेरे मार्ग में आते, उन्हें मैं समूल उन्मूलित कर देती थी। कतिपय तरुवर अपनी शाखाभुजाओं से मुझे आलिंगन करने की इच्छा प्रकट करते थे, परंतु मैं चंचल नारी की भांति झटपट उनके बाहुबन्धन से निकल भागती थी। हाँ, अपनी इच्छा होने पर मैं उनके साथ भांति-भांति की किलोलें करती थी। अन्य पशु आकर मेरा जलपान किया करते थे।

उक्त वन में से निकलकर मैंने मैदान में प्रवेश किया। यहाँ मेरा नामकरण संस्कार हुआ और मैं यमुना के नाम से पुकारी जाने लगी। अब मैंने शैशव त्यागकर युवावस्था में पदार्पण किया। बाल्यकाल की चंचलता लुप्त हो गई और मैं गंभीर भाव से बहने लगी। मेरा शरीर पहले से अधिक सुन्दर तथा पुष्ट हो गया। श्यामवर्ण ओढ़नी पहर मैं एक नवोढा की भांति मदमाती गति से चलने लगी। कतिपय लहलहाते

खेत पार करती हुई मैं जगद्विख्यात देहली-नगर में पहुँची। यहाँ की शोभा निरख मैं आश्चर्यान्वित हो अत्यन्त मन्दगति से बहने लगी। पुरवासियों का वैभव, उनकी सुसज्जित गगनचुंबी अट्टालिकाएँ तथा अमूल्य वस्त्राभूषण सचमुच मुझे प्यारे लगते थे। इसी स्थान पर आकर सब से प्रथम मुझे अपने गौरव का ज्ञान हुआ। नित्यप्रति असंख्य नरनारी आकर मेरे जल में स्नान करते तथा मेरी महिमा का गान करते थे। मैं भी अपने भक्तों को यथाशक्ति प्रसन्न करती थी। परंतु इस आनन्दमय जीवन से संतुष्ट न हो मैं आगे बढ़ी। मैं अनेक गाँवों में घूमी फिरी। ग्रामीण जनों के आर्जव, माधुर्य, एवं उनके संतुष्ट जीवन पर मैं मोहित हो गई, और नहरों के रूप में इनके पास अपने स्मृतिचिन्ह छोड़ गई।

कुछ आगे बढ़कर मैंने मथुरानगरी में प्रवेश किया। यहाँ का दृश्य देहली से कहीं अधिक मनोरंजक था। यहाँ मेरा अत्यधिक संमान हुआ। मेरे तट पर कतिपय साधुजन भगवद्भजन में लीन थे। हर घड़ी स्त्री-पुरुषों का जमघट लगा रहता था। संध्या समय वे मेरे कृष्णांबर पर उज्वल दीपों के सितारे लगा देते थे, तब मैं हर्ष से पुलकित हो उठती थी। सहस्रों दीपकों के प्रकाश में मेरे मुख पर हास्यरेखा झलक पड़ती थी। कुञ्ज-निकुञ्जों में कृष्णलीला के मनोहर दृश्य, मंदिरों के घण्टों की ध्वनि, भक्तों के मधुर कण्ठ से गाई हुई आरती तथा पक्षिगण का कलकूजन मुझे उन्मत्त कर देते थे। उठने वाली ऊर्मियों के रूप में अपने अस्तव्यस्त वसनों को समेटती हुई मैं आगे बढ़ी और आगरे जा पहुँची। यहां का वातावरण मथुरापुरी से भिन्न था। मन्दिरों के स्थान पर मेरे तट पर मुगल सम्राज्ञी मुमताज महल का स्मारक ताजमहल स्थापित था। इसकी शोभा अवर्णनीय थी। मैं इसके पैर धोती हुई कलकल रव कर बहने लगी। पूर्णिमा की रात्रि में हम दोनों का सौन्दर्य चौगुना हो जाता था। उस समय चन्द्र-ज्योत्स्ना मेरे

वक्षःस्थल पर नाचती हुई मेरे श्याम स्वरूप को और भी अधिक सजा देती थी। मेरे जल में झलकता हुआ ताज का प्रतिबिंब वास्तविक ताज से अधिक सुन्दर प्रतीत होता था। ताज का संसर्ग मेरे सौन्दर्य का वर्धक था। इस प्रकार पूर्णिमा की रात्रि में मेरे एवं ताज के बीच एक विचित्र संबन्ध स्थापित हो जाता था।

अब मैं अत्यन्त प्रसिद्ध हो गई थी। देशदेशान्तर के मनुष्य मेरे नाम से परिचित हो गए थे। मैं कवियों की बहुत लाडली थी। वे मुझे भांति-भांति के नामों से पुकारते थे। मेरा यशोगान सुन विन्ध्याचल पुत्री चंबल मित्रता करने के आशय से मेरे पास आई, एवं मुझ में मिल गई। मैं उसे लेकर बहने लगी। अब मेरी यात्रा का अन्त आ गया। हम दोनों सखियों ने प्रयागतीर्थ में प्रवेश किया। यहां पर मेरी भागीरथी एवं उसकी सखी सरस्वती से भेंट हुई और मैं चंबल के साथ उसमें जा मिली। मेरा नाम तथा अस्तित्व सब लुप्त हो गया। सुरसरिता के सहवास से मेरे भाग्य का सितारा अत्यधिक जगमगा उठा। सच है, हीरे के संसर्ग से कंचन अधिक मूल्यवान बन जाता है।

उत्तरी ध्रुव के यात्री

इस संसार में मनुष्य सबसे बड़ी शक्ति है। जल, थल, वायु, पर्वत सब पर उसका आतंक छाया हुआ है। प्रकृति के सकल भेद उसके सामने हाथ की हथेली के समान खुले पड़े हैं। यदि वह कहीं ऐसी बात की भिनक पा ले, जो उससे गुप्त है, तो वह उसके पीछे हाथ धोकर पड़ जाता है, और जब तक उस गुत्थी को सुलझा न ले, दम नहीं लेता। ऐसा ही उत्तरी ध्रुव के साथ हुआ।

हमारी पृथ्वी के ठीक उत्तर में एक बर्फीला समुद्र है; जिसके बीचोंबीच भूमि का एक खण्ड है, जिसे उत्तरी ध्रुव प्रदेश कहते हैं; और इस पृथ्वी के ठीक उत्तरी सिरे को उत्तरी ध्रुव। इस हिम-सागर तथा भूमि-खण्ड का सभ्य संसार को कोई पता न था; केवल नाम

मात्र से ही परिचय था। साहसी तथा वीर सज्जनों में ध्रुव प्रदेश की खोज की धुन समा गई। कई मनचले तो उत्तरी ध्रुव तक पहुँचने और इस पृथ्वी के ठीक सिर पर खड़ा होने का प्रयत्न करने लगे।

इस देश की खोज करना कोई आसान काम न था। यह प्रदेश बर्फीले समुद्रों से घिरा हुआ है। इस देश की भूमि भी बर्फ से ढकी रहती है। जहाँ ऐसे समुद्रों में जहाज़ों के लिए गुज़रना कठिन होता है, वहाँ ऐसे देश में मार्ग न होने के कारण में कठिनाई होती है। इतना ही नहीं समुद्रों में बर्फ के तोदे तैरते फिरते हैं। यदि यह तोदे जहाज़ से टकरा जायँ तो जहाज़ टुकड़े-टुकड़े हो जाय। बर्फ में जहाज़ के जकड़ जाने का भय तो हर घड़ी लगा ही रहता है।

और लो, यह देश अन्न-जन-हीन है। वहाँ यात्रियों के लिए कोई सुभीता नहीं, प्रत्येक सामग्री घर से साथ लेकर चलना पड़ता है। कई वर्षों के लिए सामान जुटाना पड़ता है। यदि यह सामग्री कहीं मार्ग में नष्ट हो जाय या समाप्त हो जाय तो यात्रियों के लिए भूखों मर जाने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं रहता। पर इन सबसे बड़ी कठिनाई एक और है। वहाँ बड़ा भयंकर शीत होता है। वहाँ गर्मी, सर्दी व बहार—सब ऋतुएँ एक सी होती हैं। सारा वर्ष ठण्डक पड़ती है, और वह भी इतनी तीव्र कि यदि कोई व्यक्ति हाथ में दस्ताने व पाँव में मौज़े पहने बिना बाहर निकले तो उसके हाथ-पाँव की अँगुलियाँ गल कर गिर जाती हैं। यहाँ बर्फ की आँधियाँ चलती हैं। इन आँधियों से यात्री आँखों से हाथ धो बैठते हैं। ऐसा है ध्रुव प्रदेश, ज़िसकी खोज का बीड़ा साहसी पुरुषों ने उठाया। कई वीरों ने यात्राएँ कीं, कष्ट सहे, कई अपने प्राणों की आहुति दे बैठे।

१९ वीं शताब्दी के प्रारम्भ में उत्तरी ध्रुव की खोज का काम नियमित रूप से आरम्भ हुआ।

रास और पैरी प्रसिद्ध अंग्रेज़ खोजी थे। दो बार ध्रुव देश की ओर गये। कष्ट पर कष्ट सहे, पर ध्रुव तक न पहुँच सके। दूसरी यात्रा में तो इन्हें पाँच साथी वीरों को ध्रुव की भेंट करना पड़ा।

इनके साथ फ्रैंकलन का नाम भी प्रसिद्ध है। जब यह दोनों पहली बार ध्रुव की खोज करने निकले थे, तो ऐसे गुम हुए कि इनकी खोज के लिये एक और साहसी वीर घर से निकला। यह फ्रैंकलन था। इसने उनसे भी अधिक कष्ट उठाया। इसका जहाज़ बर्फ़ में जकड़ गया। ईंधन समाप्त हो गया। बर्फ़ की आँधी में भोजन की सामग्री नष्ट हो गई, तो विवश होकर लौटना पड़ा। रास्ते में अपने डेरे पर पहुँचा, तो इसके साथी इसकी प्रतीक्षा करने के बाद जा चुके थे। वह हताश हो गया और मौत आँखों के आगे नाचने लगी। ईश्वर को इसे जीवित रखना स्वीकार था। इसका एक साथी इसकी खोज में आ निकला और फ्रैंकलन के प्राण बच गये। फ्रैंकलन इस बार तो बच गया; पर कई वर्षों के बाद वह फिर इस यात्रा पर निकला, पर इस बार ऐसा गया, कि फिर न आया।

नार्वे के नैनसन और अमण्डसेन नाम के खोजी प्रसिद्ध हैं। नैनसन ने दो बार यात्रा की। यद्यपि असफल रहे फिर भी इन्होंने कई बातों की खोज की। अमण्डसेन ने उत्तरी अमेरिका के उत्तरी तट के साथ-साथ यात्रा करके उत्तर पश्चिम की राह से प्रशान्त महासागर में प्रवेश करने की राह ढूँढ़ निकाली। इस महान् कार्य से इनकी ख्याति दूर-दूर फैल गई। अब वीर अमण्डसेन ने उत्तरी ध्रुव जाने की ठानी। एक चक्कर लगाया पर सफलता प्राप्त न हुई। दूसरी यात्रा की तैयारी में लग गया। तैयारियाँ पूरी हो चुकी थीं कि संसार ने सुन लिया कि पियरी ने उत्तरी ध्रुव की खोज कर ली है।

यह वीर पियरी अमेरिका का निवासी था। पियरी बड़ा परिश्रमी और सुयोग्य युवक था। १४ वर्ष की आयु में ही ग्रेजुएट बन गया

था। २६ वर्ष का हुआ तो देश की जल-सेना में कप्तान नियुक्त हुआ। इस अवस्था में पियरी ने कई समुद्र-यात्राएं कीं और उसको समुद्र तथा समुद्र-जीवन से प्रेम हो गया।

पियरी ने सुना कि साहसी पुरुष उत्तरी ध्रुव की खोज कर रहे हैं। इसने उनकी वीरता की कहानियाँ सुनीं तो मुग्ध हो गया। सहसा इसके मन में उत्तरी ध्रुव की खोज करने का विचार उत्पन्न हुआ। बस फिर क्या था, साहसी वीर ने कमर बाँध ली।

पियरी ने उत्तरी समुद्रों में कई यात्राएं कीं। इन यात्राओं में पियरी ने कई खोजें कीं, और वह इस हिम-आच्छादित प्रदेश के जीवन से भी परिचित हो गया। इस खोज के लिए अपने आपको पूर्ण रूप से तैयार करने के लिए, पियरी ने कई वर्ष इस प्रदेश के निवासियों के साथ गुज़ारे।

१८६१ में पहली बार पियरी उत्तरी ध्रुव की खोज में निकला। इसके साथ इसकी स्त्री भी थी—वीर पति की वीरा स्त्री। यात्री ध्रुव तक न पहुँच सके और लौटना पड़ा। नई यात्रा के लिए नई तैयारियाँ आरम्भ हुईं। इस यात्रा में उसने बर्फ की गाड़ियों से सहायता ली। उस प्रदेश के निवासियों एस्कीमो से भी सहायता ली। लगातार चार वर्ष खोज में लगा रहा। पहिले वर्ष में ही इसके पाँव की आठ अंगुलियाँ गलकर गिर गईं। इसी प्रकार के अन्य अनेक कष्ट सहे, पर ध्रुव तक न पहुँच सका।

तीसरी और फिर चौथी बार यात्रा पर निकला। प्रत्येक बार ध्रुव के समीप होता गया। पर वहाँ तक पहुँचने में सफलता प्राप्त न हुई। अमेरिका की सरकार ने उसकी वीरता पर मुग्ध होकर वीर पियरी को कमाण्डर की उपाधि दी।

कमाण्डर पियरी पाँचवीं बार निकला और इस बार सफल हुआ। १६०८ में वीर साथियों को साथ लेकर, रूज़वेल्ट जहाज़ में चला।

ध्रुव के समीप पहुँच कर जहाज़ छोड़ दिया। ७ खोजी, और एस्कीमो साथ लिये। बर्फ़ पर यात्रा के लिए १६ बर्फ़ की गाड़ियाँ और उनको खींचने के लिए १३३ कुली लिये।

पियरी ने इन सबको ६ दलों में बाँटा, जिससे कि एक के पीछे दूसरा दल आवे, और अगले दल के लिए सामग्री तथा अन्य आवश्यक चीज़ें लेता आवे। इस प्रकार यह काफ़िला बढ़ने लगा। ध्रुव निकट से निकट आने लगा।

ध्रुव तीन साढ़े तीन मील दूर रह गया। पियरी के साथी थक चुके थे। उसने उन सबको वहाँ ठहराया, और केवल एक साथी हैनसन को साथ लेकर ध्रुव की ओर चला। लगातार चलता गया। अब ऐसा हुआ कि वह उत्तरी ध्रुव से आगे निकल गया। फिर लौटा और ६ अप्रैल को ध्रुव पर पहुँच गया। वहाँ उसने अपने देश का झंडा लहराया, और प्रभु को धन्यवाद दिया।

३२ वर्ष की लगातार कोशिश के बाद पियरी अपने उद्देश्य में सफल हुआ। इस तरह से वीर ने अपने देश के नाम को ऊँचा किया है। वह मर चुका है, पर उसका नाम अमर है। ध्रुव पर उसकी विजय-पताका आज भी फहरा रही है।

कुछ विवरणात्मक निबन्धों की रूपरेखा

(१) भारत पर ग्रीक लोगों का धावा (३२५-३२७ बी. सी.)

ऐतिहासिक निबन्ध

(१) भूमिका—सिकन्दर के आक्रमण से पहले भारत की पवित्र भूमि पर योरपियन आक्रान्ता का पैर नहीं पड़ा था। सिकन्दर ने आक्सस से दक्षिण की ओर बैक्ट्रिया पर विजय-लाभ करके भारत पर आक्रमण करने की ठानी। उसे उस समय भारत के विषय में पर्याप्त ज्ञान नहीं था।

(२) आक्रमण का आरम्भ—३२७ बी॰ सी. में सिकन्दर ने हिन्दुकुश को पार किया, वहां उसे भीषण पहाड़ी जातियों से लोहा लेना पड़ा और उसने उन पर विजय पाई।

(३) सिन्ध का पार करना—फरवरी ३२६ बी० सी० में उसने अटक के पास किश्तियों का पुल बना कर सिन्ध नदी को पार किया। वहाँ से वह आंभी की राजधानी तक्षशिला की ओर बढ़ा, यहाँ उसका स्वागत हुआ। तक्षशिला में आराम करके सिकन्दर झेलम और चेनाब के मध्यवर्ती प्रदेश पर विजय प्राप्त करने के लिये बढ़ा और उसकी इस प्रदेश के राजा पोरस से मुठभेड़ हुई।

(४) झेलम का युद्ध—पोरस ने सिकन्दर का वीरता से सामना किया, किंतु उसकी पराजय हुई और वह पकड़ा गया। सिकन्दर ने पोरस का सत्कार किया और उसके साथ संधि कर ली।

(५) आगे बढ़ना—सिकन्दर बियास तक आगे बढ़ा; पर यहाँ आकर उसकी फौजों ने आगे बढ़ने से इनकार कर दिया। यहां से सिकन्दर को लौटना पड़ा; जाते समय विजित प्रदेशों का शासन वह पोरस को सौंप गया।

(६) लौटते समय की यात्रा—पंजाब से समुद्र तक की यात्रा, रास्ते में मालव, तथा क्षुद्रक आदि जातियों ने सिकन्दर पर आक्रमण किये किंतु सब में सिकन्दर की विजय हुई।

(७) आक्रमण के परिणाम—पश्चिमी एशिया में ग्रीक राज्य की स्थापना हुई और पूरब और पश्चिम के बीच की भारी दीवार टूट गई। भारतीय कला पर ग्रीक कला का प्रभाव पड़ा, भारतीय विचार-धारा तथा सभ्यता और संस्कृति पर पश्चिम का प्रभाव पड़ा और पश्चिम की इन चीज़ों पर भारत का प्रभाव पड़ा।

(८) उपसंहार

(२) मुसलिम शासकों का भारत पर प्रभाव

(१) भूमिका-मुसलमानों का भारत पर सदियों शासन रहा; कुछ मुसलिम बादशाह धर्मान्ध थे और उन्होंने आततायी बन देश पर अत्याचार किये। मुसलमानों की बहुसंख्या अच्छी थी और इन्होंने भारत को अपना घर बना यथाशक्ति इसकी हर क्षेत्र में उन्नति की। आज भारत से मुसलिम शासन उठ गया है।

(२) आर्थिक अवस्था और शिक्षा—मुसलमानों के युग में भारत की आर्थिक व्यवस्था आज की अपेक्षा कहीं अच्छी थी। जनता समृद्ध थी। अकाल कम पड़ते थे। ग्रामोद्योग उन्नति पर था। भारत अपनी आवश्यकताओं को स्वयं पूरा कर लेता था। उस युग में शिक्षा का संतोषजनक प्रचार था। मकतबों की संख्या आज की अपेक्षा कहीं अधिक थी।

(३) व्यवस्था—देश में मुसलिम शासकों ने ऐसी राजनीतिक व्यवस्था बांधी थी, जो परिवर्तित रूप में आज तक चली आ रही है। आज भी हमारे यहाँ चौकीदार, सिपाही, थानेदार, तहसीलदार और हाकिमों की वही व्यवस्था चल रही है जो मुसलमानों ने चलाई थी। छोटी कचहरियों की कार्रवाई वैसी ही होती है जैसी पहले जमाने में। लगान की व्यवस्था अब भी वैसी ही है। अंग्रेजों ने मुसलमानों की बनाई व्यवस्था को अपनाया और उसमें परिवर्तन किये।

(४) कलाएँ—मुसलमान कलाप्रिय थे। मुगल निर्माणकला में मुसलिम और हिन्दू निर्माणकला का रुचिर समन्वय है। मुसलमानों की बनाइ कुछ इमारतें संसार में अपने जैसी आप हैं। मुसलमान चित्र-कला, गान-विद्या, तथा अन्य कलाओं के भी शौकीन थे और हर कला के क्षेत्र में वे मुसलिम और हिन्दू कला को मिलाना चाहते थे। उर्दू का उदय उन्हीं के काल में हुआ और उर्दू कहते ही संमिलित भाषा को हैं।

(५) धार्मिक नीति—यह सच है कि हिन्दुओं को कुछ मुसलिम शासकों के राज में कठिनाइयाँ सहनी पड़ीं और उत्तरी भारत के सुन्दर मन्दिर गिराकर मुसलमानों ने उनकी जगह मसजिदें बनवाईं। कुछ शासकों ने हिन्दुओं पर जजिया भी लगाया। किंतु स्मरण रहे अकबर भी इन्हीं मुसलमानों में से एक था और वह शाश्वत धर्म का सच्चा पुजारी था। उसने सब ज्ञात धर्मों के स्थायी तत्त्व संग्रह करके एक 'दीने इलाही' की स्थापना की थी, किंतु दुनिया अन्धी है उसने उस धर्म को ठुकरा दिया।

(६) उपसंहार—मुसलिम शासकों की बहु संख्या ने भारत को अपना घर बना लिया था, और वे तन, मन, धन से इसकी वृद्धि में तत्पर हुए थे। उनमें से बहुत से हिन्दू-मुसलमानों को आपस में भाई-भाई समझते थे और दोनों जातियों की संस्कृति और सभ्यता का समान रूप से आदर करते थे। अकबर ऐसा ही शासक था। भारत ने मुसलमानों से बहुत कुछ पाया—भला और बुरा दोनों।

निबन्ध लिखो :—

(१) भारत पर महमूद का आक्रमण—उसके परिणाम।
(२) पानीपत की तीन लड़ाइयां : १५२६, १५५६, १७६१
(३) विजयनगर राज्य
(४) अकबर का शासन
(५) भारत में पुर्तगाली—उनके पतन के कारण
(६) लार्ड क्लाइव
(७) रणजीतसिंह का शासन—उसका पतन
(८) १८५७ का गदर
(९) भारत में सुधारों का इतिहास
(१०) कांग्रेस

(११) पंजाब-विभाजन

(१२) हिन्दू-मुसलिम समस्या

(१३) पंडित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर

(१४) जोन आफ आर्क

(१५) कश्मीर-यात्रा

(१६) आत्मकथा का कोई अध्याय

(१७) यदि मैं भारत का गवर्नर जनरल हूँ तो—

(१८) किसी सांप्रदायिक दंगे का वर्णन

(१९) मेरी दृष्टि में सब से बड़ा आदमी

(२०) नैपोलियन बोनापार्ट

(२१) जीवन में मेरा लक्ष्य

(२२) परमात्मा का हाथ हर चीज़ में है।

(२३) तुम्हारे जीवन का सबसे सुखमय दिन

(२४) जीवन से मैंने क्या सीखा है ?

(२५) यदि मैं अपने कालेज का प्रिंसिपल हूँ तो—

(२६) छतरी की आत्म-कहानी

(२७) पैसे की आत्म-कहानी

(२८) कंजूस के रुपये की आत्म-कहानी

(२९) पांच रुपये के नोट की कहानी

(३०) भाफ की कहानी

(३१) शीशे की आत्म-कहानी

(३२) कोयले की आत्म-कहानी

(३३) घड़ी की आत्म-कहानी

(३४) कागज की आत्म-कहानी

(३५) बच्चा सक्का की आत्म-कहानी

(३६) माउण्ट बेटन की आत्म-कहानी

(३७) भारत की आत्म-कहानी
(३८) कांग्रेस की आत्म-कहानी
(३९) कम्युनिज्म की आत्म-कहानी
(४०) पूंजीवाद की आत्म-कहानी

विवेचनात्मक निबन्ध

विवेचनात्मक निबन्ध—वह हैं, जिनमें किसी एक विषय की व्याख्या की जाय अथवा उसके विषय में तथ्य एकत्र कर मनोरञ्जक प्रकार से कहे जांय। यह पांच प्रकार के हैं:—

(१) वैज्ञानिक—जिनमें किसी वैज्ञानिक आविष्कार का वर्णन हो अथवा उसकी उपयोगिता पर विचार हो।

(२) आर्थिक—जिनमें आर्थिक समस्याओं पर विचार हो।

(३) राजनीतिक—जिनमें किसी राजनीतिक समस्या पर विचार हो।

(४) शिक्षा-सम्बन्धी—जिनमें किसी शिक्षा-संबन्धी समस्या पर विचार हो।

(५) सामान्य—जिनमें किसी सामान्य विषय की व्याख्या हो।

उदाहरण

बिजली की करामातें

भाफ का जमाना बीत रहा है और बिजली का युग तेजी से आ रहा है। बिजली के बारे में यदि वैज्ञानिक इसी प्रकार उन्नति करते रहे तो संभव है ऐसा युग जल्दी ही आ जाय जब सारे काम बिजली द्वारा किये जायंगे, और भाफ का प्रयोग समाप्त हो जायगा।

प्राचीन काल में बिजली के विषय में निश्चित ज्ञान न था। १८ वीं सदी में डा० गिल्बर्ट ने इस तत्त्व को समझने का प्रयत्न किया और इस तत्त्व को "इलेक्ट्रिसिटी" यह नाम उन्होंने दिया। १८०० में

पहले-पहल वोल्टा ने बिजली पैदा करने की बैटरी बनाई। १८३३ में फैरेडे ने बिजली बनाने के लिये मैग्नेटो-इलेक्ट्रिक उत्पादक का आविष्कार किया और १८३७ में कुक और ह्वीटस्टोन ने बिजली के तार का आविष्कार किया। बिजली के तार ने समय और स्थान के प्रश्न को हल कर दिया।

१९ वीं सदी के मध्य में इलेक्ट्रोप्लेटिंग का आविष्कार हुआ। अधरङ्ग तथा दूसरी बीमारियों के उपचार में डाक्टरों ने बिजली का प्रयोग किया। १८७९ और १८८० में बिजली की रोशनी चली और एडीसन ने इस विषय में स्तुत्य प्रयत्न किया। १८७५ में बेल ने टेलीफोन का आविष्कार किया और आज यह हर बड़े नगर में सामान्य चीज़ बन गई है। उसके बाद गरमी और ठण्डक पैदा करने के लिये बिजली का प्रयोग आरम्भ हुआ और साथ ही बिजली के द्वारा भोजन भी पकाया जाने लगा। गैस और कोयले की अपेक्षा बिजली अधिक प्रभावशाली और सस्ती सिद्ध हुई। इन्हीं बातों के साथ बिजली के पंखे भी निकल आये।

१८८४ में ग्रीस ने बेतार का तार निकाला और १८९६ में मार्कोनी ने उसका प्रदर्शन किया। बेतार के तार ने मनुष्य के जीवन में नवीनता ला दी और आज बेतार का तार हर बड़े जहाज़ में लगा रहता है, जो मुसीबत की घड़ी में जहाज़ का सब से सच्चा साथी बनता है। इसके बाद रेडियो का आविष्कार आसान था और अब हर बड़े नगर में रेडियो से भांति-भांति के काम लिये जाते हैं और किसी-किसी देश में तो पुलिस के सामान्य सिपाहियों की कलाइयों पर छोटे-छोटे रेडियो सेट लगे रहते हैं। अब बेतार का टेलीफोन भी निकल आया है, जिसके द्वारा हज़ारों फुट ऊंचा उड़ने वाले हवाई जहाज़ का धरती वालों के साथ संबन्ध बना रहता है। और अब टेलीविज़न भी निकल आया है और अंग्रेज़ जाति इस विषय में आश्चर्यजनक प्रगति कर रही

है और ये लोग जगत् में जगह-जगह टेलीविज़न के केन्द्र स्थापित कर रहे हैं। इसके द्वारा भारत में बैठा हुआ व्यक्ति न केवल न्यूयार्क में बैठे व्यक्ति से बातचीत ही कर सकता है, अपितु बात करते समय उसकी शकल भी देख सकता है। टेलीविज़न के चालू हो जाने पर हम अपने घर में बैठकर हजारों मील दूरी पर बोलने वाले वक्ताओं के व्याख्यान सुनने के साथ-साथ उनकी शकल भी देख सकेंगे।

अब बिजली से खेती होती है और मोटरें चलती हैं। बम्बई में बिजली के सहारे रेल के इंजिन चलते हैं जो सामान्य इंजिनों की अपेक्षा कहीं अधिक तेज चलते हैं। योरप के देशों में रेलें बिजली से चलने लगी हैं और जिधर देखो उधर ही बिजली का प्रताप और प्रकाश फैला दीखता है।

भारत में बिजली कई जगह पानी से पैदा की जाती है, और इसके द्वारा देश भर में अनेक उद्योग-धन्धे चलाए जाते हैं।

बिजली के कारनामें अद्भुत हैं और अनेक हैं। इससे ट्रैम चलती हैं, रेलें चलती हैं, मोटरें भागती हैं, मकान गरम और ठंडे किये जाते हैं, सैंकड़ों प्रकार की कलें चलती हैं; यह हमारे कमरे झाड़ती है, हमारे लिये खाना पकाती है, और हमारे कपड़े तक धोती है। इससे जहाज चलते, कुए चलते, नहरें खुदतीं और डाम बांधे जाते हैं। रेडियो, ब्राडकास्टिंग, टेलीविज़न आदि आविष्कारों ने संसार के सब आदमियों को एक परिवार बना दिया है।

देखें आगे बिजली और क्या-क्या करामातें दिखाती है।

(२) साइंस मनुष्य का सब से बड़ा सेवक है।

आज हम वैज्ञानिक युग में जी रहे हैं। आज हम साइंस के द्वारा जीते, चलते-फिरते और सोचते तक हैं। आज साइंस ने हमारे प्राचीन विश्वासों को निराधार बना दिया है और परमात्मा को एक अन्ध विश्वास की चीज़ साबित कर दिया है। जीवन का कोई स्तर

ऐसा नहीं है, जिसमें साइंस का प्रकाश नहीं घुस चुका है, और जीवन् का ऐसा कोई प्रकार नहीं है जिस पर साइंस का प्रभाव नहीं पड़ा है। आज हम साइंस के सहारे जमीन पर दौड़ सकते हैं, पानी पर भाग सकते हैं और आसमान में उड़ सकते हैं। घर में बैठे हजारों कोस की चीज़ को देख सकते और परदेसों में बैठे दोस्तों से बातचीत कर सकते हैं। साइंस ने समय और स्थान के व्यवधान को मिटा दिया है।

साइंस ने मनुष्य के आराम में सब से अधिक सहायता दी है। इसने स्थान के व्यवधान को मिटाते हुए हमें रेल, कार, जहाज और हवाई जहाज दिये हैं, जिनके सहारे हम बरसों की यात्रा घंटों में तै कर लेते हैं। फिर टेलीग्राफ, बेतार का तार, और टेलीफोन ने तो गज़ब ही कर दिया है और सारे संसार की मनुष्य जाति को एक परिवार-सा बना दिया है। बेतार के टेलीफोन द्वारा एक उड़ाका हजारों फुट ऊंचे आसमान में उड़ता हुआ भी धरती पर के मित्रों से बातचीत करता रहता है। रेडियो ने जीवन में रङ्ग ला दिया है और हम घर बैठे संसार की खबरें सुन सकते हैं और संसार के सुख-दुःख में, उनके नाच-गान में सम्मिलित हो सकते हैं। टेलिविज़न का खुला प्रचार तो संसार में क्रान्ति ही ला देगा

साइंस की सारी बातों को एक ओर रख अकेली बिजली ही पर ध्यान दो। अकेली बिजली ने संसार में क्रान्ति उत्पन्न कर दी है। आज यह हमारा भोजन पकाती, हमारे मकान बनाती, उन्हें झाड़ती-बुहारती, हमारे कपड़े धोती, पंखे चलाती और कार, रेल, जहाज आदि के द्वारा हमें विश्व के इस कोने से उस कोने तक घंटों में पहुंचा देती है।

डाक्टरी के क्षेत्र में साइंस ने अद्भुत चमत्कार दिखाया है। एक्स-रे के द्वारा शरीर के भीतर का रोम-रोम दीखता है और पेनिसिलीन आदि औषधों ने अनेक रोगों को जड़ से उखाड़ मारा है। शिल्पविद्या ने चीर-

फाड़ में करामात दिखा दी है और बेहोश करने, सूआ लगाने, और भांति-भांति की किरणों के उपचार ने मनुष्य के दुःखों को बहुत सीमा तक कम कर दिया है।

सफाई के साधनों में परिष्कार करके साइंस ने नगरों को मनोरम बना दिया है और लाखों आदमी एक जगह रहने पर भी योरप के देशों में गन्दगी का नाम नहीं दीख पड़ता। साइंस ने मनुष्य की हर क्षेत्र में सेवा की है और उसे हर तरह से आराम पहुंचाया है।

रक्षालैंप ने खानों में काम करने वालों की रक्षा की है, फोटोग्राफी ने मनुष्य की स्मृति को स्थायी कर दिया है। ग्रामोफोन ने गायकों की मीठी आवाज को अमर बना दिया है और सिनेमा ने संसार का मनोरञ्जन करने में प्रमुख भाग लिया है। छपाई की कलों ने छापने में कमाल कर दिया है। फैक्टरियों को देखो, हज़ारों आदमियों का काम एक मशीन कर रही है और थोड़े से व्यय से लाखों के उपकरण तैयार कर रही है।

किंतु फिर प्रश्न उठता है कि क्या साइंस ने मनुष्य को केवल सुख ही पहुँचाया है? उत्तर होगा नहीं। क्योंकि यह सच है कि हवाई-जहाज यात्रियों को कुछ घंटों ही में दिल्ली से लन्दन पहुँचा देता है, किंतु साथ ही युद्ध के समय वह हजारों मन बम भी दुनिया पर फेंक देता है। सच है कि बिजली कार, रेल, जहाज आदि को चला कर मनुष्य की सेवा करती है, किंतु साथ ही युद्ध के दिनों में वह चंद घंटों में टैंक और तोपें भी यहां से वहां और वहां से यहां पहुँचा देती है। एटम बंब को याद करो, कुछ ही क्षणों में उस एक गोले ने अगणित मनुष्यों की हत्या कर दी थी, और अमित संपत्ति को स्वाहा कर दिया था। और यदि साइंस ने मनुष्य की सेवा में कमाल किया है तो उसने मनुष्य के विनाश में भी कमाल कर दिखाया है।

सा स एक अद्भुत विद्या है। इससे लाभ भी अगणित हैं और हानियां भी भारी हैं। इसके हानि-लाभ का दारमदार इसे उपयोग में लाने वाले मनुष्यों के अच्छे और बुरे संकल्पों पर निर्भर है।

(३) शिल्प-शिक्षा

एक महान् तत्त्ववेत्ता के अनुसार विद्या दो प्रकार की है: पहली वह, जो हमें कमाना सिखाती है और दूसरी वह, जो हमें जीना सिखाती है। वर्तमान भारत में पहली विद्या का प्रायः अभाव है और दूसरी भी विकृत रूप में पढ़ाई जा रही है। स्कूलों और कालेजों में हमें अंग्रेजी में शिक्षा दी जाती है, जो हमारे दृष्टिकोण को विस्तृत करती और हमारी भावनाओं को चेतन करती है। किंतु शिल्पशिक्षा हमें नाम को भी नहीं दी जाती, जिसका परिणाम यह है कि हमारे शिक्षित छात्र रोज़ी नहीं कमा सकते और एकमात्र नौकरियों की तलाश में अपना जीवन बरबाद कर देते हैं। शिक्षा की तीन सीढ़ियां हैं पहली वह,जो हमें उन बातों की शिक्षा देती है जो हमारे लिये आवश्यक हैं,दूसरी वह,जो हमें उन बातों की शिक्षा देती है जो हमारे लिये उपयोगी हैं और तीसरी वह,जो हमें उन तत्त्वों की शिक्षा देती है जो हमारे जीवन को परिष्कृत या अलंकृत करते है। इन तीनों सीढ़ियों के क्रम को बदल देना किसी भवन को छत से बनाना आरम्भ करना है। हमारे देश में आजकल यही हो रहा है।

शिल्पशिक्षा दूसरी सीढ़ी पर आती है और यह हमें जीवन के लिये उपयोगी चीज़ें सिखाती है। यह हमें उद्योग-धन्धे सिखाती, कला-कौशल सिखाती और भांति-भांति की मशीनें चलाना और साधना बताती है। एक ऐसा छात्र जो साहित्य और तत्त्वज्ञान का प्रवीण चितेरा हो मामूली से मामूली मशीन को नहीं चला सकता; इसीलिए आधुनिक युग में सामान्य छात्रों के लिये शिल्पशिक्षा वाञ्छनीय है।

फ्रांस, बेल्जियम, जर्मनी और अन्य योरपीय देशों ने औद्योगिक क्रान्ति के युग में अपना ध्यान शिल्पशिक्षा की ओर बढ़ाया था और

आज वे देश अपनी उस दूरदर्शिता से लाभ उठा रहे हैं। अमरीका ने भी काफी बरसों से इस दिशा में पग बढ़ाया है और आज वह देश शिल्पशिक्षा में संसार का अग्रणी बन रहा है।

शिल्पशिक्षा के द्वारा कल-कारखानों को मंजे आदमी मिल जाते हैं और देश के युवकों को काम मिल जाता है। इससे देश की दोनों श्रेणियों का आपस में प्रेम बढ़ता है और देश की जनता बाहर के देशों से माल मंगाने से मुक्ति पा जाती है।

शिल्पशिक्षा केवल पुस्तकों या व्याख्यानों से नहीं आती। इसके लिए छात्र को मशीनों पर हाथ से काम करना पड़ता है; जिससे उसके मन में श्रम के लिये आदर पैदा हो जाता है और वह अपने पैरों खड़ा होना सीख जाता है। आज हमारे देश के युवक काम को बुरा समझते और उससे जी चुराते हैं, जिसका परिणाम यह है कि वे जीवन-पर्यन्त हाथ से काम नहीं कर सकते और छोटी-छोटी बातों के लिए पराया मुँह ताकते हैं। शिल्पशिक्षा का प्रसार पराधीनता के इन विचारों को दूर करता है और युवकों को आत्मनिर्भरता का पाठ पढ़ाता है।

शिल्पशिक्षा जहां हमें रोजी कमाना सिखाती है वहां साथ ही हममें एक प्रकार की दक्षता और चतुरता पैदा कर देती है, जो समान रूप से जीवन की हर दशा और उसके हर स्तर में हमारा साथ देती है। इससे हमारा मन और शरीर संयत हो जाता है और हम हर तरह की आपत्ति पड़ने पर उसका सामना करने के लिये उद्यत रहते हैं।

शिल्पशिक्षा ने इस बात को सिद्ध कर दिया है कि शिक्षा केवल मस्तिष्क की ही नहीं, अपितु शरीर और इन्द्रियों की भी है। बहुत दिनों तक लोग केवल किताबी विद्या का आदर करते रहे, किंतु शिल्पशिक्षा के प्रसार के बाद आज एक अच्छा मिस्त्री भी समाज में सिर उठा कर चलना सीख गया है और आज समाज में जितना आदर एक साहित्यिक का है उतना ही एक अच्छे मिस्त्री का भी है।

किंतु स्मरण रहे, खालिस शिल्पविद्या से अनेक हानियां भी हैं। ऐसा व्यक्ति, जिसने शिल्पविद्या की किसी एक ही शाखा में चतुराई पाई है, उसकी दूसरी शाखा में काम नहीं पा सकता और इस प्रकार एक मशीन की बातों में पारंगत होने पर भी दूसरी के सामने अवाक् बन जाता है। किंतु यह बात किसी-किसी शिल्प में ही है; और सामान्यतया इंजिन का अच्छा चालक दूसरी मशीनों को भी आसानी से बस में कर लेता है।

खालिस शिल्पविद्या शिल्पी के दृष्टिकोण को सीमित कर देती है; इसलिये आवश्यक है कि हर शिल्पी को थोड़ा साहित्य आदि भी पढ़ाया या सुनाया जाय। उसे साहित्य की शिक्षा इसलिये नहीं दी जानी चाहिये कि वह कुदाल बनाना सीख जाय और पाये घड़ना सीख जाय, अपितु इसलिये कि वह एक आदमी है; और हर आदमी के लिये यह आवश्यक है कि वह अपने विचारों और भावनाओं को साफ़ सुथरा करे और उन्हें मांजे।

फलतः हर शिल्पी को थोड़ा-सा साहित्य पढ़ना चाहिये और हर साहित्यिक को कुछ न कुछ मशीनी काम भी सीखना चाहिये। जीवन में पूर्णता तभी आती है और जीवन में सर्वांगीण सुख तभी मिल सकता है।

कम्युनिज्म

आज जगत् में कम्युनिज्म एक प्रबल शक्ति है। इससे चाहे जितनी घृणा करो, इसे चाहे जितना दबाओ, इसका प्रचार संसार में दिनों दिन फैलता जा रहा है और एक-एक करके बड़े-बड़े देश इसके सामने सिर झुकाते जा रहे हैं। भारत में अभी तक कम्युनिज्म का प्रचार नहीं हो पाया है और सरकार इसके दबाने में यत्नशील है। भारत में सबसे पहले कम्युनिज्म का नाम मेरठ षड्यन्त्र के संबन्ध में सुना गया था; फिर देश में बहुत-सी हड़तालें हुईं और

'काम रोको' खेले गए। सरकार का ध्यान कम्युनिज्म की तरफ झुका और उसने इसके फैलाने वालों पर आँख गरम की और इसे दबा दिया।

कम्युनिज्म समाजवाद का ही परिपक्व रूप है, और यद्यपि कम्युनिज्म अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिये हिंसा से काम लेता है, तथापि अर्थ-वितरण की यह प्रक्रिया श्रमी-वर्ग को भाती है और वे बलात् इसकी ओर झुक जाते हैं। समाजवाद समाज के हर व्यक्ति और स्तर के लिये समान काम और समान लाभ चाहता है; इसके विपरीत कम्युनिज्म अथवा मार्क्सिज्म श्रेणीयुद्ध में भरोसा रखता और हिंसात्मक उपायों द्वारा श्रमी-वर्ग का आधिपत्य स्थापित करना चाहता है। एक आदर्श कम्युनिस्ट देश में रियासती या शासक सत्ता का होना अनिवार्य नहीं माना जाता; और वहां सब को खुली आजादी मिली होती है—जहां तक कि उस आजादी का समाज के दूसरे व्यक्तियों पर अवाञ्छनीय प्रभाव न पड़े। रही काम की बात-वह हर एक के लिये उसकी शक्ति और योग्यता के अनुसार आवश्यक है। किसी को भी किसी ऐसे काम के लिये बाधित नहीं किया जाता जिसके लिये वह योग्य न हो, और किसी को भी चैन से पड़े रहने का अधिकार नहीं मिलता, जबकि समाज के दूसरे आदमी पसीना बहा रहे हों। अर्थ-वितरण सब की आवश्यकताओं के मुताबिक होता है। समाज का कर्तव्य है कि वह अपने हर सदस्य की उचित आवश्यकताओं को पूरा करे और उसे अभाव की मार से हर तरह बचावे।

पहले-पहल कार्ल मार्क्स ने समाज में प्रचलित पूंजीवाद से पैदा हुई असमता और विषमता की ओर वैज्ञानिक रीति से संसार का ध्यान खींचा; उसने संसार के सारे श्रमियों से अपील की कि वे पूंजीवादियों की ओर से होने वाले अत्याचार और उत्पीडनों के

विरुद्ध मिलकर एक हो जायं और समाज की ऊँची तथा मध्य श्रेणी के विरुद्ध एक ऐसी शासनप्रणाली बनावें जिसमें, वे लोग जो स्वयं हाथ से काम नहीं करते—उनके ऊपर शासन न कर सकें। कम्युनिज्म का लक्ष्य पूंजीवाद को मिटाकर संसार में श्रमियों की तानाशाही स्थापित करना है।

१९ वीं सदी के अन्तिम भाग में कम्युनिज्म का प्रचार बढ़ा और उन देशों में, जहां कि शासकों की निरंकुशता के पीछे पूंजीपतियों और मध्य श्रेणी के लोगों की शक्ति खड़ी थी, कम्युनिज्म को अपना क्षेत्र तैयार पड़ा मिला। फलतः रूस में एक ऐसी क्रान्ति की तैयारियां उठती दीख पड़ीं, जो शासक-वर्ग को संसार से उठा देना चाहती थी और १९१७ में सचमुच लेनिन और ट्रोट्स्की के नेतृत्व में रूसियों ने ज़ारशाही को अपने देश से सदा के लिये मार भगाया।

रूसी क्रान्ति के बाद कम्युनिज्म संसार में तेजी से फैलने लगा। पूंजीपतियों के गढ़ इंगलंड और अमेरिका ने भरपूर प्रयत्न किया कि श्रमियों की इस बाढ़ को रोक दें, किंतु उन्हें सफलता नहीं मिली और श्रमी लोग संसार के विशाल मञ्च पर एकत्र हो गए और लेनिन के कहने पर संसार को बदल डालने की तैयारी में लगे रहे।

योरप के दूसरे देशों में भी कम्युनिज्म फैलने लगा; और शनैः-शनैः सब देशों के नवयुवक इसकी सचाई से आकृष्ट होने लगे। किंतु ज्यों-ज्यों जन-समान्य का इसकी ओर झुकाव बढ़ा, त्यों-त्यों शासक-वर्ग की इस पर क्रूर दृष्टि बढ़ी, जिसका फल यह हुआ कि इटली में मुसोलीनी ने कम्युनिज्म के विरुद्ध जिहाद की घोषणा कर दी। चीन में, जबकि कम्युनिज्म अपना लक्ष्य पूरा ही किया चाहता था, च्यांग-काई शेक ने इसका विरोध किया और इसे दबाने की कोशिश की; कुछ दिन वह अपने इस काम में सफल हुआ, किंतु आज चीन में कम्युनिज्म का बोलबाला है और पूंजीपतियों की मट्टी खराब हो रही है।

युद्ध से पहले फ्रांस में भी कम्युनिस्टों ने अपनी एक प्रबल पार्टी बना ली थी; स्पेन में कम्युनिस्टों और शासकों का आपस में युद्ध हुआ और कुछ समय के लिए शासकों की विजय हुई—और सम्भव है अब वहां फिर से कम्युनिस्ट जोर पकड़ें और पूंजीपति मार भगाए जांय।

कम्युनिज्म की अनेक तत्त्वज्ञों ने निंदा की है, इसकी भाषा में भूख, नफरत और मौत की प्रधानता है और इसमें संशय नहीं कि कम्युनिस्टों में से बहुत से घृणा और बदला लेने की इच्छा से प्रेरित हो उत्पात मचा रहे हैं और एक ऐसे श्रेणीयुद्ध की आधार-शिला रख रहे हैं जो वर्तमान युद्ध की अपेक्षा कहीं अधिक भयंकर सिद्ध हो सकता है।

इंगलंड और अमेरिका के राजनीतिज्ञ कहते हैं कि कम्युनिस्टों का प्रधान लक्ष्य संसार में अशान्ति और उत्पात मचाकर क्रान्ति पैदा करना है और यह बात किसी सीमा तक है भी सच; किंतु क्या इन देशों के पूंजीपतियों ने संसार के दीन-हीन लोगों और श्रेणियों पर अत्याचार और उत्पीडन करने में किसी तरह की कसर उठा रखी है? और यदि आज तक समाज की उन्नत श्रेणियां निम्न श्रेणियों पर मनमाने अत्याचार करती आई हैं तो क्या आश्चर्य है कि आज पिसने वालों के मन में पीसने वालों को सताने की समा गई हो।

कम्युनिज्म पर एक यह आक्षेप भी लगाया जाता है कि यह नास्तिकता फैलाता है और यह आक्षेप किसी सीमा तक है भी सच। किंतु क्या धर्म के ठेकेदारों ने आज तक धर्म के नाम पर निम्न श्रेणियों का खून चूसने में किसी तरह की कमी की है? और क्या आज तक उन्होंने धर्म जैसी पवित्र चीज़ के नाम पर संसार में शक्तिशाली के डंडे की पूजा नहीं स्थापित की है? कम्युनिज्म वैयक्तिक धर्म को चर्च के धर्म से जुदा करता है और धर्म के नाम पर चर्च को चालू कर समाज का शोषण बन्द करना चाहता है।

कम्युनिज्म को रोकने का एकमात्र साधन संसार में समता का क्रियात्मक प्रचार करना है और जब तक धन के मद में मस्त हुए धनपति ऐसा न करेंगे तब तक संसार में कम्युनिज्म का प्रचार बढ़ता जाना अनिवार्य है।

रेडियो

(१) भूमिका—रेडियो आधुनिक युग के आश्चर्यों में से एक है। १६ वीं सदी के पिछले भाग में बिना तार के तार भेजने की कोशिश की गई। मार्कोनी का नाम बेतार के तार के लिए प्रसिद्ध है। वैज्ञानिकों ने लगातार प्रयत्न करके संदेश देने की इस सरणि को पूर्णता पर पहुँचा दिया है। विश्व-युद्ध के बाद के युग में बेतार के तार का अद्भुत प्रचार हुआ और अब भारत में भी जगह-जगह रेडियो दीखने और सुनाई देने लगा है।

(२) रेडियो के उपयोग—हर रोज प्रातः-सायं मधुर गाने, मनोरम बाजे खेल और नाटक रेडियो पर खेले जाते हैं। बच्चों का प्रोग्राम भी रोज होता है और कभी-कभी स्त्रियों का प्रोग्राम भी चलता है। शिक्षा-संबन्धी भाषण सुनाए जाते हैं और समय-समय पर आवश्यक विषयों पर लेक्चर दिलाए जाते हैं। रेडियो पर खड़े हो नेता अपने देश को और अपनी पार्टियों को संबोधित करते हैं। जर्मनी और इटली ने रेडियो के सहारे ही देश के बच्चे-बच्चे में युद्ध की लालसा फूंक दी थी। रेडियो के द्वारा आज संसार और देश एक हो रहे हैं और संसार के किसी भी भाग में हुई घटना इसके द्वारा तुरन्त हमारे कानों तक पहुँच जाती है।

(३) भारत में इसका भविष्य—रेडियो के द्वारा अशिक्षित जनता को काम की बातें समझाई जा सकती हैं और कभी-कभी स्त्रियों का ऐसा प्रोग्राम चलता है जो श्रोताओं को घरों की चिन्ताओं से एक-दम मुक्त कर देता है। रेडियो के ऊपर ग्राम-सुधार के प्रोग्राम चलते हैं

और इसी पर देश को उठाने और आगे बढ़ाने की बातें सुनाई जाती हैं। रेडियो के द्वारा हम भारत के गांव-गांव तक और हर घर तक पहुँच सकते हैं और दूर रहने वाले अपने किसान भाइयों को उनके लाभ की बातें बता सकते हैं।

(४) रेडियो पर सरकार का नियन्त्रण—रेडियो सरकार के नियन्त्रण में रहना चाहिए या स्वतन्त्र कंपनियों के इसके विषय में मत-भेद हैं। अमरीका में विकिरण व्यापारियों के हाथ में है, फलतः वहां के प्रोग्रामों का स्तर नीचे गिर गया है। इंगलैंड में बी. बी. सी एक अर्धसरकारी संस्था है और इसी लिये वहां के प्रोग्राम बड़े चारु और शिक्षाप्रद रहते हैं। रूस में सरकारी नियन्त्रण के कारण रेडियो सरकारी नीति का प्रचारक बन गया है। वर्तमान भारत में रेडियो पर सरकार का नियन्त्रण है।

(५) रेडियो में परिष्कार होना अवश्य भावी है और आशा है कुछ ही दिनों में हम अपने घरों में बैठ मधुर गीतों के साथ-साथ कमनीय आकृतियां भी देख सकेंगे।

निःशुल्क प्रारम्भिक शिक्षा

(१) भूमिका—इसकी अत्यधिक आवश्यकता; भारत में शिक्षा की न्यूनता; किसी-किसी प्रान्त में ६ प्रतिशत से अधिक पढ़े लिखे आदमी नहीं हैं। कुछ रियासतों में शिक्षा की अवस्था अपेक्षाकृत अच्छी है, जैसे, ट्रावनकोर, मैसोर और बड़ौदा। सामान्यतया देश में प्रारम्भिक शिक्षा की कमी है और उच्च शिक्षा के लिये साधन नहीं हैं।

(२) भारतीय नेताओं ने इस समस्या पर विचार किया है, पर वे अभी तक इसे संतोषजनक रीति से नहीं सुलझा सके। प्रायः सभी प्रान्तों में प्रारम्भिक शिक्षा बिल पास हो चुके हैं, किंतु परिणाम अभी तक कुछ नहीं निकला है; आवश्यकता है अध्यवसाय, त्याग और

तितिक्षा के साथ शिक्षा को आगे बढ़ाने की, जिसकी अभी देश के नेताओं और जनता में कमी है।

(३) क्या करना चाहिये—धन की आवश्यकता है; किंतु धन कहां से आवे; आधे से अधिक भारत का धन सेना पर लग जाता है; बाकी धन और कामों में व्यय हो जाता है। सब काम हो चुकने पर बची हुई थोड़ी-सी रकम शिक्षा के लिये रखी जाती है। असल बात यह है कि अभी तक भारत के नेताओं ने शिक्षा के न तो वास्तविक स्वरूप को ही अपनाया है और न शिक्षा को फैलाने का मन लगाकर प्रयत्न ही किया है। प्रारम्भिक शिक्षा के प्रचार के लिये धनी तथा मध्य श्रेणी के वर्ग पर नए टैक्स लगने चाहियें; शिक्षा को अनिवार्य बना देना चाहिये। शिक्षा को उपयोगी बनाना आवश्यक है, जिससे लोग स्वयं इसकी ओर झुकें। रात्रि-पाठशालाएँ खुलनी चाहियें और रेडियो के द्वारा शिक्षा का प्रसार किया जाना चाहिये। लोगों को वे ही बातें सिखानी चाहियें, जो जीवन के लिये आवश्यक हों और जो जीवन को सुखमय बनाती हों। अनावश्यक पढ़ाई को कम कर देना चाहिये। शिक्षा मातृ-भाषा में होनी चाहिये।

उपसंहार—आशा है सरकार और जनता दोनों मिलकर प्रारम्भिक शिक्षा को देश में सफल बनावेंगे।

चीन-जापान युद्ध (१९३७-१९४५)

(१) भूमिका—निहत्थे चीनियों पर जापान की बमबारी देख संसार क्षुब्ध हो उठा; भारत ने जापानी माल का बायकाट कर दिया और दूसरे देशों ने भी जापान के आक्रमण की निन्दा की। पंडित जवाहरलाल नेहरू १९३९ में चुंगकिंग गये और उन्होंने चीनियों को आश्वासन दिया।

(२) युद्ध के कारण—कमजोरी संसार में सब से बड़ा पाप है, फिर पड़ोस में शक्तिशाली बसता हो तो कमजोरी दुःखदायी बन जाती

है। बहुत बरसों से जापान की वैदेशिक नीति का रुख आक्रमणकारी रहता आया था। जापान को विस्तार चाहिये था; उसकी जनसंख्या तेजी से बढ़ रही थी; उसके उद्योग-धंधों के लिये नई मारकीटें अपेक्षित थीं। चीन पड़ौस में था; जापान ने उसी पर छापा मार दिया। १९३१ में जापान ने मामूली-सी बात पर चीन पर धावा बोल मंचूरिया पर कब्जा कर लिया, किंतु उस प्रान्त में लगाई पूंजी से पर्याप्त लाभ न हो सका। १९३७-१९४५ में होने वाले युद्ध का असली कारण यह था कि जापान उत्तरी चीन से कम्युनिज्म को भगा वहां अपनी मारकीटें खोलना चाहता था। जापान ने न आव देखा न ताव शंघाई, नानकिंग, कैंटन आदि चीनी नगरों पर बमबारी आरम्भ कर दी और चीनी फौजों को दक्षिण में धकेल दिया।

(३) युद्ध की प्रगति—जापान ने दुनिया के सामने इसे सामान्य-सी घटना प्रसिद्ध किया किंतु ध्यान से देखने पर यह एक बहुत दारुण युद्ध था। १९३७ के आक्रमण में जापान ने चीन के भारी भाग पर कब्जा कर लिया और वांग चिंगवाई नाम के चीनी की देख-रेख में नानकिंग में अपनी सरकार स्थापित कर दी। १९४१ में जर्मनी और इटली ने इस सरकार को मान लिया। चीनी सरकार ने हट कर चुंग-किंग में अपनी राजधानी स्थापित की। ब्रिटेन, अमेरिका और रूस ने चीनी सरकार का साथ दिया। कम्युनिस्टों ने चांगकाई शेक का साथ दिया, क्योंकि रूस जापान का विरोधी था और उसे चीन से भगा देना चाहता था। यद्यपि चांगकाई शेक की फौजों ने जापान की प्रगति को किसी सीमा तक रोक दिया, तथापि जापानियों ने चीनी सरकार को समुद्र से काट दिया, और हिंद चीन में हवाई अड्डे बनाकर वहां से बर्मा रोड पर बमबारी कर दी और इस प्रकार चीन की रसद रोक दी। इस संग्राम में जापान के लगभग १९ लाख जवान काम आये और चीन के करीब ४० लाख।

उपसंहार—अमरीकन हवाई सेना की सहायता पा अन्त में चीन ने शत्रु पर धावा बोल दिया और शनैः-शनैः चीन के बड़े भाग को शत्रु से मुक्त करा दिया। जापान ने जितनी हानि चीन की की थी उससे दसों गुनी हानि उसकी अमरीकन और अंग्रेजी हवाई जहाजों ने की। अन्त में मित्रराष्ट्रों के सामने जापान ने घुटने टेक दिये और आज जापान दूसरों के अधीन है।

प्रस्ताव लिखोः—

(१) प्रशान्त महासागर पर प्रभुत्व।
(२) मिडल-ईस्ट के देशों की संधियां।
(३) पाकिस्तान तथा अन्य मुसलिम देश।
(४) प्राचीन तथा आधुनिक जगत् में दास्यप्रथा।
(५) आकाश पर प्रभुत्व।
(६) मुनरो सिद्धान्त।
(७) भूकम्प।
(८) टेलीविजन।
(९) ग्रहण।
(१०) देशभक्ति और साम्राज्यवाद।

कुछ निबन्धों की रूपरेखा

निःशस्त्रीकरण

(१) भूमिका—वर्तमान युग में निःशस्त्रीकरण की समस्या।
(२) विश्वयुद्धों के बाद निःशस्त्रीकरण का इतिहास—इसके लिये अनेक प्रयत्न, पैक्ट और असफलता।
(३) निःशस्त्रीकरण के लिये युक्तियांः—
(अ) शस्त्रों का आधिक्य शान्ति के लिये भयावह है।
(आ) शस्त्र-निर्माण से देश की आर्थिक दशा पर भारी भार।

(इ) शस्त्रसंचय का अर्थ है सैन्यबल में विश्वास।

(ई) शस्त्रों से भय और शंका पैदा होती है।

(४) निःशस्त्रीकरण के लिये सभाएँ:—वाशिंगटन-समझौता; लीग आफ नेशंस।

(५) निःशस्त्रीकरण के विरुद्ध युक्तियां:—

(अ) शस्त्र युद्ध के कारण नहीं, अपितु साधन हैं।

(आ) शस्त्रीकरण से बहुतों को रोजी मिलती है।

(इ) निःशस्त्रीकरण का मतलब होगा पहले से भी अधिक भय।

(ई) निःशस्त्रीकरण का कोई ठीक रास्ता और उपाय नहीं दीखता।

(६) उपसंहार।

भारतीय नारी की शिक्षा

(१) भारतीय नारियों में शिक्षा की कमी।

(२) उनकी शिक्षा क्यों आवश्यक है? उनके शिक्षित होने से उनका और समाज का क्या भला होगा?

(३) उनकी शिक्षा कैसी और कैसे होनी चाहिये? स्कूल और कालेजों में या और किसी संस्था में।

(४) नारियों के लिये किस प्रकार की शिक्षा कल्याणकारी है।

(५) वर्तमान शिक्षाप्रणाली उनके लिये भली है या बुरी?

(६) उनकी शिक्षा में कौन-कौन से सुधार किये जा सकते हैं।

यात्राएँ

(१) पाश्चात्य देशों के आदमी यात्राओं के शौकीन ~~हैं~~, हमारे नव-युवकों में इस प्रकृति की न्यूनता है।

(२) यात्रा से मनोरञ्जन और प्रसन्नता।

(३) यात्रा के लाभ—शारीरिक और मानसिक।

(४) यात्रा के साधन और प्रकार।

(५) हर चीज़ उचित मात्रा में लाभदायक होती है।

भारत में बालचर-संघटन

(१) बालचर आन्दोलन की नींव लार्ड बेडन पावल ने १६०८ में डाली थी। इसका उद्देश्य बालक-बालिकाओं को पूर्ण मनुष्य बनाना था। ब्रिटिश कामनवेल्थ में इसका खूब प्रचार हुआ और १६३२ में बालचरों की संख्या २०३१२७४ तक पहुँच गई थी। बाद में इस आन्दोलन में छात्राएँ भी सम्मिलित कर ली गईं और १६२४ में इन छात्राओं की संख्या ८६५००० तक जा पहुँची थी।

(२) भारत के स्कूलों में इस आन्दोलन ने छात्र-छात्राओं के जीवन में नवीनता ला दी है। राजनीतिक कठिनाइयों के होने पर भी आन्दोलन को सफलता मिली है। १६३२ में बम्बई प्रान्त में बालचरों की संख्या २६२१८ तक जा पहुँची थी। शेष प्रान्तों में भी आन्दोलन सफल हुआ और देश के प्रायः सभी हिस्सों में बालचरों की रौनक दीखने लगी।

भारत के प्रधान बालचर गवर्नर जनरल हैं और अपने-अपने सूबों में वहां-वहां के गवर्नर प्रधान बालचर हैं। इस आन्दोलन का प्रमुख ध्येय देश में भद्र नागरिक पैदा करना है, जो अपने आचार-विचार और कर्मों से देश की सेवा करें और गिरे हुओं को सहारा दें।

बालचर को निम्न शपथ लेनी पड़ती हैः—

(१) भगवान्, राजा और देश के प्रति भक्ति।

(२) हर समय दूसरों की सहायता करना।

(३) बालचरों के नियमों का पालन।

बालचरों के नियम नीचे लिखे हैंः—

(१) बालचर का आदर उसके विश्वसनीय होने में है।

(२) वह भगवान्, राजा और देश का भक्त है; अपने माता-पिता गुरु, नियोजक, सखा और अपने अधीनों का शुभचिन्तक है।

(३) वह दूसरों के लिये उपयोगी और सहायक है।

(४) वह सब का मित्र है और दूसरे बालचरों का भाई है—चाहे वे स्काउट समाज की किसी भी श्रेणी या स्तर के क्यों न हों।

(५) वह भद्र है।

(६) वह पशुओं का मित्र है।

(७) वह आज्ञापालक है।

(८) वह मुसीबतों में मुसकराता है।

(९) वह मितव्ययी है।

(१०) वह विचार, भाषण और कर्म में स्वच्छ है।

(३) भारत में बालचर आन्दोलन को जैसी और जितनी सफलता मिलनी चाहिये थी नहीं मिल सकी है। इसका प्रधान कारण देश के छात्र-छात्राओं की लापरवाही है। साथ ही इस आन्दोलन की देखादेखी इसी कोटि के दूसरे बहुत से आन्दोलन देश में उठ खड़े हुए हैं—जैसे सेवा-समिति, महावीर दल, हिन्दुस्तानी सेवादल, राष्ट्रीय स्वयंसेवक दल।

(४) बालचर-आन्दोलन को प्रगति मिलनी चाहिये; इससे देश के छात्र-छात्राओं का आचार-व्यवहार सुधरेगा, उनकी आदतें बदलेंगी, उनमें खिलाड़ियों की भावना जागृत होगी; उनका मस्तिष्क और शरीर दोनों सबल बनेंगे।

सहशिक्षा

सहशिक्षा की समस्या सब देशों के सामने है। स्काटलंड में पहले सहशिक्षा प्रचलित थी, अब बंद कर दी गई है। अमेरिका में सहशिक्षा का प्रचार है और अब इंगलंड में भी आक्सफर्ड, कैंब्रिज

जैसे विश्वविद्यालयों में सहशिक्षा चल पड़ी है। भारत एक निर्धन देश है; यहां के लिये सहशिक्षा आवश्यक-सी है और अब प्रायः सभी विश्वविद्यालयों में सहशिक्षा चल रही है।

सहशिक्षा के बहुत से लाभ हैं। उससे धन की बचत होती है और जो धनराशि लड़कियों के पृथक् विद्यालयों पर व्यय की जाती, वह अब अन्य उपयोगी कामों में लगाई जा सकती है।

सहशिक्षा से आचार के संघटन पर भी किसी सीमा तक वाञ्छनीय प्रभाव पड़ता है। छात्र-छात्राएँ एक दूसरे को देख अच्छा बरताव करना सीखते और एक दूसरे का प्रेम और आदर पाने की लालसा से प्रेरित हो पढ़ाई-लिखाई में अधिक परिश्रम करते और परीक्षाओं में अच्छा स्थान प्राप्त करना चाहते हैं। छात्र-छात्राओं के साथ रहने से एक दूसरे की झिझक जाती रहती है और एक दूसरे के स्वभाव और आदतों को पहचानने का अवसर मिल जाता है। साथ रहकर आपस में प्रेम पैदा होने पर जो विवाह-संबन्ध स्थापित होता है वह अधिक सुखकर और स्थायी सिद्ध होता है।

किंतु सहशिक्षा की कुछ हानियां भी हैं। यह सच है कि सहशिक्षा के प्रचार से व्यय में कमी होती है, किंतु जिन विद्यालयों में सहशिक्षा जारी है उनका प्रबन्ध करना कठिन हो जाता है और आए दिन लड़के-लड़कियों के झगड़े चलते रहते हैं। साथ ही जो विषय छात्रों के लिये हितकारी होते हैं उनमें से बहुत से छात्राओं के लिये न केवल अनुपयुक्त अपितु किसी-किसी अंश में अहितकर भी होते हैं।

छात्र-छात्राओं के सहपठन का मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी बहुधा अहितकर होता है। जो छात्र-छात्राएँ साथ पढ़ते और बहुत सा समय साथ बिताते हैं उनका शौर्य मंद पड़ जाता है और उनकी तेजी जाती रहती है। और जो नर-नारी जमाने से साथ रहते आए हैं, विवाह हो जाने पर उनके जीवन में नवीनता नहीं आ पाती, जिससे उनका

वैवाहिक जीवन फीका रह जाता है और कभी कभी जल्दी ही टूट जाता है। हमारे देश की अपनी प्रथा तो छात्र-छात्राओं का अलग-अलग पढ़ना है और संभवतः जब नवयुग की चमक मंदी पड़ जायगी तब इस देश के निवासी इस प्रथा के सुपरिणामों को फिर से हृदयंगम कर सकें और उनसे पूरा-पूरा लाभ उठा सकें।

अमेरिका और योरप में विवाह की समस्या दिनों-दिन तूल पकड़ती जा रही है और वहां पच्चीस प्रतिशत विवाह कुछ काल पश्चात् टूट जाने के लिये होते हैं। यह बात उन देशों में भले ही सह्य हो, हमारे देश के लिये तो यह सुतरां असह्य है।

हमारी समझ में प्राइमरी श्रेणियों में सहशिक्षा सुकर है और एम. ए. की स्टेज में भी इससे हानियों की संभावना न्यून है। मैट्रिक, एफ. ए. और बी. ए. में सहशिक्षा अवाञ्छनीय है।

प्रजातन्त्र और तानाशाही

हाल के कुछ बरसों में प्रजातन्त्र के विरुद्ध तानाशाही ने सिर उठाया था, जिसका परिणाम योरुप का दूसरा युद्ध हुआ। रूस, जर्मनी, इटली, मध्य योरुप के छोटे-छोटे देश, यहां तक कि फारस में भी तानाशाही प्रचलित हो गई और इन देशों पर डिक्टेटरों का शासन स्थापित हो गया। प्रजातन्त्र टूट गया और प्रजातन्त्र तथा तानाशाही का संघर्ष उठ खड़ा हुआ।

एक-राज्य के पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद बहुत से देशों में यह भावना पैदा हो गई थी कि युद्ध से पैदा हुई अव्यवस्था को प्रजातन्त्र-प्रणाली नहीं दबा सकती; इसलिये सारे देश के शासन की बागडोर किसी एक योग्य व्यक्ति के हाथ में रहनी श्रेयस्कर है। फलतः टर्की में मुस्तफा कमाल पाशा खड़े हो गए और उन्होंने अपनी अदम्य संकल्प शक्ति और अथक अध्यवसाय से सारे देश को एक ऐसी व्यवस्था में बांध दिया, जिससे

देश में शान्ति हो गई, और चहुँ ओर उन्नति होती दीखने लगी। कमाल को उभरता देख फारस में रिज़ा शाह, इटली में मुसोलीनी, पौलंड में पिल्सुडस्की, रूस में लेनिन और बाद में स्टालिन और जर्मनी में हिटलर चमका और इन महामानवों ने अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार अपने-अपने देशों को युद्ध से उत्पन्न हुए अँधेरे और निराशा से उभारा और उन्हें फिर से उत्साह और उद्यम का रास्ता दिखाया। मुसोलीनी और हिटलर के संकेत और सहारे से स्पेन में फ्रांको ने व्यवस्था स्थापित की।

और ध्यान से देखो तो इंगलंड, फ्रांस, और अमेरिका में, जहां कि प्रजातन्त्र-प्रणाली पराकोटि पर पहुंच चुकी है—शासकों के एक वर्ग की बात चलती है और एक बार शासन की बागडोर हाथ में आ जाने पर ये लोग अपने पैर जमाने की धुन में लग जाते हैं और प्रजा के हिताहित पर आँख मीच लेते हैं। जहाँ प्रजातन्त्र-प्रणाली एक व्यक्ति के बजाय व्यक्तियों के एक संघ के हाथ में शासन-सूत्र देती है वहाँ साथ ही वह मुसीबत आ जाने पर उसका प्रतीकार करने में अक्षम सिद्ध होती है। द्वितीय विश्वयुद्ध में पोलंड, नार्वे, डेनमार्क, बेल्जियम, फ्रांस आदि के साथ ऐसा ही हुआ और ये देश एक-एक करके जर्मन मशीन के सामने पिसते चले गए।

संसार में बढ़ती हुई कम्युनिज्म की धारा को डिक्टेटर ही रोक सके हैं और यदि योरप में हिटलर और मुसोलीनी न रहे होते तो आज सारे संसार पर बोल्शेविज्म की तूती बोलती और एक प्रकार से सारे विश्व पर ही स्टालिन की तानाशाही का दौरदौरा हो जाता।

किंतु जहाँ एकराज्य में इतने लाभ हैं वहाँ इसमें हानियाँ भी हैं। तानाशाही में एक व्यक्ति की इच्छा काम करती है और वह व्यक्ति कितना भी विज्ञ क्यों न हो समय पर चूक जाता है और अपने देश को मट्टी में मिला देता है। संसार में हिटलर से महान् नेता नहीं पैदा

हुआ, उसकी पोरी-पोरी में बिजली थी, उसके हर इशारे में दानवीय शक्ति थी—किंतु वह चूक गया और ब्रिटिश साम्राज्य की अतुल शक्ति को न पहचान पाया। परिणाम में उसे भारी पराजय मिली और उसका देश पददलित हो गया।

आखिर एक एक ही होता है और दो दो ही। एक के राज्य से हजार का राज्य अच्छा है। उसमें हजार आदमियों की राय तो रहती है। यह माना कि प्रजातन्त्र मुसीबत आने पर उसका सामना नहीं कर पाता—किंतु जब वह पूरी तरह जागता और काम करने पर उतरता है तो तानाशाही को मट्टी में मिला कर छोड़ता है। योरप में ऐसा ही हुआ। जर्मनी ने पहले धक्के में योरप के समस्त देशों को धराशायी कर दिया, किंतु जब ये देश सचेत हुए और इन्हें होश आई, इन्होंने उसकी अतुल सेनाओं को पराजित कर दिया और संसार में प्रजातन्त्र की भद्रता कायम कर दी।

एकराज में बहुधा देश की प्रजा पर अत्याचार होता है और एक व्यक्ति की इच्छा पर सारे देश का सब कुछ निर्भर रहता है। अपनी रक्षा के लिये वह व्यक्ति नियमों और अत्याचारों की ऐसी लड़ी बाँधता है कि देश की जनता त्राहि-त्राहि करने लगती है और देश की स्वाभाविक प्रतिभा और उमंग दब जाती है। इटली, जर्मनी और जापान में ऐसा ही हुआ था।

वास्तव में प्रजातन्त्र और एकराज्य के प्रचलित रूप समानरूप से दूषित हैं और हम संसार में देखते हैं कि दोनों ही प्रकार की व्यवस्था के नीचे संसार का मानववर्ग अमित क्लेश भोग रहा है। और जब हम प्रजा के सुख और समृद्धि की दृष्टि से शासन-व्यवस्थाओं पर गौर करते हैं तब हमें इङ्गलंड की शासन-व्यवस्था विश्व भर में श्रेष्ठ दीख पड़ती है। अंग्रेजों ने अपने सौम्य स्वभाव और दूरदर्शिता से शासन की ऐसी चारु व्यवस्था स्थापित की है, जिसमें देश के हर

व्यक्ति को अधिक से अधिक स्वतन्त्रता मिली हुई है और साथ ही हर व्यक्ति को अधिक से अधिक नियन्त्रण में भी रहना पड़ता है।

आत्म-संयम

आत्म-संयम का अर्थ है अपने मन तथा इन्द्रियों को रोकना या इच्छाओं को वश में करना। मन ही सब इन्द्रियों का मालिक है, इन्द्रियाँ उसकी आज्ञानुसार चलती हैं। अतः शास्त्रों में लिखा है "मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः"—अर्थात् मन ही मनुष्यों के बन्धन और मोक्ष का कारण है। इसकी गति मुँहजोर घोड़े के समान है। वह उलटे-सीधे मार्ग पर बेतहाशा दौड़ना चाहता है और अपने साथ इन्द्रियों को भी उलटे मार्ग में ले जाता है। अन्त को वह अपने सवार—मनुष्य—को अवनति के गढ़े में गिरा देता है। इस बे-लगाम घोड़े को उलटे रास्ते में जाने से रोकने—उसे उच्छृङ्खल न बनने देने—को ही आत्म-संयम कहते हैं।

मन बड़ा भयंकर है। बड़े-बड़े ऋषि, मुनि और तपस्वी भी इसके आगे हार मान चुके हैं, फिर जन-साधारण की तो बात ही क्या है! जितेन्द्रिय अर्जुन ने भी मन को जीतना कठिन समझ कर कातर शब्दों में भगवान् से कहा था—'चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद् दृढम्। तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्'—अर्थात् हे भगवान्, यह मन बड़ा चंचल, हठीला, दृढ़ और बलवान् है, इसे रोकना तो मैं वायु के रोकने के समान अत्यन्त दुष्कर समझता हूँ। जब अर्जुन का यह हाल था तब जन-साधारण का तो कहना ही क्या!

अच्छे कामों की अपेक्षा बुरे कामों में फँसने की मन की प्रवृत्ति अधिक होती है। थोड़ा-सा अनिष्ट हो जाने पर वह क्रोध से जल-भुन उठता है। पराई चीज़ को देखकर उसे हड़पने का लोभ उसमें पैदा हो जाता है। सांसारिक माया-मोह में फँसकर वह कर्तव्य-अकर्तव्य को भूल जाता है। अपनी बुद्धि, धन और सुन्दरता पर अहंकार कर

वह दूसरों का अपमान करता है। इसके अलावा इन पापों में वह इन्द्रियों को भी लपेट लेता है। इस तरह वह मनुष्य को नीचे ही नीचे घोर दुःख-सागर में गिराता जाता है।

काम, क्रोध आदि की किसी सीमा तक प्रत्येक मनुष्य को आवश्यकता होती है—काम से सृष्टि की वृद्धि, क्रोध से शत्रुओं का नाश, लोभ से जीविका-उपार्जन तथा धन-संग्रह, मोह से संतान-पालन आदि क्रियाएँ होती हैं, परंतु जब ये ही बातें सीमा का उलङ्घन कर जाती हैं, तो मन को रोकने की या आत्मसंयम की आवश्यकता होती है। यदि उस अवस्था में मन को वश में न किया जाय, तो भारी अनर्थों की संभावना होती है। क्रोध को ही देखिये—आत्मरक्षा के भाव को छोड़ कर यदि क्रोध किया जाय, तो अनर्थ हो जाता है। क्रोध में मनुष्य विवेक या विचार-शक्ति को खो बैठता है, फिर उसे किसी की सुध नहीं रहती, बात-बात में वह लड़ने लगता है और दूसरों को अपना शत्रु बना बैठता है। फलतः जीवन को दुःखमय बना लेता है। परंतु शान्त होने पर उसे अपने किये पर स्वयं पश्चात्ताप होता है। सारांश यह कि काम-क्रोध आदि में से किसी का भी अनुचित प्रयोग जीवन के लिए हानिकर है। परंतु प्रायः देखा जाता है कि मनुष्य यह जानते हुए भी इनका अनुचित प्रयोग करता है। इसका कारण है, उसके मन की असमर्थता या कमज़ोरी और इसी कमज़ोरी को दूर करने को आत्म-संयम कहते हैं।

आत्म-संयमी के विचार सुसंगठित होते हैं। वह जो कुछ विचारता है उसे विवेक-बुद्धि से शुद्ध कर लेता है। ऐसे मनुष्य का निश्चय दृढ़ होता है। परंतु इसके विपरीत आत्म-संयम के अभाव में विचारों की दृढ़ता नहीं होती और प्रायः अस्थिर विचार होने के कारण मनुष्य को इधर-उधर भटकना पड़ता है।

वर्तमान समय में 'आत्म-संयम' के लिए महात्मा गाँधी का जीवन उदाहरण रूप में पेश किया जा सकता है। आत्म-संयम के कारण ही

महात्मा जी संसार के सर्वश्रेष्ठ पुरुष माने गये हैं। महात्मा जी के विचारों को जानने के लिए संसार इसी कारण व्याकुल रहता है कि उनके विचारों में दृढ़ता और शुद्धिता होती थी। महात्मा जी ने मन तथा अपनी इन्द्रियों को अपने वश में कर रक्खा था। उनका मन जिस विषय पर विचार करने लगता था ठीक-ठीक विचार कर सकता था। मन वश में होने पर जटिल प्रश्न भी सहज ही में सुलझाए जा सकते हैं। हमारे प्राचीनकाल के ऋषि-मुनियों ने भी इसी आत्म-संयम के बल पर ही बड़ी-बड़ी कठिन समस्याओं को हल किया था। अतएव मन के वेग को रोकने को—चित्तवृत्ति के निरोध को—ही योग कहते थे।

अब प्रश्न होता है कि ऐसे भयंकर मन को वश में कैसे किया जाय? पहले कहा जा चुका है कि मन को वश में करना बड़ा कठिन है। जिस प्रकार संसार में भिन्न-भिन्न प्रकृति के मनुष्य दृष्टिगोचर होते हैं, उसी प्रकार मन की भी अवस्था समझिए। किसी का मन आसानी से और किसी का कठिनता से वश में होता है। मन को वश में करने के निम्न-लिखित साधन कहे जा सकते हैं:—

१. विषयों से वैराग्य—जब तक संसार की वस्तुएँ सुन्दर तथा सुख-प्रद मालूम होती हैं, तभी तक मन उनमें जाता है। यदि ये सब पदार्थ अनित्य तथा दुःखप्रद दीखने लगें तो मन कदापि उनकी ओर न जायगा।

२. नियम से रहना—यदि सारे काम ठीक समय पर किये जायँ, और हमेशा आदमी काम में लगा रहे तो मन वश में हो सकता है। खाली समय में ही मन में बुरे विचार आते हैं।

३. आत्मचिन्तन—प्रति दिन साँझ-सवेरे कुछ समय तक दिनभर के कार्यों पर विचार करना चाहिये, और यह देखना चाहिये कि आज मन किसी बुरे काम में तो नहीं लगा और यदि लगा हो तो यह प्रण करना चाहिये कि आगे से उसे उस मार्ग में नहीं जाने दूंगा।

४. मन को सत्कार्य में संलग्न रखना—ऊपर लिख चुके हैं कि मन कभी निकम्मा नहीं रहता; अतः सदा उसे अच्छे कामों में लगाना चाहिए।

५. सद्ग्रन्थों का अध्ययन—अच्छे ग्रन्थों के पढ़ने से मन के विचार शुद्ध रहते हैं।

६. प्राणायाम या समाधि—समाधि से भी मन को रोका जा सकता है।

आत्मसंयम का अभ्यास करना सब के लिए आवश्यक है, विशेष कर युवावस्था में। क्योंकि युवावस्था में सन्मार्ग से गिरने के अनेक अवसर आते हैं और यदि इस अवस्था में आत्म-संयम का अभ्यास कर लिया जाय तो शेष जीवन सुखमय बन जाता है।

संभाषण में शिष्टाचार

मनुष्य की विद्या, बुद्धि और स्वभाव का पता उसकी बातचीत से लग जाता है, इसीलिये उसे अपने विचार प्रकट करने के लिये बात-चीत में बड़ी सावधानी रखनी चाहिये। संभाषण में सावधानी की आवश्यकता इसलिये भी है कि बहुधा बात ही बात में कर्ष बढ़ आती है। यथार्थ में मनुष्य की बातचीत ही उसके कार्यों की सफलता और असफलता का कारण होती है। किसी कवि ने कहा है—'कहैं कृपाराम सीखिबो निकाम एक बोलिबो न सीखो सब सीखो गयो धूल में।' जिसकी बातचीत में सभ्यता वा शिष्टाचार का अभाव रहता है उससे लोग बातचीत करना नहीं चाहते।

संभाषण करते समय श्रोता की मर्यादा के अनुरूप 'तुम', 'आप' अथवा 'श्रीमान्' का उपयोग करना चाहिये। इनमें 'आप' शब्द इतना व्यापक है कि 'तुम' और 'श्रीमान्' का भी स्थान ग्रहण कर सकता है। 'तुम' का उपयोग अत्यन्त साधारण स्थिति के लोगों के लिये या अधिक घनिष्ठ परिचय वाले समवयस्क के लिये और 'श्रीमान्' का उप-

योग अत्यन्त प्रतिष्ठित महानुभावों के लिये किया जाय। बहुत ही छोटे लड़कों को छोड़कर और किसी के लिये 'तू' का उपयोग उचित नहीं है। किसी के प्रश्न का उत्तर देने में 'हाँ' या 'नहीं' के लिये केवल सिर हिलाना असभ्यता है। उसके बदले "जी हाँ" या "जी नहीं" कहने की बड़ी आवश्यकता है। बातचीत इस प्रकार रुक-रुक कर न की जाय कि श्रोता को उकताहट मालूम पड़ने लगे। बातचीत करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि बोलने वाला बहुत देर तक अपनी ही बात न सुनाता रहे, जिससे दूसरों को बोलने का अवसर न मिले और वे बोलने वाले की बक-बक से ऊब जायं। बातचीत बहुधा संवाद के रूप में होनी चाहिये, जिससे श्रोता और वक्ता—दोनों का अनुराग संभाषण में बना रहे।

सभ्य वार्तालाप में इस बात का ध्यान रक्खा जाता है कि किसी के जी को दुखाने वाली कोई बात न कही जाय। संभाषण को, जहाँ तक हो सके, कटाक्ष, आक्षेप, व्यंग्य, उपालम्भ और अश्लीलता से मुक्त रखना चाहिये। अधिकार की अहंमन्यता में भी किसी के लिये कटु शब्द का प्रयोग करना अपने को असभ्य सिद्ध करना है। किसी नए व्यक्ति के विषय में परिचय प्राप्त करने के लिए बातचीत में उत्सुकता न प्रगट की जाय और जब तक बड़ी आवश्यकता न हो किसी की जाति, वेतन, वंशावली, वय आदि न पूछा जाय। किसी से कुछ पूछते समय प्रश्नों की झड़ी लगाना उचित नहीं। यदि कोई सज्जन आपका प्रश्न सुनकर भी उत्तर न दें तो उसके लिये उनसे अधिक आग्रह न करनी चाहिये। यदि ऐसा जान पड़े कि वह उत्तर देना भूल गया है तो अवश्य ही नम्रता-पूर्वक दूसरी बार उससे प्रश्न किया जाय।

बातचीत में आत्म-प्रशंसा को यथा-संभव दूर रखना चाहिये। साथ ही बातचीत का ढङ्ग भी ऐसा न हो कि श्रोता को उसमें अपने अपमान की झलक दिखाई दे। बातचीत में विनोद बहुत ही आनन्द

जाता है, परंतु सदैव हँसी-ठट्ठा करने की टेव वक्ता और श्रोता दोनों के लिये हानिकारक है। संभाषण में उपमा और रूपक का प्रयोग भी बड़ी सावधानी से किया जाय, क्योंकि इसमें बहुधा अर्थ का अनर्थ हो जाने का भय रहता है। यदि वार्तालाप करते समय कवियों के छोटे-छोटे पद्यों और कहावतों का उपयोग किया जाय तो इनसे बोलचाल में सरलता और प्रामाणिकता आ जाती है; तथापि 'अति सब की बुरी होती है'।

यदि कोई दो-चार सज्जन इकट्ठे किसी विषय पर बातचीत कर रहे हों तो अचानक उनके बीच में जाना अथवा उनकी बातें सुनना अशिष्टता है। ऐसे अवसर पर लोगों के पास जाकर बिना कुछ पूछे ही बातचीत करने लगना अनुचित है। कभी-कभी किसी मनुष्य को चुपचाप देखकर लोग उससे कुछ कहने का आग्रह करते हैं। ऐसी अवस्था में उस मनुष्य का कर्तव्य है कि मनोरञ्जक बात या विषय छेड़कर उनकी इच्छा-पूर्ति करे।

किसी की असंभव बातें सुनकर भी उसकी हाँ में हाँ मिलाना चापलूसी है और न्याय-संगत बातें मानकर भी उनका खण्डन करना दुराग्रह है। लोगों को इन दोषों से बचना चाहिये। यद्यपि वार्तालाप में दूसरे का समर्थन करने से, अथवा उसकी प्रशंसा में दो-चार शब्द कहने में चापलूसी का कुछ आभास रहता है, तथापि इतनी 'चापलूसी' के बिना संभाषण नीरस और अप्रिय हो जाता है।

इसी प्रकार अपने मत का समर्थन करने और दूसरे के मत का खण्डन करने में कुछ न कुछ दुराग्रह सभ्य और शिक्षित समाज में क्षन्तव्य है। किसी अनुपस्थित सज्जन की अकारण निन्दा करना शिष्टता के विरुद्ध है और परनिन्दक को सभ्य तथा शिक्षित लोग बहुधा अनादर की दृष्टि से देखते हैं। विद्वानों के समाज में मत-भेद होने के अनेक कारण उपस्थित होते हैं, इसलिये जब किसी के मत-खण्डन का अवसर आवे तब बहुत ही नम्रता-पूर्वक और समा-

प्रार्थना करके उस मत का खण्डन करना चाहिये। खण्डन भी ऐसी चतुराई से किया जाय कि विरुद्ध मत वाले को बुरा न लगे। बातचीत में क्रोध के आवेश को रोकना चाहिये और यदि यह न हो सके तो उस समय मौन धारण ही उचित है। वचनों का उत्तर व्यंग्य से देना नीति की दृष्टि से अनुचित नहीं है, तथापि शिष्टाचार कम से कम एक बार सहन करने का परामर्श देता है।

जिससे बातचीत की जाती है उसकी योग्यता का विचार करके वर्णनात्मक अथवा विचारात्मक विषय पर संभाषण किया जाय। नवयुवकों से वेदान्त की चर्चा करना और वयोवृद्ध लोगों को श्रृङ्गार-रस की विशेषताएँ बताना शिष्टाचार के विरुद्ध है। सड़क पर खड़े होकर अथवा चलते हुए किसी स्त्री से (विशेषकर दूसरे घर की स्त्री से) बातचीत करना अशिष्ट समझा जाता है। यदि कोई मनुष्य किसी विचारात्मक कार्य में लगा हो तो उसके पास ही ज़ोर-ज़ोर से बात न करनी चाहिये। रोगी मनुष्य से अधिक समय तक बातचीत करना उसके लिये हानिकारक है, और इससे उसके रोग की भयंकरता का उल्लेख करना रोग से भी अधिक भयानक है।

यदि अपने किसी अनुपस्थित मित्र या संबन्धी की निन्दा की जा रही हो तो निन्दक को नम्रता-पूर्वक इस कार्य से विरत कर देना चाहिये और यदि इतने पर भी अपनी बात का कोई प्रभाव निन्दक पर न पड़े तो किसी बहाने उसके पास से उठ कर चले आना उचित है। इससे उसे अपनी मूर्खता और आपकी अप्रसन्नता का कुछ आभास हो जायगा। जो मनुष्य स्वयं अकारण दूसरे की निन्दा नहीं करता उसके सामने दूसरों को भी ऐसी निन्दा करने का साहस बहुधा नहीं होता।

किसी सभा-समाज या जमात में अपने मित्र अथवा परिचित व्यक्ति से ऐसी भाषा का अथवा ऐसे शब्दों का उपयोग न करना

चाहिये, जिन्हें दूसरे न समझ सकें; अथवा जो उन्हें विचित्र जान पड़ें। ऐसे अवसर पर किसी विशेष विषय को अथवा अपने ही धन्धे या नौकरी की बातें करने से दूसरे लोगों को अरुचि उत्पन्न हो सकती है। यदि किसी विशेष अथवा गहन विषय पर बहुत समय तक संभाषण करने की आवश्यकता न हो तो थोड़े-थोड़े समय के अन्तर पर विषय को बदल देना अनुचित न होगा।

बातचीत करते समय भाषा की उपयोगिता पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। कई लोग साधारण पढ़े-लिखे लोगों के साथ बातचीत करने में, 'विचार-स्वातन्त्र्य', 'व्यक्तिगत आक्षेप', 'वैयक्तिक धारणा' आदि शब्दों का उपयोग करते हैं, जो साधारण पढ़े-लिखे लोगों की समझ में नहीं आते। इसी प्रकार पण्डितों के समाज में मनुष्य के लिए 'मानस', माता के लिए 'महतारी' पिता के लिए 'बाप' और भोजन के लिए 'खाना' कहना असंगत है।

हिन्दी-भाषी लोग बहुधा श, ष और क्ष का अशुद्ध उच्चारण करने के लिए प्रसिद्ध हैं। इसलिये शिक्षित लोगों को इस उच्चारण-दोष से बचना चाहिये। कई 'उर्दूदां' सज्जन अपनी बात-चीत में सिर को 'सर', आंगन को 'सहन', बजाज को बज़्ज़ाज़ और कलम को 'क़लम' कह कर अपनी भाषा-विज्ञता का परिचय देते हैं, जो शिक्षित-हिन्दी-भाषी-समाज में उपहासयोग्य समझा जाता है। हमारे कई हिन्दी-भाषी भाई उर्दू-उच्चारण-शुद्धता के मोह में पड़कर, हिन्दी के 'ज' वाले शब्दों में 'ज़' की अशुद्ध झड़ी लगाते हैं और कदाचित् उसे अपनी उर्दूदानी का प्रमाण समझते हैं। पर यह उनकी भूल है। क्योंकि ऐसा उच्चारण अशुद्ध होने के कारण दोनों भाषा-भाषियों द्वारा उपहासास्पद होता है। हमने उर्दू न जानने वाले एक वकील महाशय को 'ज़ायदाद', 'मज़बूर', 'हर्ज़', और 'ताज़' कहते सुना है। कई एक महाशय तो 'मुझे ज़ल्दी घर ज़ाना है' कह कर वकील साहब

को भी मात कर देते हैं। यद्यपि हमने उपर्युक्त वकील साहब की शिष्टता के अनुरोध से उस समय उनकी भूल नहीं बताई, पर हमें उनकी यथार्थ 'उर्दूदानी' का पता चल गया। कई लोग भूल से हिन्दी के 'फ' अक्षर का 'फ़' कहते हैं, जिसका उदाहरण उनके 'फ़ल' 'फ़ूल' और फ़न्दा कहने में मिलता है।

शिष्ट भाषण में इन दोषों से बचने की बड़ी आवश्यकता है। बिना उर्दू पढ़े उस भाषा के ज़, फ़, क़ और ग़ का उच्चारण करने का किसी को साहस न करना चाहिए; क्योंकि इससे शिक्षित-समाज में, विशेषकर शिक्षित मुसलमानों में, हँसी होती है। ये लोग अपने शुद्ध उच्चारण पर बड़ा गर्व करते हैं और दूसरी जातियों के अशुद्ध उच्चारण की हंसी उड़ाया करते हैं। इसके लिए सबसे उत्तम उपाय यही है कि उनके उर्दू शब्दों का उच्चारण हिन्दी के प्रचलित अक्षरों में किया जाय। हिन्दी-लिपि में (उर्दू के संसर्ग से) अक्षरों के नीचे जो बिन्दी लगाने की अनिष्ट प्रथा है उसी से उच्चारण-सम्बन्धी ये सब भूलें होती हैं।

मातृभाषा में बातचीत करते समय बीच-बीच में अंग्रेज़ी शब्दों को मिलाकर एक प्रकार की खिचड़ी भाषा बोलने की जो दूषित प्रथा है उसका तो सर्वथा त्याग किया जाना चाहिए। भारतवर्ष में इस 'खिचड़ी-संभाषण-प्रथा' का तो इतना प्रचार है कि कदाचित् ही कोई प्रान्त इसके आधिपत्य से बचा हो।

इसी प्रकार मातृभाषा में ऐसे प्रान्तीय शब्द भी न लाये जायं जो या तो बिलकुल भदेस हों या दूसरे प्रान्त वाले जिन्हें समझ न सकें। बिना किसी कारण के अपनी मातृभाषा को छोड़ अन्य भाषा में बात-चीत करना शिष्टता के विरुद्ध है।

—कामताप्रसाद गुरु

हिन्दू समाज और उसकी त्रुटियां

भारतवर्ष में अधिकांश जनसंख्या हिन्दू लोगों की है। जिस प्रकार देश के विचार से हिन्दू जाति सब से अधिक व्याप्त है उसी प्रकार काल के संबन्ध से यह सब से अधिक प्राचीन भी है। इस कारण इस जाति के लोगों में नाना प्रकार की विचार-धाराएँ और नाना प्रकार की प्रथाएँ वर्तमान हैं। इन विचार-धाराओं और प्रथाओं में कुछ ऐसी हैं जो बहुत प्राचीन होती हुई भी बहुत उपयोगी हैं और कुछ ऐसी हैं जो परिस्थितियों के बदल जाने से अब अनुपयोगी हो गई हैं। बहुत-सी प्रथाएँ ऐसी भी हैं जिनका असली रूप बदल गया है और इस बदले हुए रूप में उनका सारा तत्त्व जाता रहा है। ऐसे प्राचीन समाज में कुरीतियों और त्रुटियों का होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। इन त्रुटियों का बहुत अंश में निराकरण भी होता जा रहा है, किंतु जहां पर शिक्षा का प्रकाश पूरे तौर से नहीं पहुँचा है और विचार की अपेक्षा परंपरा और रूढ़ि का अधिक आदर है वहां पर वे अब भी अपने भीषण रूप में वर्तमान हैं। इन त्रुटियों में से कुछ एक का उल्लेख यहाँ किया जाता है।

हिन्दू समाज में जाति-पाँति का विचार वर्ण-व्यवस्था के आधार पर चला है। वर्ण-व्यवस्था का मूल तत्त्व प्रेम और सहकारितापूर्ण कार्य-विभाग में है। वर्ण-विभाग से वंश-क्रमानुगत कौशल का लाभ उठा कर लोग अपने-अपने कार्य में अधिक निपुणता प्राप्त कर सकते थे। लुहार का लड़का जितनी जल्दी लोहे का काम सीख सकता है उतनी जल्दी दूसरा लड़का, जब तक विशेष प्रतिभावान न हो, नहीं सीख सकता। इसके अतिरिक्त इस वर्ण-व्यवस्था ने हिन्दू-धर्म की बड़ी रक्षा की है। इसके कारण लोग अन्य धर्म स्वीकार करने से बचे रहे हैं। प्राचीन समय में वर्ण-व्यवस्था ने जातीय संगठन में बहुत कुछ योग दिया था। किंतु धीरे-धीरे लोग इस वर्ण-व्यवस्था का वास्तविक

उद्देश्य भूल गये और उसकी ऊपरी रूढ़ियों को पकड़े रहे। अतः जो वर्ण-व्यवस्था पहले कार्य-विभाग पर आश्रित थी वह अब केवल जन्म पर आश्रित रह गई। जब ब्राह्मण का बेटा ही ब्राह्मण कहलाने लगा तब उसने अपना मुख्य कार्य पढ़ना-पढ़ाना तो छोड़ दिया, केवल हन्दे माँगना, ऊटपटाँग कुछ बोल कर विवाह आदि संस्कार कराना और दक्षिणा लेना ही उसका काम रह गया। धीरे-धीरे जाति और उपजातियों का ऐसा कठिन जाल बन गया है कि उसमें से हिन्दू जाति का निकलना कठिन हो गया है। जो वर्णाश्रम धर्म संगठन का सूत्र था वही अब विच्छेद का कारण बन गया है। धर्म के नाम पर लोग दूसरों पर अत्याचार करते हैं। लोग वर्ण को महत्त्व देते हैं, चरित्र और व्यक्ति को नहीं। ऊँचे वर्ण का दुराचारी भी आदर पाता है और नीच वर्ण का सदाचारी भी अपने वर्ण के कारण अपमानित होता है और उच्च वर्ण में उत्पन्न मनुष्य निकम्मा और खाली होने पर भी कोई ऐसा काम करने को तैयार नहीं होता जो नीच वर्ण के लोग करते हैं। हर्ष की बात है कि शिक्षा-प्रचार के साथ-साथ ये जाति-पाँति के बन्धन अब कुछ ढीले होते जा रहे हैं। पर विवाह आदि के अवसर पर अब भी जाति-पाँति का बहुत ख़याल रक्खा जाता है। जाति के बाहर विवाह करने में लोग किसी तरह भी तय्यार नहीं होते। फल इसका यह होता है कि बहुत बार इच्छा के विरुद्ध अयोग्य वरों को भी कन्याएँ देनी पड़ती हैं।

विवाह एक बड़ा महत्त्वपूर्ण संस्कार है। विवाह के आधार पर ही पारिवारिक जीवन, जो सामाजिक जीवन का मूल अंग है, खड़ा है; किंतु हिन्दू समाज में इसी मुख्य प्रथा में बहुत सी त्रुटियाँ हैं। बाल-विवाह और वृद्धविवाह आज कल भी चल रहे हैं। यह समाज के लिए कलङ्क हैं। एक ओर विधवाओं की संख्या बढ़ाने के लिए बाल-विवाह और वृद्ध-विवाह की कुप्रथाएँ चल रही हैं, दूसरी ओर

विधवाओं पर ज़रूरत से ज्यादा नियन्त्रण लगा है। पुरुषों पर कोई अंकुश नहीं और स्त्रियों के लिए सब प्रकार के बन्धन हैं।

इनके सिवा दहेज की प्रथा ऐसी है जो कन्या के माता-पिता को सदा चिन्ता में डाले रखती है। कन्याओं के विवाहों पर जितना धन व्यय किया जाता है उतना उनकी शिक्षा पर नहीं किया जाता। कहीं-कहीं तो विवाह बरबादी का साधन बन जाता है। लोग कर्ज़ा लेकर अपनी संपत्ति से हाथ धो बैठते हैं।

स्त्रियों के प्रति जो अत्याचार होते हैं उनमें पर्दा मुख्य है। पर्दे से स्त्रियों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। वे स्वच्छ वायु से पूर्ण लाभ नहीं उठाने पातीं। जो स्त्रियाँ पर्दे में रहती हैं वे इस विचार से कि उनको कहीं जाना नहीं है अथवा उनको कोई देखेगा नहीं, मलिन वस्त्र धारण किये रहती हैं। घर में ही बन्द रहने से कूप-मण्डूक की भांति उनका ज्ञान भी संकुचित रह जाता है। पर्दा-प्रथा उठा देना निर्लज्जता का पर्याय नहीं है। यद्यपि यह स्वीकार करना पड़ता है कि कहीं-कहीं पर्दा उठा देने का दुरुपयोग हुआ है, तथापि उस दुरुपयोग के लिए स्त्रियों को दोषी ठहरा कर हम उनके साथ अन्याय करते हैं। जिस प्रकार स्त्रियों पर नियन्त्रण किया जाता है वैसा पुरुषों पर भी होना आवश्यक है।

साधु-सेवा यद्यपि बुरी नहीं है पर हिन्दुओं की अन्धभक्ति ने लाखों निकम्मे साधु पैदा कर दिये हैं, जो कुछ काम-धन्धा तो करते नहीं केवल समाज पर भार रूप हैं। यदि हिन्दुओं में इतनी अन्धभक्ति न हो और इन साधुओं को इस प्रकार खाली बैठे खाने को न मिले तो अपने आप ये किसी न किसी काम में लग जांय। पीछे एक बार कुम्भ के मेले पर हमें इन साधुओं का जमघट देखने का अवसर मिला था। हम तो यह देख कर हैरान रह गये थे कि किस प्रकार हिन्दू समाज इतने साधुओं को पाल रहा है। इसी प्रकार की छोटी-छोटी कुछ और

बुराइयाँ भी हैं; पर अब कुछ समाज-सुधारकों के प्रयत्न से और कुछ, पश्चिमी सभ्यता के संपर्क से धीरे-धीरे ये बुराइयाँ दूर हो रही हैं। ईश्वर वह दिन जल्दी लावे जब इनका बिलकुल अन्त हो जाय।

भारतवर्ष के लिये एक राष्ट्र-भाषा और एक राष्ट्र-लिपि

राष्ट्र के लिये दो बातें आवश्यक मानी गई हैं। एक भूगोल-संबन्धी एकता और दूसरा संमिलित राजनीतिक हित। भारतवर्ष में दोनों बातें होने से उसके राष्ट्र होने में कोई संदेह नहीं है। इसी के साथ यह बात भी निर्विवाद रूप से मानी जाती है कि राष्ट्र के लिये एक भाषा और एक लिपि आवश्यक है। इसके बिना न जातीय संगठन हो सकता है, और न एक-सूत्रता आ सकती है। देश में एक सूत्र पर काम चलाने के लिए व्यापक भाषा चाहिये, जिसको सब लोग

के लिये भी यह आवश्यक है कि जो भाषा जन-साधारण में बोली जाती हो उसी में कानून बनें और सारे देश में एक ही कानून होने के लिये एक व्यापक भाषा भी चाहिए। केवल शासन के सुभीते के लिये ही एक राष्ट्रभाषा की आवश्यकता नहीं है अपितु ज्ञान और कला-कौशल-संबन्धी सहयोग के लिये भी एक व्यापक भाषा की आवश्यकता है।

विवेचन से यह स्पष्ट हो चुका है कि राष्ट्र-भाषा ऐसी होनी चाहिए जो सुलभ हो और जिसे सब लोग समझ सकें। दूसरी बात राष्ट्र-भाषा के लिये यह आवश्यक है कि उसके द्वारा राजकीय तथा विज्ञान और कला-कौशल-संबन्धी लिखा पढ़ी अच्छी तरह हो सके। राष्ट्र-भाषा के लिये यह भी आवश्यक है कि उसमें उन्नति की गुञ्जाइश होते हुए भी थोड़ी स्थिरता हो, अर्थात् उसके शब्दों का साधारण आकार-प्रकार निश्चित हो गया हो और उसमें थोड़ा लचीलापन भी हो, अर्थात् आवश्यकता के अनुकूल

उसमें नये शब्द बन सकें और दूसरी भाषाओं के शब्द हज़म हो सकें।

राष्ट्रलिपि के लिये निम्नलिखित बातें आवश्यक हैं:—

१. वह आसानी से सीखी जा सके।

२. उसमें जो लिखा जाय वही पढ़ा जाय। उसमें सब भाषाओं के शब्द लिखे जा सकें।

३. वह जल्दी लिखी जा सके।

अब प्रश्न होता है कि ऐसी भाषा कौन-सी है जिसमें ऊपर के गुण पाए जाते हैं। इस समय देश में दो ही भाषाएँ व्यापक भाषाएँ कही जा सकती हैं; एक अंग्रेजी और दूसरी हिन्दी या हिन्दुस्तानी, जिसमें उर्दू भी शामिल है। शेष बँगला, मराठी आदि भाषाएँ अपने-अपने प्रान्त तक ही सीमित हैं। यद्यपि अंग्रेज़ी भाषा भारत के सब प्रान्तों में व्यवहृत होती है तथापि उसका व्यवहार पढ़े-लिखे लोगों में ही है, साधारण लोगों में नहीं। लोग हाईस्कूल की परीक्षा पास कर लेने पर भी उसका व्यवहार करना नहीं जानते। ग्रेजुएट होकर भी उस पर पूरी तौर से प्रभुत्व नहीं प्राप्त किया जा सकता। कारण यह है कि वह हमारे लिए सुतरां विदेशी भाषा है, और केवल विदेशी राज्य होने के कारण ही हम पर ठूंसी जाती रही है। हिन्दी भाषा देश के अधिकांश भाग में बोली और समझी जाती है। बंगाल, पंजाब, गुजरात और महाराष्ट्र की भाषाओं से वह इतनी मिलती-जुलती है कि वहाँ के लोग इसको थोड़े ही प्रयत्न से सीख सकते हैं। मद्रास के लोग भी इसको सुगमता के साथ सीख लेते हैं। इसलिए हिन्दी पढ़े-लिखे लोगों की ही नहीं अपितु अनपढ़ लोगों की भाषा भी बन सकती है। राष्ट्रभाषा ऐसी ही भाषा हो सकती है, जो शिक्षित और अशिक्षित सब [illegible] से समझी और बोली जा सके।

हिन्दी भाषा में स्थिरता के साथ लचीलापन भी है। यह भारतवर्ष में प्रायः एक हज़ार वर्ष से वर्तमान है और इसका रूप घुट-मँज गया

है। इसमें वर्तमान भाषाओं के सब गुण हैं। विभक्तियाँ लगाने के लिये इसमें शब्दों के रूप बदलने नहीं पड़ते, इसलिये अन्य भाषाओं के शब्द इसमें अच्छी प्रकार खप जाते हैं। ऊपर हमने जो कुछ लिखा है वह बोल-चाल की भाषा के लिये लिखा है। बोल-चाल की हिन्दी और उर्दू में कुछ भी अन्तर नहीं। दोनों की क्रियाएँ और विभक्तियाँ बिलकुल एक-सी हैं। दोनों में केवल इतना अन्तर है कि हिन्दी अपना शब्दकोष संस्कृत से लेती है और उर्दू फारसी से। साहित्यिक हिन्दी में संस्कृत के शब्दों की अधिकता होगी और साहित्यिक उर्दू में फारसी की। इसलिए भारत की बोल-चाल की भाषा का तो कोई झगड़ा नहीं, वह तो ऐसी ही भाषा होगी, जिसमें न अधिक संस्कृत के शब्द हों और न अधिक फारसी के। फिर उसे चाहे हिन्दी कह लें चाहे उर्दू कह लें और चाहे हिन्दुस्तानी कह लें।

साहित्यिक भाषा और लिपि का प्रश्न ज़रा कठिन है। पर उसके लिए उर्दू की अपेक्षा हिन्दी अधिक उपयुक्त है। कारण यह है कि उर्दू भारत की अन्य भाषाओं—गुजराती, मराठी, पंजाबी और बँगला आदि के इतनी निकट नहीं है जितनी कि हिन्दी। हिन्दी के समान ये सब भाषाएं भी अपनी शब्दावली संस्कृत से ही लेती हैं। लिपि के बारे में तो यह मानना ही पड़ेगा कि देवनागरी लिपि ही भारत के लिये सब से अधिक उपयुक्त है क्योंकि वह फारसी और अंग्रेज़ी लिपि की अपेक्षा अधिक वैज्ञानिक है। उसमें अधिक से अधिक ध्वनियाँ हैं, तथा ध्वनियों का पूर्ण विश्लेषण कर लिया गया है। एक ध्वनि के लिये एक ही चिन्ह (अक्षर) है। अंग्रेज़ी की भाँति इस में 'जी' (g) 'ज' और 'ग' की ध्वनि नहीं देता और न 'सी' (c) से 'स' और 'क' की ही ध्वनि निकलती है। फारसी की तरह इसमें एक ध्वनि के लिये बहुत से अक्षर भी नहीं हैं। जैसे 'त' के लिये 'तोय' और 'ते' तथा 'स' के लिये 'सीन', 'स्वाद' और 'से'। इसके सिवाय

देवनागरी लिपि भारत की अन्य भाषाओं, बँगला, गुजराती, मराठी, पंजाबी आदि की लिपियों से इस बारे में भी मिलती है कि इन सब की वर्णमाला एक ही है। केवल अक्षरों के रूप में ही ज़रा-ज़रा अन्तर है। मराठी और देवनागरी लिपि तो हैं ही एक, इन दोनों में किसी प्रकार का भी अन्तर नहीं है। इसीलिये इन सब प्रान्तों के निवासी फारसी की अपेक्षा देवनागरी लिपि को बहुत जल्दी अपना सकते हैं। इन सब कारणों से हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि ही भारतवर्ष की राष्ट्र-भाषा और राष्ट्रलिपि होने की योग्यता रखती है।

बुढ़ापा

लड़कपन के खो जाने पर उन्मत्त जवानी फूल-फूलकर हँस रही थी, बुढ़ापे के पाने पर फूट-फूट कर रो रही है। उस खोने में दुःख नहीं, सुख था, सुख ही नहीं, स्वर्ग भी था। इस "पाने" में सुख नहीं, दुःख है, दुःख ही नहीं, नरक भी है! लड़कपन का खोना—वाह! वाह!! बुढ़ापे का पाना—हाय! हाय!!

कौन कहता है कि जीवन का अर्थ उत्थान है, सुख है, हा हा हा हा है? यह सब सफेद झूठ है, कोरी कल्पना है, धोखा है, प्रवञ्चना है। मुझ से पूछो। मेरे तीन सौ पैंसठ लम्बे-लम्बे दिनों और लम्बी-लम्बी रातों वाले—एक, दो, दस, बीस नहीं—साठ वर्षों से पूछो। मेरे कटु अनुभव से पूछो। मेरी लाचारी से पूछो, दुर्बलता से पूछो। वे तुम्हें, दुनिया के बालकों और जवानों को, बतलायेंगे कि जीवन का अर्थ "वाह" नहीं, "आह" है, हंसी नहीं, रोदन है; स्वर्ग नहीं, नरक है।

लड़कपन ने पन्द्रह वर्षों तक घोर तपस्या कर के क्या पाया?—जवानी के रूप में सर्वनाश, पतन। जवानी ने बीस वर्षों तक कभी धन के पीछे, कभी रूप के पीछे, कभी यश के पीछे, और कभी मान के पीछे दौड़ लगाकर, क्या हासिल किया? वार्धक्य के लिफ़ाफे में

सर्वनाश, पतन! अब यह बुढ़ापा घंटों नाक दबाकर, ईश्वर भजन कर, सिद्धियों की साधना में दत्तचित्त होकर खननन का खज़ाना कर कौन-सी बड़ी विभूति अपनी मुट्ठी में कर लेगा ?—वही सर्वनाश—वही पतन। मुझ से पूछो, मैं कहता हूँ, और छाती ठोंक कर कहता हूँ, जीवन का अर्थ है, "प······त······न !"

(२)

उस दिन गली पार कर रहा था कि कुछ दुष्ट लड़कों की नज़र मुझ पर पड़ी। उनमें से एक ने कहा—

"हट जाओ, हट जाओ! हनुमान-गढ़ी से भागकर यह जानवर इस शहर में आया है। क्या अजीब शक्ल पाई है। पूरा किष्किन्धा-वासी मालूम पड़ता है।"

बस; बात लग गई। बूढ़ा हो जाने से ही बन्दर हो जाता है? इतना अपमान? बूढ़ों की इतनी अप्रतिष्ठा? झुकी हुई कमर को कुबड़ी के सहारे सीधी करके मैंने उन लड़कों को कहा—

"नालायको! आज कमर झुक गई है। आज आँखें कम देखने और कान कम सुनने के आदी हो गये हैं। आज, दुनियां की तस्वीर भूले हुए स्वप्न की तरह झिलमिल दिखाई दे रही है। आज विश्व की रागिनी अतीत की प्रतिध्वनि की तरह अस्पष्ट सुनाई पड़ रही है। मगर, हमेशा यही हालत नहीं थी।"

"अभी छोकरे हो, बच्चे हो, नादान हो। तुम क्या जानो कि संसार परिवर्तन-शील है। तुम क्या जानो कि प्रत्येक बालक, अगर जीता रहा तो, जवान होता है; प्रत्येक जवान, अगर जल्द ख़तम न हो गया तो, एक न एक दिन 'हनुमान गढ़ी का जानवर' होता है। लड़कपन और जवानी के हाथों बुढ़ापे पर जैसे अत्याचार होते हैं यदि वैसे ही अत्याचार बुढ़ापा भी उन पर करने लगे तो ईश्वर की सृष्टि की इति हो जाय। बच्चे जन्मते ही मार डाले जायं। लड़के होश संभालते ही

अपनद पेट पालने के लिए घर से बाहर निकाल दिये जायें। संसार से दादा के माल पर फ़ातिहा पढ़ने की प्रथा उठ जाय।"

"अब भी सौ में निन्यानवें धनी अपने बूढ़े बापों की कृपा से गद्दीदार बने हुए हैं। अब भी हजार में नौ सौ साढ़े निन्यानवें शौकीन जवानों के भड़कीले कपड़ों के दाम, कंघी, शीशा, ओटो, लवेण्डर, सोप, पाउडर, पालिश के पैसे बूढ़ों की कमाई की थैली से निकलते हैं। अब भी संसार में दया, प्रेम, करुणा और मनुष्यता की खेती में पानी देने वाला कमज़ोर हृदय-वाला बुढ़ापा ही है, बेवकूफ लड़कपन नहीं, मतवाली जवानी नहीं............।"

"फिर बूढ़ों का इतना अपमान क्यों? बुढ़ापे के प्रति ऐसी अश्रद्धा क्यों?"

मगर, उन लड़कों के कान तक मेरी दुहाई की पहुँच न हो सकी। सब ने, एक स्वर से ताली बजा बजाकर मेरी बातों की चिड़ियों को हवा में उड़ा दिया।

"भागो! भागो!! हनुमान जी खौंव-खौंव कर रहे हैं। ठहरोगे तो किटकिटा कर टूट पड़ेंगे, नोच खाने पर उतारू हो जायेंगे।"

लड़के हू-हू हो-हो करते भाग खड़े हुए। मैं मुग्ध की तरह उनके अल्हड़पन और अज्ञान की ओर आँखें फाड़-फाड़ कर देखता ही रह गया। उस समय एकाएक मुझे उस सुन्दर स्वप्न की याद आई जो मैंने आज से युगों पूर्व लड़कपन और यौवन के संमेलन के समय देखा था। कैसा मधुर था वह स्वप्न!

(३)

एक बार जुआ खेलने को जी चाहता है। संसार बुरा कहे या भला—परवाह नहीं। दुनिया मेरी हालत पर हँसे या हजो करे—कोई चिन्ता नहीं। कोई खिलाड़ी हो, तो सामने आये। मैं जुआ खेलूँगा

एक बार जुआ खेलने को जी चाहता है। जी चाहता है—एक ओर मेरा साठ वर्षों का अनुभव हो, मेरे सफेद बाल हों, झुर्रीदार चेहरा हो, कांपते हाथ हों, झुकी कमर हो, मुर्दा दिल हो, निराश हृदय हो और मेरी जीवन भर की गाढ़ी कमाई हो, सैकड़ों वर्षों के प्रत्येक सन् के हजार-हजार रुपये, लाख-लाख गिन्नियां और गड्डियों नोट एक ओर हों और कोरी जवानी एक ओर हो। मैं पांसे फेंकने को तैयार हूँ। सब कुछ देकर जवानी लेने को राज़ी हूँ। कोई हकीम हो तो सामने आये, उसे निहाल कर दूँगा; मैं बुढ़ापे के रोग से परेशान हूँ—जवानी की दवा चाहता हूँ। कोई डाक्टर हो तो आगे बढ़े, मुँह मांगा दूँगा। कह चुका हूँ, कह रहा हूँ, निहाल कर दूँगा, मालामाल कर दूँगा।

हर साल वसन्त आता है। बूढ़े-से-बूढ़ा रसाल माथे पर मौर धारण कर ऋतुराज के दरबार में खड़ा होकर झूमता है। सौरभ-संपन्न शीतल समीर मन्द-गति से प्रकृति के कोने-कोने में उन्माद भरता है। कोयल मस्त होकर "कूहू-कूहू" करने लगती है। मुहल्ले-टोले के हँसते हुए गुलाब-नवयुवक उन्माद की सरिता में सब कुछ भूलकर विहार करने लगते हैं, खिलखिलाते हैं, धूमचौकड़ी मचाते हैं और मैं टका सा मुँह लिये, कोरी आँखों तथा निर्जीव हृदय से इस लीला को टुकुर-टुकुर देखा करता हूँ। उफ !

उस समय मालूम पड़ता है, बुढ़ापा ही नरक है। इस नरक से कोई मुझे बाहर कर दे, युवक बना दे। मैं आजन्म गुलामी करने को तैयार हूँ। बुढ़ापे की बादशाही से जवानी की गुलामी करोड़ दर्जा अच्छी है; हाँ-हाँ, करोड़ दर्जा अच्छी है। मुझ से पूछो, मैं जानता हूँ मैं भुक्त-भोगी हूँ, मुझ पर बीत रही है।

मगर नहीं। वार्धक्य वह रोग नहीं, जिसकी दवा की जा सके। यह मर्ज़ ही लाइलाज है। यह दर्द-सर ऐसा है कि सर जाय तो जाय पर दर्द न जाय।

लड़कपन के स्वर्ग का विस्मृतिमय अद्वितीय सुख देख चुका। जवानी की अमरावती में विविध भोग-विलास कर चुका। अब बुढ़ापे के नरक में आया हूँ। भोगना ही पड़ेगा। इस नरक से मनुष्य की तो हस्ती ही क्या है, ईश्वर भी छुटकारा नहीं दिला सकता। बुढ़ापा वह पतन है जिसका उत्थान केवल एक बार होता है और वह होता है—दहकती हुई चिता पर। हमारे रोग की अगर दवा है तो एक "जाह्नवी तोयं"; यदि वैद्य है तो एक—"नारायणो हरिः"

फिर अब देर काहे की, प्रभो! दया करो, 'समन' भेजो, जीवन की रस्सी काट डालो। अब यह नरक भोगा नहीं जाता। भवसागर में हाथ मारते-मारते थक गया हूँ। मेरा जीवन-दीपक स्नेह-शून्य है, गुणरहित है, प्रकाशहीन है। इसका शीघ्र ही नाश कर, पञ्चतत्त्व में लय करो।

फिर से, नये सिरे से निर्माण हो; फिर से, नये सिरे से सृष्टि हो; फिर से, नये सिरे से जन्म हो; फिर से, नये सिरे से शैशव हो; फिर से, नये सिरे से यौवन हो; फिर से, नये सिरे से सुख हो; आमोद हो, विनोद हो, कविता हो, प्रेम हो, पागलपन हो।

फिर अब देर काहे की प्रभो! दया करो, 'समन' भेजो; जीवन की रस्सी काट डालो!

बेचन शर्मा 'उग्र'

अल्पविद्या की हानियाँ

बहुधा थोड़ा पढ़े आदमी अभिमानी बन जाते हैं और अपने आप को ज्ञान का भण्डार मान अपनी और अपने समाज की हानि करते हैं। थोड़ी-सी पुस्तकी विद्या पढ़कर ये समझने लगते हैं कि बस यहीं विद्या का अन्त है और अपने आप को विद्वान् समझ मनमाना आचरण करने लगते हैं। बहुधा ऐसे व्यक्ति धनी होते हैं; इसलिए समाज की बहु-संख्या इनके पीछे लग लेती है।

अच्छी तरह पढ़ा लिखा आदमी अपनी त्रुटियों को देखना सीख जाता है; और अभिमान आदि दोषों से दूर रहता हुआ वह निरन्तर ज्ञानार्जन में लगा रहता है। ज्ञान-समुद्र के तट पर खड़ा हो वह अपने संमुख ज्ञान की अमित राशि को फैली हुई देखता है और उसमें से जितनी भी ग्रहण की जा सके करता है। एक सच्चे विद्वान् का दृष्टिकोण ऐसा ही होना चाहिए।

अल्पज्ञानी पुरुष समाज के लिये हानिकर होता है। उदाहरण के लिये एक नीम हकीम को लो। यह व्यक्ति हकीमों और डाक्टरों के पास बैठ कुछ नुसखे एकत्र कर लेता है; और उस चूहे की नाँई, जो कत्तर पाकर अपने आपको बजाज समझने लगा था, यह अपने आपको धन्वन्तरि गिनने लग जाता और रोगियों को मनमानी दवाइयाँ देकर उनका नाश करना आरम्भ कर देता है। जब इसकी दवाइयों से रोगी मरने लगते हैं तब यह भाग्य की दुहाई दे उनके संबन्धियों का ढाढस बंधाता है। एक ऐसा व्यक्ति जो इंजिन की झाड़ पूंछ करता हुआ उसके पुरजों को पहचानने लगता है, मौका पड़ने पर सारे इंजिन को मट्टी में मिला सकता है। इसी प्रकार एक ऐसा व्यक्ति, जो हवाई जहाज के कलपुरजे देख अपने आप को पक्का मिस्तरी मानने लग जाय, समय पड़ने पर हवाई जहाज को नष्ट कर सकता है। और भी बहुत-सी चीज़ें हैं, जिन पर हाथ डालने से पहले उनका गहन अध्ययन करना आवश्यक है।

एक ऐसा अध्यापक जो अपने विषय को भली भांति नहीं जानता छात्रों के लिये अमिट हानि का कारण बन सकता है। वह उनके मस्तिष्क में अस्पष्ट और अयथार्थ बातें भर सकता है। इसी प्रकार एक वकील, जो अपनी विद्या को भली भांति नहीं जानता सैंकड़ों मुवक्किलों को धोखा दे सकता है। एक राजनीतिक नेता, जो अर्थ-

शास्त्र और नीतिशास्त्र का निष्णात पण्डित नहीं है, परीक्षा के समय अपने देश को खाक में मिला सकता है।

अल्पशिक्षित आदमी से हर समझदार व्यक्ति दूर रहना चाहता है। ऐसे व्यक्ति अपने सिद्धान्तों और मन्तव्यों को दूसरों पर थोपने की कोशिश करते और जो उनके मन्तव्यों को नहीं मानते, उनकी निन्दा करते हैं।

अल्पशिक्षा की बीमारी जब किसी श्रमी या किसान को लगती है तब उसका रूप भयंकर हो उठता है और ऐसा अल्पशिक्षित आदमी अपने हाथ से काम करना पाप समझ अपने साथियों को भी काम से जी चुराना सिखा देता है। वह हर समय इन लोगों को ज्ञान की चर्चा सुनाता रहता है; किंतु क्योंकि उसका ज्ञान बहुधा अन्धविश्वास और अन्धश्रद्धा-रूप होता है, श्रोता लोग उसकी बातें सुन स्वयं इन बीमारियों में फँस जाते और अपनी हानि कर बैठते हैं।

किंतु ध्यान से देखने पर थोड़ी पढ़ाई कोई अक्षम्य अपराध नहीं ठहरती। जो लोग थोड़ा पढ़कर इस बात को समझते और मानते हैं कि उनका ज्ञान अल्प है, अभिमानी नहीं बनते और शान्ति के साथ अपना जीवन बिता देते हैं। इसके विपरीत वे लोग, जो थोड़ा पढ़कर अपने आप को व्यासमुनि मानने लगते हैं, अभिमानी बन जाते और आजीवन असंतोष, अभिमान और तृष्णा में अपने दिन काटते हैं।

मनुष्य का कर्तव्य है कि वह ज्ञानार्जन करता चला जाय और इस विषय में कभी भी संतोष धारण न करे; क्योंकि ज्ञानार्जन में संतोष करके बैठ रहना अपने ज्ञान को कुण्ठित कर लेना है।

करत करत अभ्यास के जड़-मति होत सुजान

"करत करत अभ्यास के जड़-मति होत सुजान" का आशय है कि मनुष्य को धैर्य और लगन के साथ विद्याभ्यास में लगे रहना चाहिये;

तभी उसे विद्या में पूर्णता प्राप्त होती है। विद्या बरस, दो बरस में नहीं पढ़ी जा सकती और कोई भी महान् कार्य महीने और बरस में पूरा नहीं हो जाता। जितना अधिक और महान् कार्य होगा उसमें सफलता पाने के लिये उतने ही अधिक धैर्य और लगन की आवश्यकता पड़ेगी। चाहे कोई कितना भी प्रतिभा-संपन्न क्यों न हो, विद्याभ्यास में उसे भी परिश्रम करना पड़ता है और बड़े धैर्य से शनैः-शनैः ज्ञानार्जन करना पड़ता है। वास्तव में जिसे हम प्रतिभा कहते हैं वह बुद्धि भी एकान्त में अभ्यास के द्वारा ही प्राप्त होती है, और जगत् में जितने बड़े-बड़े प्रतिभाशाली व्यक्ति हुए हैं उन सब ने एकान्त में बड़े अध्यवसाय के साथ अपनी बुद्धि को मांजा और साधा है। संसार में जितने महान् लेखक या तत्त्वज्ञ हुए हैं उन्हें अपने ग्रन्थों के निर्माण में बरसों एकान्त में तपस्या करनी पड़ी है। बर्नर्ड शा ने चालीस बरस की अवस्था में नाटक लिखने आरम्भ कर दिये थे, तब जाकर कहीं आज उनकी रचनाओं में पूर्णता आ पाई है।

किसी भी महान् लेखक की रचना में अर्थ और शब्द की परिपूर्णता और परिपक्वता लगातार कठोर श्रम के बिना नहीं आती और हर एक ख्यातनामा लेखक को संसार में नाम कमाने के लिये अनेक बार अपनी रचनाओं को बना-बना कर फाड़ देना पड़ता है।

प्रकृति की ओर देखो; फूलों में सौन्दर्य खिलाने के लिये, पौधों को बड़ा बनाने के लिये, बालक को युवा बनाने के लिये इसे कितने बरसों तक कितना श्रम करना पड़ता है। पानी की बूंद-बूंद पहाड़ों में रिसकर एकत्र होती है तब कहीं विशाल नदियों का प्रवाह बन पाता है। जब ध्यान से देखोगे तो ज्ञात होगा कि मनुष्य का विकास करने में प्रकृति को सहस्रों वर्ष सतत प्रयत्न करना पड़ा है और इस असीम विश्व के सुप्रपंच के लिये उसे लाखों बरस अकेले तप साधना पड़ा है।

इतिहास की ओर देखो, ये महान् नगर और ये विशाल साम्राज्य—जिनके वर्णनों से इतिहासों के पन्ने चमक रहे हैं—सैकड़ों बरसों के प्रयत्न के बाद बन पाए हैं; इनको अपनी महत्ता पाने में सदियां लगी हैं और अगणित महामानवों ने दिन-रात इनके निर्माण के लिये श्रम किया है। हून और वंडाल जातियों ने—जो संसार में तेजी से उठीं और बिजली की तरह इधर से उधर कड़क गईं—किसी भी महान् साम्राज्य की आधार-शिला न रख पाईं और धैर्य के अभाव के कारण भूपृष्ठ पर अपने चिन्ह न छोड़ सकीं। चंगेज़ खां का फुदकता घोड़ा बिजली की तरह एशिया में खून-खराबी फैला गया, किंतु कितने दिन के लिये; किन चिन्हों को भूपृष्ठ पर छोड़ कर। वह आया और चला गया। उसका नामोंनिशां दुनिया से उठ गया। इसके विपरीत बौद्ध-भिक्षु अमित त्याग और तपस्या के साथ अपने धर्म का समाचार संसार के सुदूर देशों में ले गए; उनके उस धैर्य का परिणाम यह हुआ कि वह धर्म आज भी जापान और चीन जैसे दूरवर्ती देशों में जीवित है। अतीत युगों के स्मारकों पर नजर डालो। मिश्र के पीरामिड बनाने में बरसों लगे थे और अगणित मानवों को कुदाल और छबड़ी से काम करना पड़ा था। ताज बीबी का रोजा ३० साल में बन पाया था और इसके निर्माण के लिये संसार के कोने-कोने से कारीगर एकत्र किये गए थे। हिरोदोत्स के अनुसार चियोप्स के पीरामिड के निर्माण में ३० बरस लगे थे और १ लाख श्रमियों ने दिनरात काम किया था। दक्षिण भारत के मन्दिरों पर धैर्य का महत्त्व खुदा हुआ है।

ग्रीस का महान् व्याख्याता डेमोस्थिनीज जवानी में तुतला कर बोलता था और उसे दमा लगा हुआ था। अदम्य इच्छा-शक्ति का सहारा ले उसने अपने मुँह में कंकड़ियां रख कर बोलने का अभ्यास किया; जिसका परिणाम यह हुआ कि कुछ बरसों बाद वह संसार का ख्यातनामा व्याख्याता बन गया।

हर बड़े काम के लिये धैर्य और लगन की आवश्यकता है। कोई कितना भी महान् क्यों न हो, इन गुणों के बिना उसे संसार में ख्याति नहीं मिल सकती और जो काम जितना ही महान् है उसके पूरा करने में मनुष्य को उतना ही महान् श्रम करना पड़ता है। किसी ने सच कहा है:—

"करत-करत अभ्यास के जड़-मति होत सुजान।
रसरी आवत जात ते सिल पर होत निसान" ॥

वह अतीत युग

आदि काल से मनुष्य भूतकाल की प्रशंसा और वर्तमान की निन्दा करता आया है। स्वभाव से मनुष्य असंतोषी है, इसलिये वह अपने वर्तमान पर, संतुष्ट नहीं होता और सदा उन दिनों के याद करने में आनन्द अनुभव करता है जो बीत चुके हैं, और अपनी अर्ध-स्मृति के कारण कुछ प्रमोदक से, कुछ प्ररोचक से बन गए हैं। बूढ़े लोगों की तो कहानी ही यह रहती है कि पुराने जमाने का क्या कहना; तब चारों ओर सुख था, तब सूरज और चांद और जमीन अधिक सुखदायक थे, और तब वनस्पति, नदियां और पशु-पक्षी अधिक मनोरञ्जक थे। पुराने युग के आदमी कहीं अधिक बलवान्, बहादुर, उदार और ज्ञानी थे और तब का आदमी शेर से टक्कर लेता था और पहाड़ों और समुद्रों पर छलांग भरा करता था। बुढ़ापे में ये लोग जवानी को याद करते; और क्योंकि वह गुजर चुकी होती है, इसलिये इन्हें प्ररोचक लगती है।

किंतु भूत की प्रशंसा और वर्तमान की निन्दा से बनता क्या है? भूत की प्रशंसा से आनन्द भले ही मिले; किंतु भूत लौट नहीं सकता और पछताए से बनता कुछ नहीं है। भारत और चीन की मनोवृत्ति में यही एक दोष रहा है; और जहां हम लोग सदा से भूत की प्रशंसा के पुल बांधते आए हैं वहां संसार की दूसरी जातियों ने वर्तमान की

चिल्ला कर इतिहास-पथ के हजारों कोस नाप डाले हैं। इसमें संशय नहीं कि हमारा भूत ज्वलन्त था और हमारी सभ्यता और संस्कृति उन्नति के शिखर पर थी—किंतु 'थी' इससे क्या; आज तो वह गिर चुकी है और हम छुआछूत की मैं-मैं तू-तू में धंसे पड़े हैं।

जब हम भूत की प्रशंसा करते हैं तब इस बात को सहज ही भूल जाते हैं कि वह भूत भी तो कभी वर्तमान ही था, और उस युग के आदमी उसकी निन्दा करते थे और अपने लिये गुजरे दिनों को याद करते थे। आज हम चारों ओर 'राम-राज' के स्वप्न गाये जाते देखते हैं, किंतु रामराज में ही एक धोबी ने सीता-माता पर कटाक्ष किया था और कहा था कि "आजकल का क्या कहना; आजकल तो राजा और रानी अपने आप गिर गए हैं; तभी तो रामचन्द्र पराए घर में रही सीता को ले आए हैं।" इस एक कहानी से पता चल जाता है कि उस काल के आदमी उस युग को बुरा कहते थे और अपने लिये विगत जमाने को याद करके रोते थे।

एक बात और भी है। हम भूत की उतनी ही, अधिक प्रशंसा करते हैं, जितना कि हमारा उसके विषय में अज्ञान होता है। और यदि हम उस काल की यथार्थता को परख जांय तो हमारा उसके प्रति प्रेम जाता रहे और हम वर्तमान को चाहने लगें। किंतु ऐसा होना मानव प्रकृति के विपरीत है और मनुष्य के जीवन और संतोष के लिये यह आवश्यक-सा बन गया है कि पराई थाली की खीर को ज्यादा समझे और लदे ज़मानों में फूल खिले देखा करे। सच तो यह है कि स्वयं बुद्ध, अशोक और अकबर के जमाने की जनता अपने-अपने युगों से असंतुष्ट थी और अपनी अपेक्षा पुराने युगों को याद कर आह भरा करती थी।

भूत-प्रशंसा में लगकर कभी-कभी हम वर्तमान युग की उन्नति को भूल जाते हैं और यह नहीं देख पाते कि आज के युग में भौतिक विज्ञान

उन्नति की किस कोटि पर पहुँच गया है और उसने मनुष्य जाति को कितना अधिक आराम पहुँचाया है। और जहां भौतिक क्षेत्र में आज के मनुष्य ने आश्चर्यजनक उन्नति की है वहां साथ ही भौतिक वाद से पैदा हुई बुराइयों के साथ युद्ध करने में भी उसने प्रशंसनीय उद्योग किया है। असल में संसार और जगत् कहते ही उसे हैं जो आगे चलें और यह अमित विश्व-प्रपंच न चाहने और न जानने पर भी तेजी के साथ आगे बढ़ा चला जा रहा है और पूर्णता के उस बिन्दु की ओर बढ़ रहा है, जहां पहुँच मनुष्य परमात्मा में लीन हो जाता है और भवबन्धन से मुक्त हो जाता है।

किंतु भूत को भूल जाना भी घातक है। उन्नति की प्रक्रिया सीखी तो भूत से ही जाती है और हमारे वर्तमान जीवन की आधार-शिला वास्तव में हमारे भूत पर आश्रित है। मनुष्य अतीत जीवन से प्रतिक्षण कुछ न कुछ सीखता रहता है और जो गलतियां करके उसने पहले कभी दुःख पाया था उनसे बचता है। वास्तव में भूत और वर्तमान एक काल के दो सिरे हैं; एक के बिना दूसरे की सत्ता और ज्ञान असंभव है।

"अटूट शान्ति एक स्वप्न है"

"इस कहावत का प्रवर्तक मोल्तके १८०० से १८९१ तक जर्मनी का फील्ड मार्शल था। फ्रैंको-जर्मन युद्ध से पहले उसी ने जर्मन सैन्य का संघटन किया था और फ्रांस को पराजित करने वाले युद्ध का संचालक वह स्वयं था। मार्शल मोल्तके तत्त्वज्ञ नीत्शे का समकालीन था। इस कहावत में जर्मनी के उस युग की मानसिक प्रवृत्ति प्रतिफलित है।

मनुष्य जितना विचारक है उतना ही लड़ाका भी है; और इसमें संदेह नहीं कि हर आदमी की नसों के किसी न किसी भाग में युद्ध की लालसा छिपी रहती है। जब हम मनुष्यों को आपस में लड़ता

देखते हैं तब हमारे मन में कौतूहल जाग उठता है और जब हम मदमत्त पशुओं को आपस में जूझता देखते हैं तब हमें एक प्रकार का विनोद होता है। कहा जा सकता है कि युद्ध से उपरति निर्बलता का लक्षण है और शान्ति की पूजा कायरता का चिन्ह है। संसार में युद्ध सदा से चलता आया है और जीवन कहते ही संग्राम को हैं। इस संग्राम में वही जीतता है जो बलवान् है; क्योंकि हम अपने सामने देखते हैं कि प्रकृति के साम्राज्य में वही तत्व चिरस्थायी बनते हैं। जिनमें सत्ता की सबल आकांक्षा हो और जो अपने जीवन के लिये दूसरों का जीवन ले सकें। जब हम एक साथ अनेक पौधे बोते या लगाते हैं तब उन पौधों में वे ही उभरते हैं जो सबल हों; बाकी नीचे दबकर समाप्त हो जाते हैं। मनुष्यों का भी यही हाल है।

संसार में सब से अधिक प्रसादक और मोहक दृश्य शस्त्रास्त्रों से सजा एक सुन्दर सिपाही है और जब हम इन उन्नतमस्तक सिपाहियों के सैन्य को मार्च करता देखते हैं, तब हमारे मन में वीरता के भाव जाग जाते हैं और तब हम अपनी निर्बलता तथा निरर्थक चिन्ताओं पर विजय लाभ कर लेते हैं।

और मनुष्य आदिकाल से शान्ति की खोज करता आ रहा है। किंतु उसे शान्ति किस दिन और किस जगह मिल सकी है। भारत ने आदिकाल से विश्व-प्रेम और विश्व-शान्ति के कल्याणमय मधुर गीत गाए हैं, किंतु भारत के साथ विश्व ने क्या बरताव किया है; कौन से युग में उसने स्वतन्त्रता के आनन्द लूटे हैं ?

जैन और बौद्ध समाज से बढ़कर संसार में शान्ति का पुजारी कौन होगा ? किंतु इन दोनों संप्रदायों का इनके उद्गम-स्थान भारत में क्या हुआ है ? जैन संप्रदाय के पुजारी इने-गिने रह गए हैं और बौद्धों का भारत से नाम उठ गया है। विश्व के तत्त्वज्ञ ऐसे स्वर्ग की कल्पना करते आए हैं, जहां युद्ध और संघर्ष का नाम न होगा

और जहां सदा शान्ति के मधुर गीत बहेंगे। किंतु यह स्वर्ग किसने देखा है और इसका कौन-सा ठिकाना है ?

संसार के वर्तमान तत्त्वज्ञ दिन-रात शान्ति के राग अलापते रहे हैं, किंतु अपने ही छोटे से जीवन में हमने दो क्रान्तिकारी युद्ध देख लिये हैं और हमें भान होता है कि ज्यों-ज्यों शान्ति के गीतों का लय उन्नत होता जा रहा है त्यों-त्यों विश्व में हिंसा की ज्वाला अधिकाधिक धधकती जा रही है।

योरप के तत्त्वज्ञों ने युद्धों को रोकने के लिये लीग आफ नेशंस को जन्म दिया था; परिणाम क्या हुआ ? वह सभा योद्धाओं को न रोक सकी और बचपन में ही उस सभा की अन्त्येष्टि हो गई।

चीन ने दुनिया में शान्ति बरती। जापान ने उस पर दिन-दहाड़े धावा बोल दिया। भारत ने शान्ति के गीत गाए; यूनानी, फारसी, शक, हून, गुर्जर, मुसलमान तथा अंग्रेजों ने इस देश का खून चूसा और इसे नपुंसक बना डाला। शान्ति में किसने सुख पाया है ? शेर के नाखून किसने काटे हैं और योद्धाओं के उत्साह को किसने दबाया है ?

प्रलंब शान्ति मनुष्य को निर्वीर्य बना देती है; उत्साह और साहस काम में न लाने से ये कुंठित हो जाते हैं और मनुष्य की आन मारी जाती है, उसकी साख जाती रहती है और इसकी पान सूख जाती है। लम्बी शान्ति मनुष्य को भोगी बना देती है, आलसी बना देती है, जातियों के वीर्य को बेजान कर देती है और राष्ट्रों के उत्थान को बन्द कर देती है। ग्रीस युद्ध से ऊंचा उठा था, रोम विजयों के फलक पर चमका था, इंगलंड जय के सोपानों द्वारा उन्नत हुआ है, फ्रांस निर्बलों को जीतकर महान् बना है और अमरीका हबशियों को नष्ट कर चमक पाया है।

संसार में कोरी बातों से काम नहीं चलता, बातों के पीछे लातों का भय न हो तो विपक्षी एक नहीं सुनता। १९३७ में जर्मनी की

घोषणा के पीछे उसके पांत्सर डिवीजन थे, हवाई-फौजें थीं, पैराट्रूप थीं, दुनियां ने उसको सुनी, राइनलंड खाली हो गया, आस्ट्रिया उससे मिल गया और एक बार सारा योरप उसके सामने नीचे पड़ गया। जब वह शक्ति जाती रही तब जर्मनी खाक में मिल गया।

तत्त्व की दृष्टि से देखो—बड़ा कीड़ा छोटे कीड़ों को खाकर जीता है; शेर गाय भैंस को खाकर जीता है और चीता बकरी को खाकर मोटा बनता है। मट्टी को खाकर पौधे पनपते हैं। बड़े पेड़ों के नीचे की घास मारी जाती है। इसी प्रकार निर्बलों की संपत्ति पर बलवानों के महल बनते हैं; निर्बल देशों के ताजों पर साम्राज्य खड़े होते हैं।

यह सब कुछ होने पर भी युद्ध की प्रक्रिया मनुष्य के लिए नहीं बनी और क्योंकि उसमें तथा दूसरे प्राणियों में भेद है, इसी लिए उसकी तथा अन्य प्राणियों की जीवन-सरणि में भी मौलिक भेद है। हिंसा से हिंसा नहीं दबती, लड़ाई से लड़ाई का अन्त नहीं होता। जर्मनी ने दो युद्ध किये, परिणाम क्या हुआ? उसका मद चूर हो गया, उसका पराजय हुआ और शान्तिप्रिय देशों की विजय हुई।

शान्ति, सत्य और अहिंसा स्थायी सफलता के साधन हैं। जो व्यक्ति अथवा देश सच्चे दिल से इनका सहारा लेगा अन्त में विजय उसी की होगी। इतिहास की अतीत घटनाएँ असीम इतिहास-शृङ्खला की कतिपय कड़ियां हैं; इन सब का संकेत इसी तत्त्व की ओर है।

मिश्र, मेसोपोटामिया, ग्रीस और रोम ने युद्ध का सहारा ले उन्नति की थी, वह उन्नति आज कहां है? वे साम्राज्य आज कहां हैं? भारत ने आदिकाल से सत्य, अहिंसा और प्रेम का सहारा लिया था; भारत का आत्मिक गौरव आज भी अक्षुण्ण है और भारत में आज भी गांधी जैसे तत्वज्ञ उत्पन्न हो सकते हैं।

शान्ति ही जीवन का लक्ष्य है; यह उन्नत लक्ष्य अशान्ति के द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता। इसलिए जीवन में सच्ची शान्ति ही बरतनी चाहिए।

स्वावलम्बन

अपने सहारे काम करने को स्वावलम्बन कहते हैं। संसार में मनुष्य को दूसरों के संपर्क में आना पड़ता है और दूसरे मनुष्य कभी अपने अनुकूल होते हैं, कभी प्रतिकूल। अनुकूल मनुष्य से सहायता मिलने की आशा रहती है, प्रतिकूल मनुष्यों से नहीं। अनुकूल भी प्रत्येक मनुष्य को प्रत्येक समय सहायता नहीं दे सकते; इसलिए संसार में स्वावलम्बन की आवश्यकता पड़ती है। मनुष्य को केवल एक ही बार एक काम नहीं करना पड़ता, वरन् बहुत से ऐसे काम हैं जो नित्य-प्रति करने पड़ते हैं। जब तक हम इन कामों को करने का स्वयं अभ्यास नहीं डालते तब तक हम उन्हें नहीं कर सकते। प्रायः ऐसे अवसर भी आ जाते हैं जब सहायक के उपस्थित न होने के कारण बड़ी आपत्ति का सामना करना पड़ता है। लखनऊ में किसी नवाब के संबन्ध में कहा जाता है कि जब तक कोई दूसरा आदमी उनके जूतों को दरवाजे की ओर न कर देता, तब तक वे बाहर न जाते थे। एक बार उनको अपनी जान बचा कर भागने का अवसर आया। किंतु उनके जूते दरवाजे की ओर न थे और उस समय कोई नौकर भी न था, इसलिए वे घर से बाहर जाने में असमर्थ रहे और कैद कर लिये गए। ऐसे कोमल, कायर पुरुष तो भाग कर भी अपने को नहीं बचा सकते। बहुत से लोग ऐसे भी हैं जिनका बिना नौकरों के काम ही नहीं चल सकता; ऐसे लोगों का जीवन बड़ा दुःखमय हो जाता है। यदि मनुष्य अपने जीवन में उन्नति करना चाहता है, तो उसको परावलम्बन छोड़ कर—परमुखापेक्षी न होकर—स्वावलम्बन सीखना चाहिये।

यद्यपि संसार के बहुत से कार्य दूसरों के हाथ में होते हैं, तथापि स्वावलम्बी के लिए सब सहज हो जाते हैं। अन्य लोग स्वावलंम्बी का आदर करने लगते हैं और उन्हें उसका थोड़ा बहुत भय भी होता है। वे जानते हैं कि स्वावलम्बी मनुष्य अपने सहारे स्वयं खड़ा हो सकता है और उसे उनकी इतनी आवश्यकता नहीं कि वह उनके बिना कोई कार्य कर ही न सके; उनसे जो कुछ सहायता ली जाती है, वह सद्-भावना के कारण ही ली जाती है, आवश्यकतावश नहीं। इसलिए उसकी सद्भावना बनाए रखना आवश्यक है। स्वावलम्बी मनुष्य अपना बहुत-सा धन अपव्यय से बचा कर अन्य उपयोगी कार्यों में लगा सकता है। उसे अपने समय का अपव्यय नहीं करना पड़ता। वह समय पर अपना काम करने में समर्थ होता है। उसे काम के अधूरा पड़ा रहने से झुँझलाना नहीं पड़ता और वह कर्तव्य-पालन के प्रयत्न में प्रसन्न रहता है। स्वावलम्बी मनुष्य सदा हृष्ट-पुष्ट रहता है, क्योंकि उसके अवयव आलस्य-जन्य निष्क्रियता-वश शिथिल नहीं हो जाते। अतएव शरीर में स्फूर्ति की मात्रा अधिकता में विद्यमान रहती है। उसके आगे आपत्तियाँ और कठिनाइयाँ सिर झुका लेती हैं और सफलता उसकी दासी होती है।

जो दशा व्यक्ति की है वही देश और जाति की भी है। जिस प्रकार व्यक्ति के लिए स्वावलम्बन आवश्यक है, उसी प्रकार देश और जाति के लिए भी वह जरूरी है। कोई जाति उन्नत तभी हो सकती है, जब वह अपनी आवश्यकताओं के लिये दूसरों पर निर्भर न हो। प्रथम यूरोपियन महायुद्ध के दिनों में जर्मनी अकेला इंगलंड, फ्रांस, रूस, इटली आदि शक्ति-शाली देशों की संमिलित सेना का भी लगातार कई वर्ष तक केवल इसीलिये मुकाबला कर सका था कि वह स्वावलम्बी था। अनाज, अस्त्र-शस्त्र आदि के लिए उसे किसी दूसरे देश का मुँह नहीं देखना पड़ता था। व्यक्ति और जाति अपने भाग्य के आप ही

विधायक होते हैं। हम दूसरों की सहायता की जितनी ही अपेक्षा करते हैं, उतना ही हम अपने को अयोग्य बनाते हैं, उतना ही हम पराधीनता की बेड़ियों में जकड़े जाते हैं। ईश्वर भी उसी समय हमारी मदद करता है जब हम स्वयं अपनी सहायता करने को तैयार होते हैं। इसीलिए मनुष्य को सदा स्वावलम्बी बनने का यत्न करना चाहिए।

ईश्वर-भक्ति

"हरि व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम ते प्रगट होहिं मैं जाना।"

हम चाहे जिस धर्म के हों, हमको ऐसी व्यापक शक्ति माननी पड़ती है, जिसके सहारे यह चराचर संसार स्थित है। इसी को हिन्दू लोग ईश्वर कहते हैं और मुसलमान खुदा। बड़े के प्रति जो प्रेम होता है, उसे भक्ति कहते हैं, बराबर वाले के प्रति जो प्रेम होता है, उसे स्नेह कहते हैं। इस प्रकार ईश्वर-भक्ति का अर्थ है ईश्वर के प्रति अनुराग।

अब प्रश्न होता है कि हम ईश्वर की भक्ति क्यों करें? जब हम ईश्वर के गुणों पर विचार करते हैं, तब हमें इस प्रश्न का उत्तर मिल जाता है। ईश्वर में सब सद्‌गुण हैं, वह निर्विकार है, उसमें राग-द्वेष नहीं है। वह किसी के साथ अन्याय नहीं करता, जिसका जैसा कर्म होता है, उसके अनुकूल ही उसको फल देता है। संसार की सारी चीज़ें अपूर्ण हैं, केवल परमेश्वर ही पूर्ण है; उसके नियम अटल हैं; परंतु वह दयामय है। हम एक बीज डालते हैं, उससे अनेक फल उत्पन्न होते हैं। ऐसे ही समय पर सब काम होते हैं। सूर्य, चन्द्र और नक्षत्र सब नियम से चलते हैं। नियम के अनुकूल ऋतुएँ आती और जाती हैं। नियम से ही दिन और रात होते हैं। इन सब का नियन्त्रण करने वाला वही ईश्वर है।

जब प्रकृति की विचित्रताओं को देख कर मानव-हृदय दंग रह जाता है, तब ईश्वर के प्रति स्वभाव से ही भक्ति उत्पन्न होती है। हम में

सद्गुणों के प्रति सदा आकर्षण रहता है। ईश्वर सद्गुणों की खान है; इसलिये उसके प्रति आकर्षण होना स्वाभाविक है। भक्ति से हमारे भावों में एक प्रकार की पूर्णता आ जाती है।

चरित्र-गठन

मनुष्य की विशेषता उसके चरित्र में है। यदि एक मनुष्य दूसरे से अधिक आदरणीय समझा जाता है तो वह अपने चरित्र के कारण। मनुष्य का आदर उसके पद, धन या विद्या के कारण भी होता है, किंतु यह सब चीज़ें एक प्रकार से बाह्य हैं। पद स्थायी नहीं होता। यदि वह स्थायी भी हो तो उसके लिए जो आदर होता है वह भयजन्य होने के कारण श्लाघनीय नहीं। धन का आदर वही करेगा जिसको धनी से कुछ लाभ उठाने की इच्छा हो। विद्या का मान अवश्य ऐसा है जो वास्तव में अपने कारण कहा जा सकता है, किंतु वह भी विनय और चरित्र के बिना चिरस्थायी नहीं होता। विद्या, धन, बल तथा पद के होते हुए भी चरित्र के अभाव में रावण पूजा न जा सका। इसलिये मनुष्य की वास्तविक महत्ता उसके चरित्र में है। चरित्र-द्वारा ही मनुष्य की आत्मा का मूल्य आँका जा सकता है। चरित्र में ही आत्मबल का प्रकाश दिखाई पड़ता है। मनुष्य का चरित्र ही बतलाता है कि वह कितने पानी में है।

यह चरित्र क्या है जो इतना महत्त्व रखता है? यह चरित्र उन गुणों का समूह है जो हमारे व्यावहारिक जीवन से संबन्ध रखते हैं। विनय, उदारता, धैर्य, निर्भय होकर सत्य बोलना, लालच में न पड़ना एवं अपने कर्तव्य पर दृढ़ रहना, यह सब गुण चरित्र में आते हैं। यद्यपि चरित्र के अन्तर्गत और भी बहुत से गुण हैं तथापि उपर्युक्त गुणों का होना आवश्यक है। इन गुणों के संबन्ध में दो चार शब्द कह देना अनुपयुक्त न होगा।

विनय विद्या का भूषण है। विनय के बिना विद्या शोभा नहीं देती। श्रीमद्भगवद्गीता में ब्राह्मण का 'विद्याविनयसम्पन्न' विशेषण देकर श्रीकृष्ण भगवान् ने विद्या का विनय के साथ आवश्यक संबन्ध बतलाया है। विनय केवल विद्या ही की शोभा नहीं वरन् धन और बल की भी है। विनय से आत्मा की शुद्धि होती है। विनय के साथ निरभिमानिता, मनुष्य जाति के प्रति आदरभाव, सहन-शीलता आदि अनेक सद्भाव लगे हुए हैं। इसके अभ्यास से और सब मुख्य-मुख्य गुणों का अभ्यास हो जाता है।

उदारता का अर्थ खुले हाथों धन दे डालना ही नहीं, अपितु दूसरों के प्रति क्षमा का भाव रखना, दूसरों के विचारों का आदर करना, स्वयं श्रेय न लेकर दूसरों को श्रेय देना, अपने आप को जिससे हानि पहुँची हो उसके साथ भी अच्छा व्यवहार करना आदि गुण भी उदारता के अन्तर्गत हैं। जो लोग उपकृत पुरुष के साथ भी आदर का व्यवहार करते हैं, जो लोग अपने साथियों की भूल तथा अपराधों की स्वयं व्याख्या कर उनको क्षमा कर देते हैं और जो लोग दूसरों की छोटी बात को भी महत्ता देने को तैयार हैं वे वास्तव में उदार हैं। ऐसी उदारता मानव-जाति का गौरव है।

कठिनाइयों में चित्त को स्थिर रखना धैर्य कहलाता है। मनुष्य के जीवन में समय-समय पर कठिनाइयाँ आती हैं। जो लोग इन कठिनाइयों से विचलित न होकर अपने कर्तव्य-मार्ग पर डटे रहते हैं वे ही सच्चे-धीर वीर पुरुष कहलाते हैं। कठिन से कठिन स्थिति में भी प्रसन्न रहना आत्मा की उच्चता का सूचक है। राजा हरिश्चन्द्र अत्यन्त करुणा-जनक परिस्थिति में भी कर्तव्य मार्ग से नहीं हटे। राज्याभिषेक के स्थान पर बनवास मिलने पर भी रामचन्द्र जी का मुख म्लान नहीं हुआ। इसी से वे जगद्वन्दनीय हुए।

सत्य की बड़ी महिमा है। मनुष्य को अपने वास्तविक विश्वासों को प्रकट करने का साहस होना चाहिए। भय अथवा खुशामद के लिए झूठ बोलना निन्द्य है, किंतु इसका यह अभिप्राय नहीं कि सत्य की विडम्बना की जावे।

चरित्रवान पुरुषों के लिये यह गुण अत्यन्त आवश्यक है। लोग लालच में पड़ कर अपनी उमर भर की सारी तपस्या खो बैठते हैं। जो लोग स्वयं लालच में नहीं पड़ते उन्हीं की बात का असर होता है। संसार में दूसरों को उपदेश देने में कुशल मनुष्यों की कमी नहीं है, पर कर्तव्यपरायण लोगों की कमी है। इसी कारण संसार की सुन्दर से सुन्दर योजनाएँ निष्फल हो जाती हैं। जो लोग आपत्ति आने पर भी विचलित नहीं होते, प्रलोभनों के जाल में नहीं फँसते, और अपने ध्येय की पूर्ति के लिए अपने हानि-लाभ का ख्याल नहीं करते वे ही सच्चे कर्तव्य-परायण समझे जाते हैं; उन्हीं का समाज में आदर होता है।

ये सब गुण अभ्यास से प्राप्त हो सकते हैं। बाल्यावस्था चरित्र-निर्माण के लिये उपयुक्त समय है। इस समय जो सदभ्यास बन जाते हैं वे सारी उम्र काम देते हैं। यदि हमें अपना जीवन सार्थक करना है तो हमें सदभ्यास द्वारा चरित्रवान बनना चाहिये। हमारे चरित्रवान बनने पर भारत का भविष्य निर्भर है। चरित्रवान पुरुष ही देश का सुधार कर सकते हैं। चरित्रवान पुरुष देश के गौरव हैं और चरित्रहीन पुरुष देश के कलंक।

दो-दो बातें

कोई दिन था कि हम कुछ थे, कुछ नहीं, बहुत कुछ थे। देवता हमारा मुंह जोहते थे, स्वर्ग में हमारी धूम थी। हम आसमान में उड़ते, समुद्रों को छानते, जङ्गलों को खङ्गालते, और पहाड़ों को हिला देते थे।

दुनिया में हमारे नाम-लेवा थे, देश-देश में हमारी धाक थी, दिशाएं हमारी जोत से जगमगाती थीं और आसमान के तारे हमें आँख फाड़-फाड़ कर देखते थे। हम अन्धकार में उजाला करते थे, बन्द आँखों को खोलते थे, सोतों को जगाते थे, और उकठे काठ को भी हरा-भरा बना देते थे। सूरमापन हम पर निछावर होता था, दिलेरी हमारे बांटे पड़ी थी, बहादुरी हमारा दम भरती थी, और आनबान हमारा बाना था। हम बेजान में जान डालते थे, सूखी नसों में लहू भरते थे, बिगड़ों को बनाते थे, गिरों को उठाते थे, बेजड़ों की जड़ जमाते, और भूलों को राह पर लगाते थे। बड़े-बड़े अठकपाली हमारे सामने अपना अठकपालीपन भूल जाते थे। हमारा तेवर बदलते ही बेतरह आँख बदलने वाले राजा-महाराजाओं का रङ्ग बदल जाता था, और दुनिया में हवा बांधने वालों के चेहरों पर हवाइयाँ उड़ने लगती थीं। आज यह बातें मुंह पर नहीं लाई जा सकतीं। अब, हमारा रङ्ग इतना बिगड़ गया है कि हम पहचाने भी नहीं जा सकते। हमी लोगों में ऐसे लोग हैं, जो यह जानते ही नहीं कि हम क्या और कौन थे और अब क्या हो गये। इसमें न किसी का जादू काम कर रहा है और न किसी का टोना, न दैव हमारे पीछे पड़ा है, न बुरा भाग। जो कुछ हम भोग रहे हैं, वे हमारी करतूतों के फल हैं, और आज भी वे हमें रसातल ले जा रही हैं।

आज हमारे सिर-धरों का ही सिर नहीं फिर गया है; आगे चलने वाले भी आग लगा रहे हैं, भगवा पहनने वाले भी भांग खाये बैठे हैं। जिनको वीर होने का दावा है, वे भाइयों की मूंछें उखाड़ कर मूंछ मरोड़ रहे हैं, दूसरों का घर मूस कर अपना घर भर रहे हैं, औरों के लहू से हाथ रङ्ग कर अपना हाथ गरम कर रहे हैं, सगों का पेट काट कर अपना पेट पाल रहे हैं और बेबसों के घर को जलाकर अपने घर में घी के दिये बाल रहे हैं। पूंजीवालों का पेट दिन-दिन मोटा हो रहा है, पर किसी सटे-पेट वाले को देखते ही उनकी आँख पर पट्टी बंध

जाती है। सण्डे-मुसटण्डे डंडे के बल माल भले ही चाब लें, पर भूख से जिनकी आँखें नाच रही हैं, उनको वे कानी कौड़ी भी देने के रवादार नहीं। जो हमारा मुंह देखकर जीते हैं, हम उन्हीं को निगल रहे हैं, और जो हमारे भरोसे पांव फैला कर सोते हैं, हम उन्हीं को आँखें बन्द करके लूट रहे हैं। हमीं में डूबकर पानी पीने वाले हैं, आँख में उंगली करने वाले हैं, खड़े बाल निगलने वाले हैं, रंगे-सियार हैं, भीगी बिल्ली हैं, और काठ के उल्लू हैं।

आज हमारे घरों में फूट पांव तोड़ कर बैठी है, बैर अकड़ा हुआ खड़ा है, अनबन की बन आई है, और रगड़े-झगड़े गुलछर्रे उड़ा रहे हैं। हम से लम्बी-लम्बी बातें सुन लो, लम्बी डगें भरने की कहानियां कह-लवा लो, लेकिन लम्बी तान कर सोना ही हमें पसन्द है। आंख होते हमें सूझता नहीं, कान होते हम सुनते नहीं, हाथ होते हम बे-हाथ हैं, और पांव होते बे-पांव। समझ चल बसी, विचारों का दिवाला निकल गया, आस पर ओस पड़ गई, सूझ को पाला मार गया, मगर कान पर जूँ तक नहीं रेंगती। बेटियां बिक रही हैं, मां-बहिनें लुट रही हैं, जोरू पिस रही हैं, मगर हमें दांत पीसना भी नहीं आता। दूसरे धूल में फूल उगाते हैं, हमें फूल में भी धूल ही हाथ आती है। लोग कांटों में फूल चुनते हैं हम कांटों में उलझ-उलझ मरते हैं। आबरु उतर गई, पत-पानी चला गया, बड़ाई धूल में मिल गई, मगर हम धूल फांकने में ही मस्त हैं।

हम आसमान के तारे तोड़ना चाहते हैं, मगर काम आंखों के तारे भी नहीं देते। हम पर लगाकर उड़ना चाहते हैं, मगर उठाने से पांव भी नहीं उठते। हम पालिसी पर पॉलिश करके उसके रङ्ग को छिपाना चाहते हैं, पर हमारी यह पालिसी हमारे बने हुए रङ्ग को भी बदरङ्ग कर देती है। हम राग अलापते हैं मेल-जोल का, मगर न जाने कहां का खटराग पेट में भरा पड़ा है। हम जाति-जाति को मिलाते चलते हैं,

मगर ताब अछूतों से आँख मिलाने की भी नहीं। हम जाति-हित की तानें सुनाने के लिए सामने आते हैं, मगर तानें दे-दे कलेजा छलनी बना देते हैं। हम कुल हिन्दू जाति को एक रङ्ग में रंगना चाहते हैं मगर जाति-जाति के अपनी-अपनी डफली और अपने-अपने राग ने रही-सही एकता को भी धता बता दिया है। हम चाहते हैं देश को उठाना, पर आप मुँह के बल गिर पड़ते हैं। हमें देश की दशा सुधारने की धुन है, पर आप सुधारने पर भी नहीं सुधरते। हम चाहते हैं जाति की कसर निकालना, मगर हमारे जी की कसर निकाले भी नहीं निकलती। हम जाति को ऊंचा उठाना चाहते हैं, पर हमारी आँख ऊंची होती ही नहीं। हम चाहते हैं जाति को जिलाना, मगर हमें मर मिटना आता ही नहीं।

हिन्दू-जाति अपनी भूलभुलैयों में बेतरह फंसी है, इससे हमारा जी दुखी है, हमारा कलेजा चोट खा रहा है, दिल में फफोले पड़ रहे हैं। जितना ही जल्द हिन्दुओं की आँखें खुलें, उतना ही अच्छा। हमें उनका जी दुखाना, उन्हें कोसना, उन्हें बनाना, उन्हें खिजाना, उनकी उमंगों को मलियामेट करना पसन्द नहीं; अपने हाथ से अपने पांव में कुल्हाड़ी कौन मारेगा, अपनी उंगलियों से अपनी आँखों को कौन फोड़ेगा? मगर अपनी बुराइयों, कमज़ोरियों, भूल-चूकों, ऐबों, लापरवाहियों और ना-समझियों पर आँख डालनी पड़ेगी, बिना इसके निर्वाह नहीं।

—अयोध्यासिंह उपाध्याय

त्रिमूर्ति

मनुष्य का यह स्वभाव है कि वह अपने ज्ञान के रूप को परिमित देखना नहीं चाहता। जब वह देखता है कि उसकी बुद्धि काम नहीं देती, तब वह कल्पना का आश्रय लेता है। तब काव्य की सृष्टि होती है। बाह्य जगत् मनुष्यों के अन्तर्जगत् में प्रविष्ट होकर एक दूसरा ही रूप धारण कर लेता है। जड़ के साथ चेतन का संमिलन होता है।

'जो बुद्धि का अवलम्बन करते हैं, उनके लिए सूर्योदय एक साधारण घटना है, हिमालय एक पर्वत है और मन्दाकिनी एक नदी है। परंतु कल्पना के द्वारा कवि सूर्योदय में उषा देवी का दर्शन करते, हिमालय में भगवान् शिव का विराट् रूप देखते और मन्दाकिनी में मातृ-मूर्ति देख गद्-गद् हो जाते हैं। अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध लेखक मेकॉले की राय है कि ज्यों-ज्यों सभ्यता की वृद्धि होती है, त्यों-त्यों कवित्व का ह्रास होता है। इस कथन का अभिप्राय यही है कि ज्यों-ज्यों मनुष्य में प्राकृतिक भाव नष्ट होता जाता है और कृत्रिमता आती जाती है, ज्यों-ज्यों मनुष्य प्रकृति का संसर्ग छोड़ कर संसार में प्रवेश करता जाता है, त्यों-त्यों उसका जीवन-रस सूखता जाता है। जीवन के प्रभात-काल में किसको यह जगत् सुन्दर नहीं मालूम होता? उस समय हम पवन से क्रीड़ा करते हैं, फूलों से मैत्री रखते हैं और पृथ्वी की गोद में निश्चिन्त हो विश्राम करते हैं। उदीयमान सूर्य की प्रभा के समान हमारा जीवन निर्मल, सौम्य और मधुर रहता है। परंतु जीवन के मध्याह्न काल में हमारे लिए प्रकृति का सौन्दर्य नष्ट हो जाता है। संसार के अनन्त कार्यों में निरत होकर हम केवल विश्व के विषम संताप का अनुभव करते हैं। सब कुछ वही रहता है हमीं दूसरे हो जाते हैं। पहले वर्षाकाल में हम कीचड़ का कुछ भी ख़्याल न कर आकाश के नीचे पृथ्वी के वक्षः स्थल पर विहार करते थे। जब जल के छोटे-छोटे स्रोत कल-कल करते, हंसते, नाचते, थिरकते बहे जाते थे, तब हम भी उन्हीं के साथ खेलते, कूदते, दौड़ते थे। परंतु सभ्य होने पर हमें वर्षा में कीचड़ और गंदलेपन का दृश्य दिखाई देता है और हम अपने संसार को नहीं भूलते। वाल्मीकि और तुलसीदास के वर्षा-वर्णन में हम यह बात स्पष्ट देख सकते हैं। दोनों विख्यात कवि हैं, दोनों ने एक ही विषय का वर्णन किया है। परंतु जहां वाल्मीकि के वर्णन में हम प्रकृति का यथार्थ रूप देखते हैं, वहां तुलसीदास के वर्णन में हम संसार

की कुटिलता का परिचय पाते हैं। इसका कारण यही है कि वाल्मीकि ने तपोवन में कविता लिखी थी और तुलसीदास ने काशी में अथवा अन्य किसी नगर में।

कवि पर देश-काल का यही प्रभाव पड़ता है। यह प्रभाव कवि की कल्पना-गति में बाधक नहीं होता तो भी इसमें संदेह नहीं कि उसके कारण कवि की कल्पना एक निर्दिष्ट पथ पर विचरण करती है। होमर सीता की कल्पना नहीं कर सकता था और न वाल्मीकि हेलन की सृष्टि कर सकते थे। भिन्न-भिन्न युगों में भिन्न-भिन्न भावों की प्रधानता होती है। एक ही देश में भिन्न-भिन्न युगों के कवियों की रचनाओं में हम विभिन्न भावों की जो प्रधानता पाते हैं; उसका कारण यही है। सभ्यता के आदि काल में जो कवि हुए हैं, उनकी रचनाओं में हम भाषा का आडम्बर नहीं देखते। निर्मल जल धारा के समान उनकी कविता सदैव प्रासादिक और विशद रहेगी। परंतु धन और वैभव से संपन्न देश में कवियों की रुचि भाषा की सजावट की ओर अधिक रहेगी। इतना ही नहीं उनकी कविता का विषय भी वाह्य-जगत् होगा।

साहित्यज्ञों ने ऐसे ही प्रधान-प्रधान लक्षणों के अनुसार साहित्य के युग को तीन कालों में विभक्त किया है–प्राचीन काल, मध्य काल और नवीन काल। साहित्य का यह काल-विभाग सभी देशों के साहित्य में पाया जाता है। साहित्य के मुख्य विषय दो ही हैं–अन्तर्जगत् और वाह्य जगत्। भिन्न-भिन्न युगों में इन दोनों का संबन्ध भी भिन्न-भिन्न होता है। कोई-सा एक युग लीजिए। उस काल की सभी रचनाओं में कुछ न कुछ सादृश्य अवश्य रहता है। प्राचीन काल में कवि वाह्य-जगत् को अन्तर्जगत् में मिलाकर एक अभिनव जगत् की सृष्टि करते हैं, जिसमें देवताओं और मनुष्यों का संमिलन होता है। उस समय अन्तर्जगत् और बहिर्जगत् में भेद नहीं रहता। पृथ्वी मधुपूर्ण हो जाती

है। उस समय हमें जान लेना चाहिए कि हम वाल्मीकि, व्यास और होमर के सतयुग में पहुँच गए हैं।

काव्य दो भागों में विभक्त किए जा सकते हैं। कुछ काव्य ऐसे होते हैं जो कवि के व्यक्तित्व से पृथक् नहीं किये जा सकते। उनमें कवि ही की आत्मा छिपी रहती है। ऐसे काव्यों में कवि अपनी प्रतिभा के बल से अपने जीवन के अनुभवों ही के द्वारा समस्त मानव-जाति के चिरंतन गूढ़ भावों को व्यक्त कर देता है। परंतु कुछ काव्य ऐसे होते हैं जिनमें विश्वात्मा संचरण करती है। वे देश और काल से अनव-च्छिन्न रहते हैं। ऐसे ही काव्यों को महाकाव्य कहते हैं, और उनकी रचना वही कवि करते हैं जो विश्व-कवि कहलाते हैं, जो समय, देश और समग्र युग के भावों को प्रकट कर अपनी कृति को मानव-जाति का जीवन-धन बना जाते हैं। गिरिराज हिमालय के सदृश पृथ्वी को भेद कर आकाश-मण्डल को छूते हैं। उन पर काल का प्रभाव नहीं पड़ता। वे सदा अटल बने रहते हैं और उनकी कविता-जाह्नवी अनि-श्चित काल तक लोगों को पुनीत करती रहती है। भारतवर्ष में रामा-यण और महाभारत इसी प्रकार के महाकाव्य हैं। प्राचीन ग्रीस के के ईलियड और ओडेसी उसी के समकक्ष महाकाव्य हैं। भारतवर्ष में जो स्थान वाल्मीकि और व्यास का है, योरप में वही स्थान होमर का है।

वाल्मीकि, व्यास और होमर के जीवन-चरित्र लिखने की विफल चेष्टा करने की अपेक्षा उनके काव्यों पर विचार करना अधिक उचित होगा। इसमें संदेह नहीं कि इन कवियों के विषय में अनेक किंवद-न्तियाँ प्रचलित हैं। होमर के कई जीवन-चरित्र बहुत प्रसिद्ध हैं। उन्हीं में से एक का लेखक हेरोडोटस माना जाता है। इन दन्त-कथाओं में कवियों की असाधारण बातों का ही उल्लेख किया गया है। वाल्मीकि, व्यास और होमर के काव्य अलौकिक हैं। उनकी कृतियों से यह साफ़

प्रकट होता है कि वे दिव्यशक्ति-संपन्न थे। अतएव यदि मनुष्य उनके जीवन में भी अलौकिकता देखें, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? कहा जाता है कि वाल्मीकि, पहले अत्यन्त क्रूर और नृशंस थे। पीछे राम का नाम लेकर वे तपस्वी हो गए। जिनके काव्य में करुण-रस का अपूर्व स्रोत बह गया है; उनकी क्रूरता भी देखने योग्य होगी। बात यह है कि रामायण के पाठ से भक्ति का उन्मेष होता है और उससे पाषाण-हृदय भी द्रवित हो जाता है। यही बात इस किंवदन्ती में बतलाने की चेष्टा की गई है। वाल्मीकि के विषय में यह भी प्रसिद्ध है कि क्रौञ्चपक्षी के वध से व्यथित होकर उन्होंने श्लोक की रचना की थी। ऐसी घटनाएँ असाधारण होने पर भी असंभव नहीं हैं। तो भी ऐसा प्रतीत होता है कि वे किंवदन्तियां कवियों की कृतियों पर सर्व-साधारण की आलोचनाएँ हैं। कविता की उत्पत्ति कैसे होती है, यह इस घटना के द्वारा बतलाया गया है। इस मर्त्यलोक में जीवन और मृत्यु की जो लीला हो रही है, मनुष्यों के हास्य में भी करुण-वेदना की जो ध्वनि उठ रही है, क्षणिक संयोग के बाद अनन्त वियोग की जो दारुण निशा आती है, उसी से मर्माहत होकर कवि के हृदय से सहसा जो उद्‌गार निकल पड़ता है, वही कविता है। जिस कविता में वेदना का स्वर नहीं, वह कविता माधुर्य से हीन है। शैली ने इसी भाव को निम्नलिखित पद्य में व्यक्त किया है—

Our sweetest songs are those,
That tell of saddest thoughts.

व्यासदेव ने हिन्दू-समाज को धर्म और नीति की शिक्षा दी है। उनके महाभारत से ही हिन्दू-सदाचार की सृष्टि हुई है। इसीलिये उसको पञ्चम वेद कहते हैं। परंतु धर्म और ज्ञान की सूक्ष्म विवेचना करने वाले व्यास जी का जन्म-वृत्तान्त ऐसा नहीं है कि उसे प्रकट करने के लिए लोग लालायित हों। क्या उनके जीवन से यह सिद्ध

नहीं होता कि जन्म किसी का भविष्य निश्चित नहीं कर देता। होमर अन्धा था। 'होमर' शब्द का अर्थ ही अन्धा है। इसी प्रकार हमारे सूरदास भी अन्धे थे। जो जगत् के बाह्यरूप की अवहेलना करके अन्तर्गत सत्य की खोज करता है, उसके लिए ये चर्म-चक्षु सर्वथा व्यर्थ हैं। आँख से तो हम पृथ्वी पर पृथ्वी ही देखते हैं। पर होमर ने नेत्र-हीन होकर पृथ्वी पर स्वर्ग के दर्शन किए थे।

वाल्मीकि भारतवर्ष के आदि-कवि माने जाते हैं। उनकी गणना महर्षियों में की जाती है। हिन्दू-समाज में ऋषि का स्थान बहुत ऊँचा है। उनकी देव-तुल्य पूजा होती है। उनके कथन का खण्डन करने का कोई साहस नहीं कर सकता। उनके वचन कभी मिथ्या नहीं होते। आदि-कवि का महर्षि होना यह सूचित करता है कि कवि को वही स्थान प्राप्त हो जो ऋषि को है। उपनिषदों में भी कहा गया है—'कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूः'। अतएव जिस कवि की रचना में वह गुण नहीं जो एक ऋषि के वचन में होना चाहिए, उसे हम कवि नहीं कहेंगे। अलंकार, भाषा का सौष्ठव, माधुर्य आदि काव्य के गुण कहे जाते हैं। परंतु ऋषि की कृति में हम इतने से ही सन्तुष्ट नहीं होंगे। हम तो उससे यही आशा करेंगे कि वह हम में स्वर्गीय भाव भर दे। ऋषि का वचन कामधेनु के समान हमारी सब वासनाओं का अन्त कर सकता है और रामायण का पाठ करने से फिर कोई वासना नहीं रह जाती। तभी तो वह स्वर्ग का सोपान कहा जाता है।

रामायण में एक आदर्श समाज का चित्र है। इसीलिए कुछ लोगों को उसकी कथा अस्वाभाविक प्रतीत होती है। परंतु यह उनका भ्रम है। रामायण से यही सिद्ध होता है कि मानव-समाज किस प्रकार आदर्श रूप में परिणत हो सकता है, पृथ्वी स्वर्ग कैसे हो सकती है। अरविन्द बाबू की राय है कि रामायण में एक विशुद्ध नैतिक अवस्था का चित्र पाया जाता है। उसमें शारीरिक और मानसिक शक्तियों का

पूर्ण विकास दिखाया गया है। साथ ही साथ इन शक्तियों को स्वभाव की शुद्धता और श्रेष्ठ धार्मिक जीवन के कार्यों का सहायक बनाने की भी आवश्यकता बतलाई गई है।

व्यास जी ने महाभारत में पार्थिवशक्ति की पराकाष्ठा दिखलाकर उसकी निःसारता दिखलाई है। उन्होंने कर्तव्याकर्तव्य और धर्माधर्म का बड़ा ही सूक्ष्म निर्णय किया है। स्वर्ग में युधिष्ठिर को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि उनके धर्मात्मा भाइयों का तो वहां पता नहीं, पर अधार्मिक दुर्योधन स्वर्ग की विभूति का उपभोग कर रहा है ! बात यह है कि अपने कर्तव्य-क्षेत्र में बलि हो जाना, यही धर्म की पराकाष्ठा है।

होमर के दो काव्य प्रसिद्ध हैं। एक का नाम ईलियड है और दूसरे का नाम ओडेसी। ईलियड में प्राचीन ग्रीस के इतिहास में प्रसिद्ध 'ट्रोजन वार' नामक युद्ध का सविस्तार वर्णन है। प्राचीन काल में ट्रोजन एशिया में एक समृद्धिशाली राज्य था। उसकी राजधानी थी ट्राय। उस राज्य के अधीश्वर का नाम प्रायम था। उसका एक पुत्र था पेरिस। स्पार्टा नरेश मेनीलास की स्त्री हेलेन को पेरिस भगा लाया था। इस अपमान से क्षुब्ध होकर मेनीलास ने सब ग्रीक राजाओं को एकत्र कर ट्राय पर आक्रमण किया। बड़ा भीषण युद्ध हुआ। दोनों ओर के बड़े-बड़े वीर धराशायी हुए। अन्त में ग्रीक वीरों ने ट्राय को हस्तगत कर लिया। यही ईलियड की कथा है। ओडेसी में यूलीसेस नामक एक ग्रीक नरेश की यात्रा वर्णित है।

होमर की कल्पना-शक्ति बड़ी प्रचण्ड थी। उसके काव्यों में एक विलक्षण शक्ति है। महाकाव्यों की कथा ही पर ज़ोर दिया जाता है। पर होमर ने भिन्न-भिन्न चरित्रों का अवतरण कर और उनके मानसिक भावों का विश्लेषण कर अपने काव्य को नाटक का रूप दे दिया है। एक विद्वान् समालोचक की राय है कि यदि हम नाटककारों में होमर

को स्थान देना चाहें, तो हमें उसे शेक्सपियर का समकक्ष मानना पड़ेगा। इस दृष्टि से उसके काव्यों की तुलना रामायण और महाभारत से नहीं की जा सकती परंतु रामायण और महाभारत की तरह होमर के काव्यों ने योरप में एक विचार-धारा प्रवर्तित कर दी। मनुष्यों के जीवन में जिस अदृष्ट शक्ति का प्राबल्य है उससे पृथक् कर उसने मानव-जाति के अध्यात्म-शक्ति-विहीन जीवन के दर्शन करा दिये। हेलेन पार्थिव श्री की प्रतिमा है, जिस प्रकार द्रौपदी क्रियाशक्ति की और सीता-विशुद्धि की। उसी के प्रभाव से ट्राय अजेर हो गया। अब हम कविता के नैपुण्य पर कुछ विचार करना चाहते हैं।

कविता के लिए अलंकार भी आवश्यक माने गए हैं। होमर की उपमाओं के विषय में एक समालोचक का कथन है कि होमर ने भाषा की सौन्दर्य-वृद्धि के लिए उपमा का प्रयोग नहीं किया है। वह जिससे किसी बात को विशेष प्रभावोत्पादक बनाना चाहता था, उसी का उल्लेख उपमा द्वारा कर देता था। उपमाओं से कवित्व शक्ति का उच्छ्वास प्रकट होता है, इसलिए उनका प्रयोग उतना ही स्वाभाविक जान पड़ता है जितना उनका प्रभाव। वाल्मीकि की उपमाएं बड़ी सरल होती हैं; परंतु व्यास जी की उपमाओं में एक प्रकार की निरंकुशता है।

होमर की कविता के विषय में मैथ्यू आर्नल्ड का कथन है कि उसके तीन प्रधान गुण हैं। पहला गुण है उसका वेग। गिरि-निर्झर की तरह होमर का कविता-स्रोत बड़े ही वेग से बहता है। उसकी गति कभी शिथिल नहीं होती। उसकी छन्दोयोजना भी ऐसी है कि उससे कविता की गति तीव्रतर हो जाती है। दूसरा गुण है भावों की विशदता। होमर की लोकप्रियता का सबसे बड़ा कारण उसकी प्रासादिक कविता है। तीसरा गुण है भावों की उच्चता,

जिससे मनुष्य अपना पशुत्व दूर कर देवोपम हो जाते हैं। मैथ्यू आर्नल्ड का यह कथन रामायण और महाभारत के लिए भी उपयुक्त है। उनमें भी कविता की निर्बाध धारा, प्रसाद गुण और स्वर्गीय भाव है।

कवि का प्रधान गुण है आदर्श चरित्रों की सृष्टि। होमर ने भी आदर्श नर-नारियों के चरित्र अंकित किये हैं और व्यास तथा वाल्मीकि ने भी। परंतु इनके चरित्रों की परस्पर तुलना नहीं हो सकती। होमर की हेलेन, वाल्मीकि की सीता और व्यास की द्रौपदी तीनों अद्वितीय हैं। जैसी सफलता हेलेन के चरित्राङ्कण में होमर को हुई है वैसी ही सफलता व्यास और वाल्मीकि को द्रौपदी और सीता के चरित्र-चित्रण में भी हुई है। परंतु कला की कुशलता का विचार न कर यदि चरित्र की दिव्यता का विचार किया जाय, तो राम और सीता के चरित्र अद्वितीय हैं।

रामायण में रामचन्द्र और सीता का ही चरित्र प्रधान है। अन्य चरित्रों की अवतारणा इन्हीं दो के चरित्रों को विशद करने के लिये हुई है। रामचन्द्र पुरुषोत्तम हैं। वे लोक-मर्यादा के संरक्षक हैं। वे सत्यव्रत हैं। वे शूर हैं। उनमें देव-दुर्लभ गुण हैं। परंतु यदि राम में सिर्फ़ यही गुण रहते तो कदाचित् आज मनुष्यों के हृदय-मन्दिर में उनका यह स्थान न रहता। उनके चरित्र की विशालता और भव्यता देखकर लोग विस्मय-विमुग्ध हो जाते पर उन्हें अपनाते नहीं। आज रामचन्द्र को ईश्वर-पद प्राप्त है। उनका नाम-मात्र स्मरण करके नीच मनुष्य भी भव-सागर को पार कर जाता है। मनुष्यों की यह भक्त-भावना उनके अलौकिक चरित्र के कारण नहीं, किंतु उनके लौकिक चरित्र के कारण है। उनकी विशाल महिमा से आतङ्क उत्पन्न हो सकता है, प्रेम की उत्पत्ति नहीं हो सकती। रामचन्द्र ईश्वर थे, पर आये थे वे मनुष्य ही के रूप में। उनमें मनुष्योचित गुण थे। वे

पुत्र थे, भ्राता थे, स्वामी थे। उन्होंने मनुष्यों के सुख-दुख और आशा-निराशा का अनुभव किया था। जो राजराजेश्वर है, वह दरिद्रों की कुटी का अनुभव नहीं कर सकता। परंतु रामचन्द्र ने दारिद्र्यव्रत भी धारण किया था, राजसिंहासन से नीचे उतर कर दरिद्रता को आलिङ्गन किया था, वल्कल-वस्त्र पहन कर जंगल-जंगल घूमे थे। तभी तो अधर्मियों को उनके पास जाने का साहस होता है। तुलसीदास जी ने रामचन्द्र के चरित्र में उनकी ईश्वरीय शक्ति का बार-बार स्मरण कराया है। इसकी कोई आवश्यकता नहीं थी। सच पूछो तो इससे रामचरित-मानस में बड़ा दोष आ गया है। सीता की वियोग-व्यथा से पीड़ित होकर रामचन्द्र जी ने जो विलापोद्‌गार किये हैं, उन्हें पढ़कर हृदय द्रवीभूत हो जाता है। संभव नहीं कि कोई पाठक उन स्थलों को पढ़कर—जहाँ तुलसीदास जी ने करुणा-रस का स्रोत बहा दिया है—आँसू न बहावे। परंतु ऐसे स्थानों में तुलसीदास जी हठात् कह देते हैं—ये तो ईश्वर हैं, नर-लीला कर रहे हैं, इन्हें कहाँ दुःख-सुख ! उस समय हृदय हताश हो जाता है; क्योंकि तब वे हमसे बहुत दूर हट जाते हैं। कौशल्या की भाँति हम भी हाथ जोड़कर कहते हैं--'भगवान्, आप अपना विश्वरूप मत दिखलाइये। ईश्वर के रूप में मत आइये। हमें आप तपस्वी रूप में ही दर्शन दीजिये।' इसी प्रकार धनुष-भंग में सीता के हृदय में आशा और निराशा का जो द्वन्द्व चला है, उससे क्षण भर के लिये हृदय-स्पन्दन रुक जाता है। परंतु ज्यों ही तुलसीदास जी हमें इसका स्मरण कराते हैं कि सीता जगज्जननी हैं, त्यों ही हमारा औत्सुक्य नष्ट हो जाता है। क्योंकि तब वे हम से बहुत दूर हट जाती हैं—वहाँ, जहाँ क्षुद्र मनुष्य के भाव नहीं पहुँच सकते। वाल्मीकि जी ने रामचन्द्र जी की ईश्वरता पर ज़ोर नहीं दिया है। उन्हें मनुष्य के रूप में लाकर मनुष्यों के लिये उनका चरित्र सुगम कर दिया है। सीता जी के चरित्र-चित्रण में तो उन्हें

बड़ी सफलता हुई है। ऐसा दिव्य चरित्र अन्य किसी कवि ने अंकित नहीं किया है। यही कारण है कि हज़ारों वर्ष बीत गये तो भी वाल्मीकि का मधुर गान भारतीय नर-नारियों के कान में आज भी ध्वनित हो रहा है। प्राचीन अयोध्या ध्वंस हो गई, किंतु हिन्दू-समाज के हृदय में रामायण की अयोध्या आज भी प्रतिष्ठित है। संसार में हिन्दू-जाति का जब तक अस्तित्व रहेगा तब तक उसके हृदय से रामायण का प्रभाव दूर न हो सकेगा।

मानव-जाति एक ही है तो भी देश और काल के व्यवधान से वह अनेक खण्डों में विभक्त हो गई है। धर्म के समान साहित्य का भी यही उद्देश्य है कि वह मनुष्यों को एक दूसरे से पृथक् रखने वाले इस व्यवधान को उठा दे। यदि यह कभी संभव हो जाय, तो हम पृथ्वी पर सौन्दर्य का यथार्थ रूप देख लें। परंतु भिन्नता दूर होने के स्थान में बढ़ रही है। धार्मिक क्षेत्र में जब कभी किसी महात्मा ने मानव-जाति को एक करने की चेष्टा की, तब न केवल उसकी चेष्टा व्यर्थ हुई, बल्कि उससे संसार में भेद-भाव की संख्या बढ़ाने वाले एक और नये पन्थ की सृष्टि हो गई है। संसार में जितने मत प्रचलित हैं, उन सब का प्रारम्भ इसी उद्देश्य से हुआ था। तो भी हम देखते हैं कि उन्हीं से संसार में पारस्परिक विद्वेष और घृणा के भाव फैले हैं। परंतु साहित्य के क्षेत्र में यह हाल नहीं है। यहाँ किसी महान् आत्मा का अभ्युदय होने पर विद्वेष और घृणा के स्थान में प्रेम और सहानुभूति के भाव जागृत होते हैं। सभी लोग परस्पर मिलते-जुलते, देते-लेते हैं और इस प्रकार अपना जातित्व छोड़कर मनुष्यत्व ग्रहण करते हैं। साहित्य में आदान-प्रदान का यह कार्य बड़ी शान्ति से होता है। किसी की दृष्टि भी उस पर नहीं जाती। भारत ने योरप को कितना दिया और उससे कितना लिया, इस विषय का अनुसंधान करना पुरातत्त्व-वेत्ताओं का काम है। हम तो यही कहेंगे कि यह

समग्र साहित्य विश्व-साहित्य है और वह समस्त मानव-जाति के कल्याण के लिये निर्मित हुआ है। टेम्ज़, गङ्गा, मिसीसिपी आदि नदियों का उद्भव कहीं हुआ हो, परंतु अन्त में वे सभी आकर अनन्त समुद्र में गिरती हैं। इसी प्रकार वाल्मीकि, व्यास और होमर का जन्म कहीं हुआ हो, उनकी काव्य-धाराएं एक अनन्त विश्व में गिरकर पूर्णता लाभ करती हैं।

—पदुमलाल पुन्नालाल बख़्शी

धीरता और वीरता

आफतें आई हैं, आती हैं, आती रहेंगी। कोई इनसे नहीं बचा।

आफतें सभी देह पर ही आती हैं; भूल से ये मन और आत्मा पर आई मान ली जाती हैं। दुनिया मानने की ज्यादा है। हम जो समझ बैठें, वैसे हो ही जाते हैं। चाहिए यह कि देह पर आई मुसीबतों को देह तक ही रहने दें, उन्हें अन्दर दाखिल न होने दें। यह काम ज़रा मुश्किल है, पर अभ्यास से हो सकता है। देह पर आफत झेल लेने का मतलब यह है कि देह पर कुछ भी आए, अपने सिद्धान्त पर अटल बने रहें। सिद्धान्त पर अटल रहने का मतलब है अपनी अन्तरात्मा यानी ज़मीर की बात पर डटे रहना। ज़मीर की बात पर डटना घमण्ड नहीं है। हठ भी नहीं है। लोग भले ही उसको ये नाम दे डालें। हठ और घमंड से भी आफतों का सामना होता है; पर कामयाबी नसीब नहीं होती। रावण और दुर्योधन खूब लड़े और कभी-कभी अब जीते, अब जीते-से मालूम भी हुए, पर जीत हुई राम और युधिष्ठिर ही की। इसलिए नहीं कि राम ने रावण को मार डाला, या दुर्योधन मारा गया; पर इसलिए कि आज के दिन तक राम और युधिष्ठिर सचाई के निशान माने जाते हैं। हुसैन मरने पर भी जीते थे और जीते हैं। हुसैन को लड़ाई के मैदान में हराने वाले का नहीं, उनको मैदान में कत्ल करने वाले का नाम आज बहुत थोड़ों को

मालूम है और क्यों मालूम हो ? वह जीतने पर भी हारा था। हुसैन ई, पर वह कहाँ है ? राम, युधिष्ठिर, हुसैन अपनी अन्तरात्मा की बात पर डटे रहे और इसलिए उनकी जीत हुई और वे आज तक जीवित हैं। ये घमंडी या हठी न थे। नम्रता की मूर्ति थे। स्थिरता और नम्रता बहनें हैं। हठ का नम्रता से कोई मेल नहीं। आफतों पर या उनके कारणों पर जीत बोलने के लिए जरूरत होती है उन जवानों की, जो जिन्दगी के उसूलों पर बहादुरी के साथ डटे रहते हैं। क्या हमने वैसी आदत डाल ली है ? यदि हां, तो आफतें हमारा कुछ न बिगाड़ सकेंगी।

ईसा को क्रूस पर चढ़ाने वाले का नाम कौन जानता है ? ईसा तो आधी दुनिया के दिलों में घर बनाए बैठे हैं। ईसा ने कौन-सी लड़ाई जीती थी ? ईसा अपने ज़मीर की आवाज़ सुनते थे और उसी को सुनाते थे।

मौके पर फुरती से, पर बिना घबराये धीरता से, काम लेने वाले की जीत हुआ करती है। उतावले बनकर या घबरा कर कुछ करना धीर-वीरों का काम नहीं। उतावलेपन का जीत से कोई संबन्ध नहीं। बिना विचारे उतावलेपन से लड़ाई या लड़ाइयां जीती जा सकती हैं, पर विजय-लक्ष्मी के दर्शन नहीं हो सकते। विजय-लक्ष्मी उतावलों को नहीं वरती, उतावले उसकी नज़र पर नहीं चढ़ते, उसे तो धीर-वीर ही सुहाते हैं। वीर धीर होता ही है। धीरता अचानक नहीं मिलती, उसका अभ्यास करना होता है। महाभारत में विजय अर्जुन को नहीं हुई, वह हुई कृष्ण की या युधिष्ठिर की। हिन्दू कृष्ण को पूजते हैं, युधिष्ठिर को धर्मराज कहकर पुकारते हैं। अर्जुन को बहादुर मानते हैं, महारथी मानते हैं। असल में अर्जुन मन का रूपक है और कृष्ण आत्मा का। मन होता है उतावला। वह कुछ कर सकता है तो ठीक बनकर। आत्मा होता है गम्भीर। स्थिरता, धीरता, मुस्तकिल-मिज़ाजी

उसकी खासियतें हैं, मन की नहीं। मन आफतों में फंसा सकता है, फंसाने पर रुला सकता है, पर न विजय दिला सकता है और न उनसे छुटकारा। मन का काम है अहंकार, खुदी। खुदी गिरावट की सीढ़ी का एक अङ्ग है। गिरावट जीत से दूर होते चले जाने का नाम है। इसलिए मन के चक्कर में फंस कर तुम अहंकार की तसल्ली में आ जाओगे और समझौते पर आ उतरोगे। समझौता आफतों को दम लेने का अवसर दे देता है और इसलिए सुख देता-सा मालूम होता है। वास्तव में होता यह है कि आफतें दम लेकर दूने जोर के साथ फिर हल्ला बोल देती हैं और फिर समझौता करने वाले को हाथ मल-मल कर पछताना पड़ता है।

समझौता कानों को अच्छा लगता है। हार कानों को कड़वी मालूम होती है, पर समझौता हार से कहीं बुरी चीज़ है। समझौता हिजड़ा है, हार औरत है। हार, हार, हार, हारों का जोड़ जीत। समझौता, समझौता, समझौतों का जोड़ पतन, मौत। हार में देह को हानि पहुँचती है, कायरों का मन भी दुःख मानता है। कायरों का मन देह से लगाव भी रखता है। हार में धीर-वीर का मन दुःखी नहीं होता, कमज़ोर नहीं होता, उलटा बल पाता है। जब मन पर ही असर नहीं होता, तब आत्मा पर असर की चर्चा करना बेकार है। समझौते में अन्तरात्मा सिकुड़ कर रह जाती है। वीर का मन फुंकारता है, कायर का मन आराम की सांस लेता है। पर वीर और कायर दोनों ही की देह उस समय तो आफतों से बच जाती है और कायर तो पुकार ही उठता है—'जान बची लाखों पाए।' समझौता बहुत बुरी चीज़ है। समझौते की दोस्ती हिजड़े की दोस्ती है। हिजड़ा वक्त पर सदा धोखा देता है। समझौते को साथ लेकर कभी आफतों में नहीं कूदना चाहिए। समझौते के साथ कूदने में आफतें घटने की जगह

बढ़ेंगी और हम जिन्दगी भर के लिए दासता के पिंजड़े में बन्द कर दिए जायंगे।

लाल एक छोटा सुर्ख चोंच का खूबसूरत पक्षी है। उसकी मादा को 'मुनिया' कहा जाता है। लाल मुनिया के लिये लड़ते हैं। लाल उड़ाने वाले खास-खास लालों को मजबूत बनाते हैं। जिस खास लाल ने किसी एक लाल को कुश्ती में जीत लिया तो उस खास लाल का वह हारा हुआ कहलाने लगता है। उसका नाम ड्योढ़ा क्यों रखा गया, इसका पता नहीं; ड्योढ़ा शायद इस नाम में 'मेहतर, प्रजापति' आदि शब्दों की तरह कोई दार्शनिकता हो। खैर, वह ड्योढ़ा कितने ही अच्छे ढंग से बहिश्त में पले, पर ड्योढ़ा ही रहेगा; यानी जब भी अपने जीतने वाले से लड़ेगा, हारता ही रहेगा। समझौते में यही ऐब है। वह आदमी को अपने प्रतिपक्षी का ड्योढ़ा बना देता है। समझौते का अर्थ ही सिद्धान्तों से हटना है। समझौते से हम यह बताते हैं कि हम मूर्ख, असमर्थ हैं, हमारा आत्मा उतना ऊँचा नहीं है, जितना प्रतिपक्षी का। हार से हम यह बताते हैं कि हमारा आत्मा तो बहुत ऊंचा है, पर हमारी देह निर्बल है, हमारे साधन अपूर्ण हैं। हम प्रबल-देह और साधन-पूर्ण होकर जुटेंगे और जय बोलेंगे। पाण्डव जुए में हारे थे, धूर्तता में हारे थे, आत्म-बल में तो वे हार कर भी जीते थे। हुसैन साधनों में अपूर्ण थे, आत्म-बल में नहीं। वर्तमान लड़ाई में बहादुर जहाजी कप्तान घिर जाने पर जहाज डुबा देगा, दुश्मन के हाथ में नहीं जाने देगा। रूसियों ने जर्मनों को खाली गांव दिए, आत्माएं नहीं दीं; गांव रूसियों ने फिर ले लिए। फ्रांस, यूनान, बेल्जियम ने आत्माएं दीं, फिर गांव तो गए ही। जब आत्मा वापिस लें, तो गांव मिलें।

यह समझ बैठना भूल है कि वक्त पर हिम्मत हिजड़ों में भी आ जाती है। ज़रा सोचने पर यह भूल दूर हो सकती है। बिना विचारे

हिम्मत कर जाने का नतीजा सफलता हो सकती है, पर बहुत कम। और अगर किसी वजह से हो ही जाए तो टिकाऊ नहीं होती। आम तौर से उसका नतीजा हार ही हुआ करता है। वीर में सोडावाटर जैसा उबाल नहीं आया करता। उसमें निरन्तर दहकती आग रहती है। कारण पाकर ही दहकती आग ज्वालामुखी का रूप धारण कर चमत्कार कर जाती है। वीर अचानक पैदा नहीं होते। वे बरसों की मेहनत से तैयार होते हैं। हां, वीरत्व का बीज सब में है, पर उसको वृक्ष का रूप देने में समय लगता है।

समय की सूझ पर लोग भरोसा किए बैठे रहते हैं। वह समय पर कभी नहीं आयेगी। समय की सूझ वास्तव में उस निर्जीव शक्ति का दूसरा नाम है, जो हर एक आदमी में रहती है और जिसके बल पर वह अनेक कष्ट हंसते-हंसते झेल लेता है। इस दुनिया में भाग्य को भी स्थान है, पर जीवन में एक ही बार। भाग्य से मिली जीत के संबन्ध में कभी ठण्डे दिल से खोज नहीं की गई, नहीं तो पता चलता कि जीत भाग्य की नहीं हुई, किसी और ही की हुई है। अन्धे के हाथ बटेर लग जाने से अन्धा शिकारी नहीं माना जा सकता।

अन्तरात्मा, ज़मीर और उसकी बात से कुछ लोग चिढ़ते हैं। वे मन या मस्तिष्क को ही सब-कुछ मानते हैं। मन-मस्तक उन्हें कुछ दिखाई-से देते हैं, बिल्कुल तो वे भी दिखाई नहीं देते। खैर, इस मानवी मशीन का मस्तक भी बड़ा ज़बरदस्त पुरजा है। आइए, उसे समझावें। अन्तरात्मा को भुलाकर मन के मानने वालों ने मन को दो तरह का माना है। एक ऊपर का मन (conscious mind). एक भीतर का मन (sub-conscious mind)। भीतर के मन को वे क़रीब-क़रीब अन्तरात्मा जैसा ही मानते हैं। इस अन्तरात्मा के मिलते-जुलते भीतर वाले को भी छोड़िये। भीतर केवल ऊपर का मन है।

मान लीजिए, आप तैरना नहीं जानते। चले गए गहरे में, वहां लगे डूबने। इतने में एक जवान दौड़ता है और अपनी जान जोखिम में डालकर आपको बचाता है। उसने क्यों बचाया? क्या इसका जवाब इतना काफी हो सकता है कि उसने डूबते देखा, आँखों ने मस्तक को खबर दी, मस्तक ने देह को हुक्म दिया, देह कूद पड़ी। पांव तैरने में मदद देते रहे, हाथों ने डूबते को घसीट लिया, मानो आदमी नहीं बचाने वाला मशीन था। खैर, मशीन नाम से हमें चिढ़ नहीं—वह मशीन ही सही—पर नदी के किनारे खड़ी और मशीनें क्या करती रहीं?

आदमी मशीन ही सही, पर वह जानदार मशीन है। वह मस्तक, जिसको तुम एक पुरजा समझते हो, पुरजा ही सही, पर वैसा पुरजा आदमी की बनाई मशीनों में नहीं मिलता। आदमी में वह पुरजा है। कहां से आया, कैसे आया, इन बातों को जाने दीजिए। देखना यह है कि किनारे पर खड़ी अनेक मशीनों में से एक मशीन के पुरज़े ने ही इतनी फुरती क्यों दिखाई? उस पुरजे के मालिक ने बरसों तैरना सीखा, डूब-डूबकर जान बचाना सीखा, डूबते हुए बचाने वाले को भी किस तरह ले डूबते हैं, ये सब बातें जानीं, उनके घबराहट में किए कामों से बचने के उपाय सीखे और तब कहीं उसे वह फुरती से कदम रखना आया जो उसने आज कर दिखाया।

मतलब यह कि अन्तरात्मा की तरह मस्तक को भी तैयारी की जरूरत होती है और यह कि बड़ी-बड़ी तकलीफ में होकर ही समय की सूझ जैसी कला सिद्ध होती है। पहले मन देवता को पहचानना होगा, उसे सबल बनाना होगा। कल्पना-कबूतरी को दरवाजा खोलकर उड़ाना होगा और उसे जबरदस्ती घंटों उड़ते रहना सिखाना होगा। विवेक-हंस को ज्ञान के मोती चुगाना होगा और उससे सचाई के दूध में से झूठ के पानी को अलग करना सिखाना होगा।

इस प्रकार मन को और मन की अनेक ताकतों को बढ़ाने में स्वार्थ नहीं है और उसकी खातिर जिनको छोड़ना पड़े वह छोड़ना त्याग भी नहीं है। यह सब तो अपने से ठीक-ठीक काम लेना है। अपने से ठीक-ठीक और पूरा काम लेना ही धर्म है। कबीर की इस बात का कि हथेली पर सर रखकर आओ तो ईश्वर मिलेगा, यह अर्थ नहीं है कि रेल के आगे कट मरो। उसने खुद भी तो ऐसा नहीं किया था। उन दिनों रेल नहीं तो बनारस के किनारे गंगा तो थी। नेक बनने में कोई नेकी नहीं है। नेकी तो नेकी करने में है। नेकी करना भी इतनी नेकी नहीं है, जितनी नेकी कर कुंए में डालने में है। नेकी कर, नेकी की नेक चाह भी, नेक चैन न लेने देगी। सुखी होने के लिए उसे भूलना ही होगा। नेकी करना निकम्मों का काम नहीं, कमज़ोरों का भी नहीं। कमज़ोर चिड़चिड़े होते हैं, चिड़चिड़ेपन से भलाई दूर भागती है।

तकलीफों का सामना करने के लिए मनोबल बढ़ाना ही होगा। मनोबल बढ़ाने से भी ज्यादा जरूरी है, उस मनोबल से काम लेना, और यही तो सबक है जो सीखना है। यह सबक पैदा होते ही शुरू हो जाता है। प्रकृति नवजात बालक में भूख का कांटा चुभोती है, बालक जोर से चिल्ला-चिल्लाकर जमीन आसमान एक कर देता है। इससे दूध तो उसे जिसकी गरज हो देता ही है, पर उसके फेंफड़े खूब मजबूत हो जाते हैं। यह काम बालक आप ही कर सकता है, कोई और नहीं। जवान उम्र के लिहाज से समाज के सामने बच्चा है। उसका यह हक है कि बड़े होकर काम की तैयारी तक दूसरे उसे खिलाएँ-पिलाएँ। अपने 'मैं' को उपयोगिता की नींव पर मजबूत खड़ा कर दूसरों के 'मैं' का समझना आना चाहिए और टक्करों से बचना चाहिए। घमंड की नींव पर खड़े 'मैं' ही टकराते हैं। मिल-बैठकर काम करने के लिए 'मैं' का मजबूत होना जरूरी है।

'मैं'-ओं का ठीक-ठीक निर्वाह ही दुनिया की बढ़वारी कहलाती है। इसी को विकास (Evolution) नाम दिया गया है। विकसित 'मैं' यह जान लेता है कि सुखी रहना एक कला है। इससे स्वच्छन्दता की चाह नहीं रह जाती। स्वतन्त्रता प्यारी लगने लगती है और फिर अकेले ही नहीं, सब मिलकर उस ओर बढ़ने में लग जाते हैं, जहां हमें पहुँचना है।

दो शब्दों में, 'हम हैं' के साथ-साथ विचारशीलता जाग जाती है, विवेक चमक उठता है। जीते रहने की जरूरत मालूम होने लगती है। इसलिए हमारा यह परम कर्तव्य है कि हम अपने 'मैं' को सच्चा 'मैं' बनावें। यही सच्चा 'मैं' हम पर आई आफतों को कम कर देगा दूर कर देगा और देह पर आई आफतों को मन या आत्मा तक न पहुँचने देगा। तब हम तकलीफों में हंसने का चमत्कार दिखा सकेंगे और सबको अचरज में डाल देंगे।



(३) पत्र

पत्र लिखना एक आसान बात समझी जाती है, और सचमुच यह है भी आसान ही; यदि पत्र लिखते समय हम सरल, सीधे, भावपूर्ण शब्दों और वाक्यों का प्रयोग करें; और जो कुछ कहना हो सीधा और स्पष्ट शब्दों में कह दें।

अच्छे पत्र में वही बातें होनी अपेक्षित हैं जो अच्छी बात-चीत में या अच्छे लेख में होनी चाहियें। वाक्य शुद्ध और सीधे हों, मुहाविरेदार हों। पत्र की बात छोटी हो तो थोड़े शब्दों में पत्र को समाप्त कर दो; और यदि उसमें किसी घटना-विशेष का वर्णन करना है तो अपने पत्र को संदर्भों में बांट कर पूरा करो।

पत्र लिखते समय याद रखो कि तुम्हारा लक्ष्य क्या है और तुम क्या कहना चाहते हो। सीधी बात न कहकर इधर-उधर की बातें लिखना पत्र की शोभा को खराब कर देता है। इसलिये मुख्य बात को स्पष्ट शब्दों में लिख दो और उसकी सहायक सामान्य बातों को थोड़े शब्दों में निर्देश कर दो।

विषय भेद से पत्र चार प्रकार का है:—

वैयक्तिक पत्र—संबन्धियों को लिखे पत्र वैयक्तिक कहाते हैं। इन पत्रों में प्रेम-भरे शब्दों की माला गूंथना वृथा है, क्योंकि हमारे माता-पिता तथा भाई आदि हमें सदा ही प्यारे होते हैं। लिखते समय सजीव शब्दों का प्रयोग करो और उतना ही लिखो जितना अपेक्षित है।

पत्र के दाहिने किनारे पर पता लिखो; उसके नीचे तारीख। नीचे अपना नाम और लिफाफे पर पता।

उदाहरण:—

जलंधर

७ जून १६४६

पूज्य पिता जी !

आपका पत्र मिला। मुझे स्वयं पढ़ाई की चिन्ता है और मैंने निश्चय कर लिया है कि इस बार मैं मैट्रिक में प्रथम श्रेणी में पास हूँगा।

जलंधर में इस समय एक भी अच्छा स्कूल नहीं है। यहां की परिस्थिति अभी तक नहीं सुधरी है और यहां के छात्रों में अनुशासन की कमी बढ़ती जा रही है। इसलिए मैं ने निश्चय किया है कि मैं प्रयाग के गवर्नमेंट स्कूल में दाखिल हो जाऊं।

मैं कल रात को आठ बजे कलकत्ता मेल से प्रयाग जा रहा हूँ। वहां पहुँचने पर आप को सूचित करूंगा।

मुझे ४०) की जरूरत पड़ेगी। मनी आर्डर करके भेज देना।

सुशील और उषा को प्यार। माता जी को प्रणाम। अन्य सबको यथायोग्य।

आपका पुत्र

रवीन्द्रनाथ

पता:—

पंडित भगीरथ जी शास्त्री

मुख्याध्यापक

महाविद्यालय

ज्वालापुर

सहारनपुर

यात्रा का वर्णन:—

क्रिश्चियन कालेज
प्रयाग
६. ६. ४८

प्रिय उषा !

मैं बहुत दिनों से सोचता रहा हूँ कि तुम्हें अपनी यात्रा के विषय में लिखूं। किंतु बीमारी के कारण अब तक न लिख सका। आज तबीयत अच्छी है और आज ही पत्र लिखने बैठ गया हूँ।

कालेज में छुट्टी होते ही मैं यहां से सीधा कलकत्ता गया। कलकता बहुत बड़ा नगर है और सारा दिन फिरने पर भी मैं इसके छोर तक न पहुँच सका।

प्रयाग की अपेक्षा कलकत्ता बहुत बड़ा है। यहां की सड़कों पर भारी भीड़ रहती है। शहर में जगह-जगह मिलें हैं और आसमान धुएं से भरा रहता है। नगर के कुछ हिस्से बहुत सुन्दर हैं। कुछ सड़कें काफी चौड़ी हैं और इनके दोनों ओर विशाल प्रासाद बने हुए हैं, जिनमें धनियों की दुकानें हैं और व्यापार जोरों पर है।

हावड़ा स्टेशन पर उतर कर जब हम नगर की ओर बढ़े तब बीच में हुगली नदी पड़ी, जिसमें सैकड़ों नौकाएं तैर रही थीं और कुछ स्टीमबोट भी दौड़ रहे थे। यह नदी बहुत चौड़ी है और इसका पुल देखने लायक है।

नगर में २० से अधिक कालेज हैं और बहुत से भव्य पुस्तकालय हैं। विश्वविद्यालय, हाईकोर्ट, किला, बन्दरगाह, चिड़ियाघर, अजायब-घर, जैनमन्दिर तथा बहुत से प्रासाद देखते ही बनते हैं।

कलकत्ते से चलकर हम पटना पहुँचे। यह एक प्राचीन नगर है और इसमें दरिद्रता के निशान जगह-जगह हैं। जो जीवन मैं ने कलकत्ते में पाया उसका शतांश भी पटना में नहीं है और सच पूछो तो बिहार प्रान्त की गरीबी पटना में सिर छिपाए पड़ी दीखती है।

पटना से चलकर मैं बनारस ठहरा। यह नगर हिन्दुओं का तीर्थ है और यहां जिधर देखो उधर मन्दिर ही मन्दिर दीख पड़ते हैं। शाम को घंटे-घड़ियालों की ध्वनि गूंज उठती है और गंगा के तट पर सहस्रों भक्त नरनारी वेदपाठ करते दीख पड़ते हैं।

बनारस धनाढ्य नगर है, पर शोक, यहां सफाई की कमी है और गलियां तंग और गंदी हैं। लोगों के चेहरों पर मुर्दनी छाई रहती है और जीवन का आनन्द यहां ढूंढने पर नहीं मिलता।

दो मास के लगभग देशाटन करके मैं अब प्रयाग आ गया हूँ और पढ़ाई में लग गया हूँ।

तुम बताओ क्या कर रही हो। देखो! खूब पढ़ो और परीक्षा में अच्छी श्रेणी में पास होओ।

तबीयत तो चाहती है कि उड़कर तुम लोगों से मिलूं, पर कर्तव्य सिर पर है और गया वक्त फिर हाथ आता नहीं, इस लिए पढ़ाई में लग गया हूँ। हां, दिवाली के अवसर पर आऊंगा।

पूज्य पिताजी, माताजी, तथा अन्य सज्जनों को प्रणाम। भाई रवि, सुशील और अशोक को प्यार।

तुम्हारा भाई
कृष्ण कान्त

पताः—
श्रीमती उषारानी
मार्फत—डा. सूर्यकान्त
जी टी रोड, जलंधर

पिता की ओर से पुत्र कोः—

जैनमन्दिर रोड
न्यू देहली
४. जून १६४६

प्रिय सुशील चिरंजीव रहो !

गजट में तुम्हारा नाम बी. ए. परीक्षा में सब से पहले पाकर अपार प्रसन्नता हुई। इस शुभ परिणाम पर तुम्हें दिल से बधाई।

तुमने देख लिया कि सच्चे उद्योग का सदा शुभ परिणाम होता है और किया श्रम कभी भी विफल नहीं जाता। मैं आशा करता हूँ कि तुम एम. ए. में भी सर्वप्रथम पास होओगे। इससे जहां तुम्हें जीविकोपार्जन में सहायता मिलेगी वहां साथ ही तुम देश-सेवा के लिए भी योग्य बन सकोगे।

तुम्हारी माता तुम्हें आशीष भेजती है और तुम्हारे भाई-बहिन तुम्हें बहुत-बहुत याद करते हैं।

अपने स्वास्थ्य का सदा ध्यान रखना।

तुम्हारा हितैषी
रवीन्द्रनाथ

पताः—

सुशील कुमार बी. ए.
गवर्नमेंट कालेज न्यू होस्टल
लाहौर

मित्र की ओर से मित्र को:—

शिमला

१४. २. ४१

प्रिय सतीश !

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी चोट के बारे में पढ़ कर दुःख हुआ। आशा है जल्दी ही ठीक हो जाओगे।

मैं आज कल शिमला आया हुआ हूँ और जाखो रोड पर ठहरा हुआ हूँ। जाखो शिमले में सब से ऊँची जगह है और यहां चारों ओर देवदार के वृक्ष लहलहाते दीख पड़ते हैं। यहां की वायु बहुत स्वच्छ है और शिमले आने का असली लाभ यहीं होता है।

यहां आकर मैं ने एक नई बात देखी है। लाहौर में शाम सवेरे हम लोग लारेंस में घूमने जाया करते थे और वहां व्यायाम भी करते थे। शिमले में इसके ठीक विपरीत दीख पड़ता है। यहां स्त्री-पुरुष शाम के समय माल पर इकट्ठे होते हैं और शाम का सारा समय बातचीत करके बिता देते हैं। इनको देख कर मेरी भावना तो ऐसी हो गई है कि ये लोग यहां अपनी वेषभूषा की प्रदर्शिनी के लिए एकत्र होते हैं; खासकर स्त्रियां, जिनके कपड़ों को देखकर मैं हैरान हो जाता हूँ और जिनकी वेषभूषा को देखकर मुझे अचम्भा होता है। देश की गरीबी पर इनका तनिक भी ध्यान नहीं है और मेरी समझ में आचार-विचार पर भी ये लोग उचित ध्यान नहीं देते।

मैं शाम सवेरे जाखो पर जाता हूँ। यहां के दृश्य अद्भुत हैं; यहां की जलवायु अत्युत्तम है। कभी-कभी पद भी लेता हूँ।

चोट अच्छी हो जाने पर तुम भी यहां आ जाओ। साथ घूमेंगे फिरेंगे और दूर-दूर के दृश्य देखेंगे। कहो, चोट गहरी तो नहीं है ?

सब को यथायोग्य। तुम्हारा वही

रमेश

(२)

फैजबाजार

देहली

४. ४. ४९

प्रिय सुशील !

जो दृश्य मैं ने कल देहली में देखा वह आजीवन याद रहेगा। उसकी छाप अमिट है। उसकी याद से मेरा कलेजा मुंह को आता है।

कल शाम ५ बजे प्रार्थना के समय किसी बेवकूफ ने महात्मा गांधी को अपनी गोली का निशाना बना संसार के सर्वश्रेष्ठ रत्न को संसार से छीन लिया है। प्रतिदिन की तरह कल भी महात्मा जी प्रार्थना के लिए हाथ जोड़े जा रहे थे; ज्यों ही वे प्रार्थनामञ्च के पास पहुंचे, त्यों ही भीड़ में से किसी दुष्ट ने उन पर गोली दाग दी और वे राम राम करते हुए जमीन पर जा पड़े। महात्मा जी का जमीन पर गिरना था कि भीड़ के नरनारी जोर से रोने लगे और बिरला हाउस में एकत्र हुई जनता में हाहाकार मच गया। यह दृश्य अजीब था, सारे नर-नारी रो रहे थे।

कितने शोक की बात है कि हमारे ही एक भाई ने हमारे सब से महान् नेता को हम से छीन लिया है। विश्व के इतिहास में इससे बढ़कर कृतघ्नता का नमूना नहीं है।

देश का महान् नेता चल बसा। अब इस देश की किश्ती को पार लगाना हम सब का काम है। सुशील ! आओ, प्रतिज्ञा करो कि तुम देश की उन्नति में मेरा हाथ बटाओगे।

छोटे-बड़ों को यथायोग्य

—म्हारा वही

कृष्ण कान्त

व्यापार संबन्धी पत्र वे हैं, जिनमें किसी काम के बारे में लिखा जाय जैसे:—

(१)

जी. टी. रोड
जलंधर
३. ४. ४८

श्रीमान् जी !

नीचे लिखी पुस्तकें वी. पी. द्वारा भेज दीजिये:—

भारत—इतिहास	५	कापी
गणित	१०	,,
व्याकरण	५०	,,
प्रबन्ध पारिजात	२५	,,

पुस्तकें भेजते समय ध्यान रखिये कि पुस्तकें खराब न हों और ठीक तरह बांधी गई हों।

भवदीय
रमेशचन्द्र
पुस्तक विक्रेता
जलंधर

पता:—

श्री मेहरचन्द्र लच्मणदास
पुस्तक विक्रेता
फैज बाज़ार
देहली।

रुड़की

६. ४. ४६

श्रीमान् जी !

नीचे लिखी चीज़ें वी. पी. द्वारा भेज दीजिये:—

१. पार्कर फाउंटन पैन; मध्यम आकार; काला रंग ३ ।

२. किंग्स पार्चमेंट नोट पेपर, सफेद का एक बक्स ।

३. आक्सफर्ड पौकेट डिक्शनरी १ कापी ।

कृपया उक्त सामान जल्दी ही भेज दीजिये; क्योंकि एक सप्ताह बाद मुझे रुड़की से चल देना है । सामान भेजते समय देख लें कि कोई चीज़ खराब न हो ।

कृपाकांक्षी

चन्द्रकान्त

पता:—

मैनेजर

पंजाब रिलीजियस बुक सोसाइटी

काश्मीरी गेट

देहली ।

प्रार्थनापत्रः—

सरसावा
५. ६. ४२

श्री मुख्याध्यापक
महाविद्यालय
ज्वालापुर

श्रीमान् जी !

२५ मई के भारत में यह विज्ञापन पढ़ कर कि आपको ८ वीं श्रेणी के लिये एक गणिताध्यापक की आवश्यकता है, मैं अपना प्रार्थनापत्र भेज रहा हूँ।

मैंने प्रयाग विश्वविद्यालय की एम. ए. परीक्षा सन् १६४० में पास की थी और सन् १६४१ से लेकर आज तक इस विषय को मैं प्रयाग के डी. ए. वी. हाई स्कूल में पढ़ाता रहा हूँ। स्कूल के मुख्याध्यापक मुझ से प्रसन्न हैं और उन्होंने कई बार डी. पी. आई. के सामने मेरी योग्यता और लगन की प्रशंसा की है।

मैं खेलों में विशेष भाग लेता हूँ और मेरी संरक्षकता में स्कूल के छात्र कई बार हाकी और फुटबाल में पारितोषिक पा चुके हैं।

मुझे व्याख्यान देने का अच्छा अभ्यास है और मैं अवसर मिलने पर समाजों के उत्सवों पर जाता रहता हूँ। यदि आपने मेरी सेवाएँ स्वीकार कीं तो मैं यथाशक्ति आपके विद्यालय की सेवा करूंगा।

आशा है आप मेरे प्रार्थनापत्र पर ध्यान देंगे।

आपका कृपाकांक्षी
कृष्णकान्त

नीला गुंबद

लाहौर

३. ६. ४७

लाला मूलचन्द जी बैंकर

नीला गुंबद

लाहौर

श्रीमान् जी !

कुछ दिन हुए मैंने आपके एजेंट को मकान ठीक कराने के लिये लिखा था, शोक है कि उन्होंने इस पर ध्यान नहीं दिया और मकान की हालत दिनोंदिन खराब होती जा रही है। कृपया उन्हें कह दीजिये कि गरमियों की छुट्टियों के बाद मेरे लौटने से पहले वे मकान को ठीक करा दें और इसमें सफेदी करा दें।

आपकी सुविधा के लिये मैं मकान की खराबियों का निर्देश करता हूँ। दीवारों पर सफेदी की जरूरत है। छत जगह-जगह चूती है। रोशनदान टूटे हुए हैं और खिड़कियों में शीशे नहीं हैं। फर्श जगह-जगह उखड़ा हुआ है।

आशा है आप प्रार्थना पर ध्यान देंगे और मुझे दूसरी बार नहीं लिखना पड़ेगा।

आपका विनीत

सुशीलकुमार

लांगुबद
लाहौर
३-६-४७

प्रिय महाशय !

आपका ३ जून का पत्र मिला। धन्यवाद। मुझे दुःख है कि मेरे एजेंट ने आपकी प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया। मैं आज ही उन्हें कह देता हूँ कि वे मकान को ठीक करादें और दीवारों पर सफेदी करा दें। मुझे आशा है कि आपके लौटने से पहले ही मकान ठीक हो जायगा।

यदि आपको किसी और बात की आवश्यकता है तो लिखिये; मैं उस पर गौर करूंगा। यदि मुझे अवसर मिला तो मैं स्वयं मकान को देखूँगा और उसे ठीक करा दूँगा।

आशा है कष्ट के लिये क्षमा करेंगे।

आपका विनीत
मूलचन्द

पुलिस सुपरिंटेण्डेण्ट के नाम खोए कुत्ते के बारे में पत्र।

६. माल
लाहौर
३. ७. ४६

श्री पोलीस सुपरिंटेण्डेण्ट साहब
लाहौर

श्रीमान् जी !

परसों शाम के समय माल पर घूमते हुए मेरा एक कुत्ता खोया गया है। कुत्ता अल्सेशियन है और लगभग तीन साल का है। पीठ पर काला है; शेष शरीर सफेद रङ्ग का है। वह जिप्सी नाम से बोलता है और गेंद दिखाते ही पास दौड़ आता है।

जब कल मैं जिप्सी को साथ ले घूमने निकला तो दो आदमी मेरे पीछे हो लिये और वे चुप चाप इस बात के लिये प्रयत्न करते रहे कि जिप्सी मुझ से अलग हो उनके साथ चल पड़े। किंतु मैंने उनकी इस बात पर ध्यान नहीं दिया। जब मैं लारेंस में घुसा और चिड़ियाघर के पूरबी किनारे पर पहुँचा तब मैंने जिप्सी को न पाया। मैंने बाग में इधर-उधर ढूंढा और आवाज़ें दीं, किंतु सब विफल।

मुझे संदेह है कि जिप्सी को वे दोनों व्यक्ति बहका कर ले गए हैं।

मैं आपका हृदय से कृतज्ञ हूँगा, यदि आप जिप्सी का पता लगाएंगे। जिप्सी का पता चलाने वाले को मैं ५०) इनाम दूंगा।

आपका विनीत
सुशीलकुमार

निमन्त्रण पत्रः—

विवाह के विषय में—

श्रीमान् जी !

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि मेरे ज्येष्ठ पुत्र चिरंजीव सुशीलकुमार का विवाह श्री आत्मानन्द जी डिप्युटी कलैक्टर की सुपुत्री श्री ऊर्मिला देवी से ५ जून को होना निश्चित हुआ है। कृपया संमिलित होकर अनुगृहीत कीजिये।

दर्शनाभिलाषी
देव

भोजनादि के लिये:—

१० टेंपल रोड
लाहौर
५. ६. ४७

श्रीमान् जी !

५ जून को हमारे घर श्री के. एम. मुंशी पधार रहे हैं। उनके आदरार्थ मैं अपने घर ५ जून को ५ बजे चाय दे रहा हूँ। कृपया संमिलित हूजिये।

दर्शनाभिलाषी
गोपालचन्द्र

निकलसन रोड
लाहौर
५-६-४७

श्रीमती जी !

मुझे अत्यन्त प्रसन्नता होगी यदि आप कल शाम को आठ बजे हमारे घर भोजन के लिये पधारें।

भवदीय
सुशील कुमार

उत्तर:—

नीला गुंबद
लाहौर
६-६-४७

श्रीमान् जी !

आपका निमन्त्रण मिला। धन्यवाद। घर पर बीमारी होने के कारण मैं क्षमा चाहती हूँ।

भवदीया
मनोरमा

अभ्यास

नीचे लिखे पत्र लिखोः—

१ अपनी बहिन को, जिसने आज तक सिनेमा नहीं देखा, शहीद का वर्णन देते हुए।

२ अपने मित्र को, जो स्कूल में है, अपने कालेज-प्रवेश के समय के अनुभव का वर्णन करते हुए।

३ अपने पिता को कालेज-जीवन का वर्णन करते हुए।

४ अपने मित्र को अपनी शिमला रेलयात्रा का वर्णन देते हुए।

५ अपने मित्र को लाहौर का बयान करते हुए।

६ अपने पिता को, अपनी बी. ए. परीक्षा के परचों के विषय में: परचे कठिन थे या आसान; तुमने कैसे किये हैं?

७ अपने प्रिंसिपल को; एक सप्ताह तक बिना आज्ञा कालेज से गायब रहने के कारण बताते हुए और उससे अपनी अनुपस्थिति के लिये क्षमा-याचन करते हुए।

८ अपने छोटे भाई को, जिसने अभी मैट्रिक पास किया है, यह बताते हुए कि उसे कालेज में कौन-सी पढ़ाई करनी चाहिये।

९ अपनी बहिन को, जो कालेज में प्रवेश पाना चाहती है, सह-शिक्षा के गुण-दोष बताते हुए।

१० पुस्तक-विक्रेता को हाल में प्रकाशित हुई गाँधी-विषयक रचना के लिये आर्डर भेजते हुए।

११ स्थानीय म्युनिसिपैलिटी के प्रधान को अपने मोहल्ले की गंदी हालत का वर्णन करते हुए।

१२ ट्रिब्यून के संपादक को, यह बताते हुए कि तुम्हारे भाषण का संक्षेप उनके पत्र में अशुद्ध छपा है।

१३ एक मित्र को उनके विवाह पर बधाइयाँ देते हुए ।

१४ एक मित्र को उनके बी. ए. परीक्षा में प्रथम पास होने पर बधाइयां देते हुए ।

१५ एक मित्र को उसके पिता के मरने पर सहानुभूति प्रकट करते हुए ।

१६ एक मित्र को पहाड़-यात्रा के लिये न्यौता भेजते हुए ।

१७ एक पुलिस अफ़सर को अपने घर में हुई चोरी की रिपोर्ट देते हुए ।

१८ अपने आचार्य को, सुन्दर आचार-प्रमाणपत्र देने पर धन्यवाद देते हुए ।

१९ ई. पी. आर के ट्रैफिक मैनेज़र को यह बताते हुए कि दिल्ली से आते समय तुम्हारे दो सन्दूक किसी ने डिब्बे में से उठा लिये हैं ।

२० एक पुलिस अफ़सर को खोई हुई बाइसिकल का वर्णन देते हुए ।

२१ अपने भाई को, उसकी मंदबुद्धि के बारे में उपदेश देते हुए ।

२२ अपने पिता को, जो मैट्रिक के बाद तुम्हारी पढ़ाई बन्द कर देना चाहते हैं, यह प्रार्थना करते हुए कि मुझे कम से कम बी० ए० तक पढ़ने दें ।

२३ गार्डन पार्टी के लिये निमन्त्रण ।

२४ भोज के लिये निमन्त्रण ।

२५ विवाह के लिये निमन्त्रण ।

---

(४) संक्षेप

विस्तृत संदर्भों के सार को थोड़े शब्दों में लिखना संक्षेप कहाता है। संक्षेप के लिये आवश्यक है कि संक्षेप्य संदर्भ को पहले पूरे ध्यान से पढ़ो उसका सार ग्रहण करो और फिर उसे अपने शब्दों में लिख दो। संदर्भ की अनपेक्षित बातों को छोड़ दो, उसके अलंकारों और लच्छेदार मुहाविरों को छोड़ दो; एकमात्र उसके सार को सरल शब्दों में लिख दो।

संक्षेप के लिये अभ्यास की आवश्यकता है। संदर्भ को बार-बार पढ़ना जरूरी है। उदाहरणः—

(१) "प्रारंभ से लेकर अन्त तक रामायण की कथा के अन्तस्तल में भावना की पवित्र सरिता बह रही है, या यों कहिये कि भावना के समुद्र पर तुलसी ने रामचरित के छोटे-छोटे टापू तैयार किये हैं, जिन पर पहुँच जीव-पथिक हंसे या रोए बिना नहीं रह सकता। इस सदन में जीवन का प्रत्येक तत्त्व बृहद्दर्शक यन्त्र द्वारा विशालकाय बन उसके सम्मुख उपस्थित होता है और उसे अनन्तता का आभास दिलाता है। दशरथ-विलाप, राम-वनवास, और सीता-परित्याग की घटनाएँ आग को रुला सकती हैं और पानी को जला सकती हैं। जीवन की इस रसायन में सब रसों का पंचीकरण है, सब भावों का संमिश्रण है और सब तानों का विलय है। तुलसी ने इन तीनों घटनाओं का मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। सीता और राम के पुनीत चरित्र की सर्चलाइट से संसार का यह घोर निशीथ

आज की कांदिशीक बन रहा है। इस दिव्य सर्चलाइट को भविष्य के समुद्र की छाती पर फेंकना और उस समुद्र के प्रत्येक स्पन्दन को जीव-पथिक के समक्ष रख देना ही तुलसी के जीवन का प्रधान ध्येय था।।"

इस संदर्भ को ध्यान से दो तीन बार पढ़ कर इसके सार को इस प्रकार लिखा जा सकता है:—

तुलसीदास की रचना अत्यन्त भावपूर्ण तथा मर्म स्पर्शी है। उन्होंने जीवन के प्रत्येक उदात्त पहलू का भावमय वर्णन किया है। उनकी रचना में सब रसों का और सब भावों का संमिश्रण है। उन्होंने अपनी रचना में सर्वांगीण जीवन का मार्मिक वर्णन किया है।

(२) "बिहारी के हृदय में प्रेम था, किंतु वह प्रेम भौतिक था, ऐन्द्रिय था। उसकी कविता में प्रेम की रटन सुन पड़ती है; और समय-समय पर उसमें दैविक आकर्षण भी प्रतीत होने लगता है; परंतु वास्तव में यह प्रेम अनन्त प्रेम के उस उच्च आदर्श से, जो मनुष्य को निःस्पृह और निःस्वार्थ बनाता है, कहीं दूर है। यह तो मनुष्य के हृदय का, जो प्रेम का एक-मात्र आगार है, और जहां सच्चा प्रेम देदीप्यमान रत्न की भांति जगमगाता रहता है, प्रतिबिंबमात्र है, विकारमात्र है। इसमें प्रत्येक स्थान पर कामवासना बस रही है।"

ध्यान से पढ़ने पर इसका संक्षेप इन शब्दों में किया जा सकता है:—

बिहारी का प्रेम दैविक न हो ऐन्द्रिय है। इसमें परम तत्व की अनन्तता तथा पवित्रता नहीं है। ऐन्द्रिय होने के कारण यह विकृत है।

(३) "इस प्रकार हमने देख लिया कि सरलता और भावमयता के पेशल अभिनय के लिये तुलसीदास का, और सरलता तथा ऐन्द्रियता के रसमय व्याख्यान के लिये सूरदास

का विश्व साहित्य में उच्च स्थान है। तुलसी का मुख्य ध्येय जीवन के गांभीर्य की व्याख्या करना था और सूरदास का प्रमुख लक्ष्य जीवन की मधुरिमा को प्रदर्शित करना था। दोनों परस्पर मित्र थे, दोनों एक दूसरे के परिपोषक थे। दोनों का लक्ष्य था जीवन की रागात्मक व्याख्या करना और श्रांत जीववर्ग को आनन्दमय चरम सत्ता में फिर से तिरोहित करना, फिर से तदात्म बनाना।"

संक्षेपः—

सरलता और भावमयता तुलसी में अनुपम है तो सरलता तथा ऐन्द्रियता सूर में अनोखी है। तुलसीदास जीवन के गंभीर पहलू पर अधिक बल देते हैं तो सूरदास उसके मधुर पहलू पर। दोनों आपस में मित्र थे और एक दूसरे की कमी को पूरा करते थे। दोनों ने जीवन की रागात्मक व्याख्या करके दुःखी जीवों को आनन्दित किया है।

(४) "सच्ची भावप्रधान कविता में कवि को किसी भी ऐसे सान्त्वना देने वाले स्वर्गादि की कल्पना नहीं करनी पड़ती। वह तो किसी कलनादिनी नदी के निर्जन तट के ऊपर से उड़ती हुई बक-पंक्ति को देखकर उस आन्तरिक सौन्दर्य के स्रोत में लीन हो जाता है, जो अशेष बाह्य सौन्दर्य का चरम आगार है। उस समय उसकी गति ऐसी होती है जैसे विजया को पीकर मस्त हुए प्रेमी की; उस आन्तर प्रेम से आविष्ट होने पर बाह्य जगत् उसकी आँखों में नाच-कर तिरमिराता हुआ शनैः-शनैः लुप्त हो जाता है, निर्जन तट बह जाता है, बक-पंक्ति विलीन हो जाती है; बस वह रह जाता है, और उसके रहस्यमय तरल स्वप्न रह जाते हैं।"

संक्षेपः—

भावप्रधान कविता के लिये स्वर्गादि सुखद वस्तुओं की कल्पना आवश्यक नहीं है। यहाँ तो कवि जीवन की सामान्य वस्तुओं को देख उनके अन्तस्तल में बहने वाले सत्य, शिव और सुन्दर तत्त्व का आभास पा लेता है; और उसके आनन्द में मस्त हो अपनी रचना को भावमय बना देता है।

(५) "मैं आप लोगों को जीवन के उस कल्याण मार्ग का दिग्दर्शन कराना चाहता हूँ, जो आपके जीवन में कटु से कटु तथा विषम से विषम परिस्थिति उत्पन्न होने पर भी उसमें धैर्य तथा मधुरिमा का संचार करता रहे। तुम अपनी जीवन-नौका के कर्णधार हो, संघर्षमय जीवन के सैनिक हो और जीवन-संगीत के मधुर गायक हो। अपने लक्ष्य पर पहुँचाने वाले साधनों को जुटाने का प्रयत्न करो। विचार करके कर्म करो; ऐसा करने से जीवन में सफलता मिलेगी। शक्ति की अपेक्षा अध्यवसाय तथा कर्म-कौशल अधिक लाभदायक होते हैं। अवश्य ही तुम्हें सच्चे सैनिक के समान पराजय और निरुत्साह को ठुकरा देना चाहिये। कायरता और अपयश ये दोनों ही शब्द सैनिक के कोश में नहीं मिलते। जीवन को स्वप्न अथवा माया मत समझो। यह सत्य है, ध्रुव है।"

संक्षेपः—

मैं तुम्हें उस तत्त्व का उपदेश देता हूँ जो जीवन की हर परिस्थिति में तुम्हारा साथ देगा। जीवन अत्यन्त कठोर है; इसलिए विचार कर काम करो; शक्ति की अपेक्षा अध्यवसाय और चतुरता पर अधिक ध्यान दो। कभी भी हिम्मत न हारो। जीवन यथार्थ है; इसे ऐसा समझ सदा आगे बढ़ने का यत्न करो।

(६) "दुर्ग के भीतर पद्मिनी के महल का वातावरण परिश्रम की चिन्ता से विशेष गंभीर बना हुआ था। रानी कुलीन सहेलियों के साथ अपना समय बिताती थी, अथवा उनके मुँह से राजपूती पराक्रम के वीर गीत सुना करती थी। कभी अकेले अपने महल के परकोटे पर टहलती थी, कभी महल के नीचे की झील को जाने वाली सीढ़ियों से उतर कर तट पर से उसके स्वच्छ जल में अपनी परछाईं देखने लगती थी; कभी अपने महल की ऊंची से ऊंची अट्टालिका पर खड़ी हो जाती थी और उसकी दृष्टि मेवाड़ के मैदानों को पार करती हुई दूर के पर्वतों पर जा रुकती थी और रानी गहरी चिन्ता में पड़ जाती थी। वह दिन भी उसे दिखाई दे रहा था जब वे हरे मैदान वीर राजपूत सैनिकों के खून से लाल हो जायंगे और अलाउद्दीन की आगे बढ़ती हुई विजयिनी सेना 'अल्लाह हो अकबर' की सवारी के साथ दुर्ग में घुस आवेगी। फिर वह एकाएक तन कर खड़ी हो जाती थी और उसकी आंखों से ज्वाला बरसने लगती थी—जैसे भविष्य की ओर इशारा करके कह रही हो चित्तौड़ में जौहर की वह चिता जलाऊंगी कि उसके धुएँ में खिलजी वंश जल जावेगा।"

संक्षेप:—

महल के भीतर पद्मिनी भांति-भांति की चिन्ताओं में अपना समय बिता रही थी। कभी वह वीर गीत सुनती थी, कभी महल के ऊपर जाती थी और कभी नीचे उतर पानी में दिल बहलाती थी। कभी वह अतीत पर विचार करती थी और कभी भविष्य पर। अलाउद्दीन की विजय का भाव मन में आने पर वह सहम जाती थी; किंतु जौहर का भाव मन में आते ही क्रोध से तमतमा उठती थी।

(७) "पत्र-साहित्य की यही महत्ता है कि वह आलस्यपूर्ण अवसादपूर्ण और शिथिलतापूर्ण जीवन की रचना है। उसमें रात का आलस्य और अवसाद भरा रहता है। पर इसके साथ ही उसमें प्रदीप की उज्वलता रहती है, स्नेह की तरलता रहती है और रात की शान्ति रहती है। अंधकार और ज्योति की तरह उसमें विषाद और हर्ष दोनों मिले रहते हैं। पत्रों में हम हंसते हैं और रोते हैं, अथवा यह कहना चाहिये कि हम अपने ही दुखों पर हंसते हैं, अपने ही दोषों और निर्बलताओं का उपहास करते हैं, अपनी ही निन्दा करते हैं, अपनी ही निष्फलता पर रोते हैं; और अन्य लोगों के लिये जो बिल्कुल अनावश्यक और व्यर्थ बातें हैं, उन्हीं को कहकर हम क्षण भर स्वयं प्रसन्न होते हैं और दूसरों को प्रसन्न करने की चेष्टा करते हैं।"

संक्षेपः—

पत्र साहित्य में हमारी व्यक्तिगत बातों की चर्चा रहती है। उसमें हमारे सुख-दुःख का प्रदर्शन रहता है। जो बातें दूसरों के लिये अनावश्यक हैं उन्हीं को हम अपने पत्रों में विस्तार के साथ लिखा करते हैं। पत्र में लेखक का व्यक्तित्व प्रतिफलित होता है।

अभ्यास

निम्न लिखित संदर्भों का संक्षेप करोः—

(१) "वह था राक्षसराज। उसके पास शक्ति थी, संपत्ति थी, प्रभुत्व था। उसे अपनी शक्ति का दर्प था, संपत्ति का मद था और ऐश्वर्य का अहंकार था। उसकी स्वेच्छाचारिता से सब त्रस्त हो गये थे। परंतु उसका विरोध कोई नहीं कर सकता था। उसकी दृष्टि पड़ी एक राजकन्या

पर। राजकन्या के सौन्दर्य पर वह मुग्ध हो गया। उसने उसका अपहरण कर लिया। राजकन्या हताश हो गई, पर एक राजकुमार ने उस राक्षसराज का वध करके राजकन्या का उद्धार किया।"

(२) समाचारपत्रों का दूसरा कार्य यह है कि वे जनता को सुशिक्षित बनाते हैं। राजनीतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक, साहित्यिक आदि सभी विषयों की चर्चा बराबर करते रहने के कारण समाचारपत्र लोगों का उन विषयों में न केवल अनुराग ही बढ़ाते हैं, अपितु उन्हें उचित ज्ञान भी देते हैं। समाचारपत्रों को नियमपूर्वक पढ़ने वाला व्यक्ति किसी भी विषय से अनभिज्ञ नहीं रह सकता। उसकी रुचि परिमार्जित होती रहती है। समाचारपत्रों की उपयोगिता पर अब किसी को संदेह नहीं रह गया। जनसमूह के विचारों को प्रकट करने का साधन यही है। पर समाचारपत्रों का उत्तरदायित्व भी अब बहुत बढ़ गया है। शक्ति के साथ उत्तरदायित्व आता ही है। समाचार पत्र सर्वसाधारण के लिये नेता का काम कर रहे हैं; इसीलिये उन्हें सदैव सर्वसाधारण के कल्याण का विचार कर किसी बात को प्रकाशित करना पड़ता है। मिथ्या-नीति का अवलंबन करने पर ही समाचारपत्रों का प्रभाव नहीं पड़ता।

अनुवाद-निरूपण

५

बहुधा छात्र समझते हैं कि अनुवाद करना आसान है; किंतु यह धारणा गलत है और सफल शुद्ध अनुवाद करना उतना ही कठिन है जितना मौलिक रचना का निर्माण।

हर भाषा का मुहावरा और शैली अपनी अलग होती है। उस भाषा के मुहावरों और शैली के बल और चमत्कार को अपनी भाषा में सफलता के साथ लाना अत्यन्त कठिन है। सफल अनुवादक की विशेषता इसी बात की प्राप्ति में है।

संस्कृत, अंग्रेजी, बंगाली, मराठी तथा गुजराती आदि भाषाओं की चोटी की रचनाओं का हिन्दी में तेजी के साथ अनुवाद हो रहा है; किंतु इन अनुवादों में विरला ही अनुवाद सफल और शुद्ध हो पाया है; और विरले अनुवादक ही अपने अनुवादों में मौलिक रचना के बल और चमत्कार को ला पाए हैं।

अनुवाद करते समय मौलिक रचना के आशय और बल को अपनी रचना में लाने के साथ-साथ इस बात पर भी पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिये कि अनुवाद की भाषा शुद्ध हो और मुहावरेदार हो और उसमें मौलिक रचना के भाव पूरी तरह निखर कर आये हों। हिन्दी में इस कोटि के अनुवाद प्रायः नहीं के बराबर हैं। अनुवाद में अमूल और अनपेक्षित भावों और

शब्दों के लिये स्थान नहीं है; और एक वैज्ञानिक अनुवाद में एक शब्द भी आवश्यकता से कम या अधिक नहीं आना चाहिये।

संस्कृत रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद करना अपेक्षाकृत सुसाध्य है, किंतु अंग्रेजी के भावों को देशी भाषा में औचित्य और सौष्ठव के साथ व्यक्त करना अत्यन्त कठिन है। इस कठिनता पर पार पाने में ही हिन्दी अनुवादकों की इति-कर्तव्यता है।

अंग्रेजी में विज्ञान, शिल्प, गीति और अर्थशास्त्र जैसे अनेक विषय हैं, जो हिंदुस्तान और हिन्दी के लिये नये से हैं। इन विषयों के पारिभाषिक शब्दों के लिये हिन्दी में उचित शब्द घड़ने पड़ेंगे। जैसे शब्द आज घड़े जायंगे, वैसे ही भविष्य में प्रचलित हो जायंगे; इसलिये हिन्दी-पारिभाषिक-शब्दावली के निर्माण में अत्यन्त सावधानी और धीरता से काम लेना चाहिये।

इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए हम यहां अनुवाद के कुछ नमूने देते हैं। छात्रों को चाहिये कि इनका ध्यान से अनुशीलन करें और इन्हें सामने रख कर प्रतिदिन थोड़ा-थोड़ा अनुवाद करते रहें। अनुवाद करने के बाद उसे ध्यान से पढ़ लें और देखें कि क्या उसमें वही आनन्द आता है जो मौलिक रचना में था। यदि हाँ तो समझें कि अनुवाद सफल है और यदि नहीं तो उसे फाड़ डालें और दूसरी बार फिर अनुवाद करें। इस प्रकार तब तक करते जांय जब तक कि उन्हें अपनी रचना में मौलिक रचना का आनन्द न आने लगे।

सफल अनुवाद करना अत्यन्त दुःसाध्य है; इसके लिये सतत प्रयत्न और बार-बार आवृत्ति की आवश्यकता है। नीचे दिये अनूदित संदर्भों को ध्यान से पढ़ो और उनके अनुसार नवीन संदर्भों का प्रतिदिन अनुवाद करो।

"The State shall endeavour to secure, by suitable legislation or economic organisation or in any other way, to all workers, industrial or otherwise, work, a living wage, conditions of work ensuring a decent standard of life and full enjoyment of leisure and social and cultural opportunities" (34).

राज, उपयुक्त कानून द्वारा या आर्थिक संघटन अथवा किसी और प्रकार से इस बात का यत्न करेगा कि सब श्रमियों को—चाहे वे उद्योग-धन्धों में काम करने वाले हों या और तरह के—काम और पेटभर मज़दूरी मिले और काम की शर्तें ऐसी हों कि उनके जीवन का स्तर भद्र बन जाय और वे फुरसत के समय से और सामाजिक तथा सांस्कृतिक अवसरों से पूरा लाभ उठा सकें।

40. "The State shall promote international peace and security by the prescription of open, just and honourable relations between nations, by the firm establishment of the understandings of international law as the actual rule of conduct among governments and by the maintenance of justice and respect for treaty obligations in the dealings of organised people with one another".

राज, राष्ट्रों के बीच खुले, उचित तथा भद्र संबन्धों के विधान से, सरकारों के बीच आपसी व्यवहार का असली नियम अन्तर्राष्ट्रिय कानून के समझौतों को पक्की तरह बनाने से और संघटित जनों के आपसी व्यवहार में न्याय को और संधियों के प्रति दायित्व के लिये आदर को बनाए रखने से अन्तर्राष्ट्रिय शान्ति तथा सुरक्षा को बढ़ावेगा।

Rights of Equality

The State shall not discriminate against any citizen, on grounds only of religion, race, caste, sex or any of them. In particular, no citizen shall, on grounds only of religion,

race, caste, sex or any of them, be subject to any disability, liability, restriction or condition with regard to—

(*a*) access to shops, public restaurants, hotels and places of public entertainment, or

(*b*) the use of wells, tanks, roads and places of public resort maintained wholly or partly out of the revenues of the State or dedicated to the use of general public.

समता के अधिकार

(६) राज केवल धर्म, नस्ल, जाति और लिङ्ग के, अथवा इनमें से किसी एक के आधार पर किसी नागरिक से भेद-भाव नहीं बरतेगा ।

विशेषतः किसी नागरिक पर केवल धर्म, नस्ल, जाति और लिङ्ग के, अथवा इनमें से किसी एक के आधार पर नीचे लिखी बातों में किसी तरह की असमर्थता, मजबूरी, रोक या शर्त नहीं लगाई जायगी:—

(अ) दुकानों, आम भोजनालयों, होटलों और मनोरञ्जन की आम जगहों में प्रवेश;

(आ) ऐसे कुओं, तालाबों, सड़कों, और आम जगहों का उपयोग, जो सर्वथा या किसी अंश में सरकारी रुपये से चलती हों, या जो जनता के उपयोग के लिये लगाई गई हों ।

Subject to the other provisions of this article all citizens shall have the right—

(*a*) to freedom of speech and expression.
(*b*) to assemble peaceably and without arms ;
(*c*) to form associations or unions ;
(*d*) to move freely throughout the territory of India ;
(*e*) to reside and settle in any part of the territory of India ;
(*f*) to acquire, hold and dispose of property ; and

(*g*) to practise any profession, or to carry on any occupation, trade or business.

इस दफा की अन्य शर्तों के अधीन हर नागरिक को अधिकार होगाः—

(अ) बोलने और विचार प्रकट करने की आजादी का;

(आ) शान्ति के साथ, हथियार बिना, इकट्ठे होने का;

(इ) समाज और संघ बनाने का;

(ई) हिन्द के सारे इलाके में बे-रोक-टोक आने जाने का;

(उ) हिन्द के इलाके के किसी भी हिस्से में रहने और आबाद होने का;

(ऊ) जायदाद खरीदने, रखने और बेचने का;

(ए) किसी पेशे को अपनाने या किसी धन्धे, व्यापार या तिजारत को करने का।

The State shall, in particular, direct its policy towards securing—

(1) that the citizens, men and women equally, have the right to an adequate means of livelihood;

(2) that the ownership and control of the material resources of the community are so distributed as best to subserve the common good;

(3) that the operation of the economic system does not result in the concentration of wealth and means of production to the common detriment.

(4) that there is equal pay for equal work for both men and women;

(5) that the strength and health of workers, men and women, and the tender age of children are not abused and that citizens are not foreed by economic

necessity to enter avocations unsuited to their age or strength ;

(6) that childhood and youth are protected against exploitation and against moral and material abandonment.

राज की अपनी नीति का विशेष लक्ष्य होगा कि वह देखे कि—

(१) नागरिकों को—मर्दों और औरतों को—समानरूप से जीविका के पर्याप्त साधन मिले हुए हैं;

(२) कौम के माली साधनों का स्वामित्व तथा नियन्त्रण इस प्रकार बंटा है कि उससे अधिक से अधिक आम भलाई हो;

(३) आर्थिक व्यवस्था का अमल ऐसा नहीं है कि उससे संपत्ति और उत्पत्ति के साधन इस प्रकार केन्द्रित हो जांय, जिससे आम लोगों की हानि हो;

(४) मर्दों और औरतों—दोनों को—बराबर काम के लिये बराबर वेतन मिलता है;

(५) श्रमियों, मर्दों और औरतों की शक्ति और स्वास्थ्य का और बच्चों की कच्ची उम्र का दुरुपयोग नहीं होता और आर्थिक आवश्यकता नागरिकों को ऐसे रोज़गार करने पर बाध्य नहीं करती, जो उनकी अवस्था और शक्ति के लिये अनुकूल न हों;

(६) बच्चों तथा किशोरों से नाजायज़ लाभ नहीं उठाया जाता और आचारी तथा माली बेचारगी से उनकी रक्षा की जाती है।

अभ्यास

"In the event of the occurrence of any vacancy in the office of the President by reason of his death, resignation or removal, or otherwise, the Vice-President shall act as President until the date on which a new President is elected

in accordance with the provisions of this chapter to fill such vacancy enters upon his office."

2. "I do solemnly affirm or swear that I will faithfully execute the office of President of India and will, to the best of my ability, preserve, protect and defend the constitution and the law and that I will devote myself to the service and well-being of the people of India."

3. A Vice-President may be removed from his office for incapacity or want of confidence by a resolution of the Council of States passed by a majority of all the then members of the Council and agreed to by the House of the People; but no resolution for the purpose of this clause shall be moved unless at least fourteen days' notice has been given of the intention to move the resolution.

4. "I had now leisure to examine the purse. It was a stiff leather purse, with a snap, and had three bright shillings in it, which Peggotty had evidently polished up with whitening, for my greater delight. But its most precious contents were two half-crowns folded together in a bit of paper, on which was written, in my mother's hand, 'for Davy, with my love'. I was so overcome by this, that I asked the carrier to be so good as to reach me my pocket-handkerchief again; but he said he thought I had better do without it, and I thought I really had, so I wiped my eyes on my sleeve and stopped myself."

5. Fergus, as the presiding judge was putting on the fatal cap of judgment, placed his own bonnet upon his head, regarded him with a steadfast and stern look, and

replied in a firm voice, "I cannot let this numerous audience suppose that to such an appeal I have no answer to make. But what I have to say, you would not bear to hear, for my defence would be your condemnation. Proceed, then, in the name of God, to do what is permitted to you. Yesterday, and the other day before, you have condemned loyal and honourable blood to be poured forth like water spare not mine. If that all of my ancestors were in my veins, I would have perilled it the this quarrel." He resumed his seat, and refused again to rise.

6. Recently, however, there has been a change, and lowbrows now adopt towards highbrows exactly the same attitude as highbrows have always adopted towards them. Each highbrow did and does congratulate himself on being unique in his unlikeness to other men. And conversely each lowbrow now congratulates himself on being in some mystical way unique in his likeness—on being, so to say outstandingly average and extraordinarily ordinary. The snarlings of their respective egotisms add yet another discordant note to the contemporary babel."

7. Now the fuller life is not, as such, good; nor, as such, is the emptier life bad. Any kind of life is only the raw material out of which individuals can make goodness or badness. Whether the relatively full life of highbrows is a more suitable material out of which to manufacture goodness than the relatively empty life of lowbrows, I do not know; but I think that, on the whole, it may be."

8. In the cab and in the train, and again in the cab from the station at Cambridge, he had brooded, restless and

unhappy. Why had the boy not come to him? What had he been doing to require an overdraft like that? He had a good allowance. He had never said anything about being pressed for money. This way and that way he turned it in his mind, and whichever way he turned it, the conclusion was that it showed weakness—weakness to want the money; above all weakness not to have come to his father first of all things, old Jolyon disliked weakness. And so there he stood, tall and grey-headed in the doorway.

9. The bodies of human beings are affected by the good or bad states of their minds. Analogously, the existence at the least of things of a divine serenity and good-will may be regarded as one of the reasons why the world's sickness, though chronic, has not proved fatal. And if, in the psychic universe, there should be other and more than human conciousnesses obsessed by thoughts of evil and egotism and rebellion, this would account, perhaps, for some of the quite extravagant and improbable wickedness of human behaviour.

10. A resolute and objective inspection of personal experience will, in nine cases of out of ten, dismiss this idyllic picture as nonsensical. On this, I claim to be a good witness. I could say, if I may borrow the charming title of Marie's enchanting book: I, too, have lived in Arcadia. For me, conditions in youth, were wholly favourable.

11. Don't let me idealize, however. I am not claiming that, except in one significant respect, I have changed as much as I would wish. Far is it from my mind to

assume an achieved self-mastery or an established steady philosophy which make me immune to shocks.

12. For life has taught me that the whole pulsating drama of this modern age, with its swift travel to colourful scenes, exciting situations and complex undertakings, has, as its culmination, the happiness and respect of one's wife, family and friends.

13. There is many an experience of mine for which, taken by itself and in isolation from the organic totality, I can utter no blessing but only a curse, if I am to utter anything at all. Such is a toothache, and a thousand other aches that flesh is heir to, mine and other men's, of which the heartaches are the worst.

14. I have been dealing so far with what may be termed the psychological aspects of administration, which, as I have endeavoured to convey, transcend any questions of the structure of the administrative machine. However perfectly functions may be adjusted between the various parts of an organisation, however carefully the chain of responsibility may be contrived, the organization can only be effective if those who control it have the faculty of giving sagacious decisions at the psychological moment.

15. I regard it, then, as a great grace of God that He should have shown me so many things, and in them, so much beauty and goodness; and that I have been continuously aware that I cannot even begin properly to appreciate the beauty of one petal of one flower, and that there is here no question of thoughts that lie too deep for tears, but of a perception too deep for thoughts. And when you come to

Man—what then ? If, touching a flower, you truly touch the hem of God's garment ; if you can never venerate and love it as He does—for He who is preserving it sees His own reflection in it infinitely better than we do or can... what, when you touch a soul ? Intelligence ; freedom ; immortality...the worth that God sees in each soul, a worth to be estimated by the fact of the Incarnation, the Death and Resurrection of the Son of God made man.

16. While the people of Israel remained in the region of Mount Sinai, God gave them by Moses a great system of rites and sacrifices which they were carefully to observe. While ordinary sacrifices of lambs and goats were to be often made, there was one particular day in the year, called the Day of Atonement, on which very special services were to be performed and special sacrifices offered. At one of these, the high priest was to take two goats, and offer one of them in sacrifice before the Lord for a sin-offering ; and as to the other goat, it was enjoined that the high priest shall lay both his hands on the head of the live goat and confess over him all the iniquities of the children of Israel and all their transgressions in all their sins, putting them upon the head of the goat, and shall send him away by the hand of a fit man into the wilderness. And the goat shall bear upon him all their iniquities unto a land not inhabited and he shall let go the goat in the wilderness."

शब्द संचय

अनुवाद के लिये ध्यान देने योग्य शब्द

Ability—योग्यता
Abolish—अन्त करना, मिटाना
Aboriginal tribes—आदिवासी
Abrupt—आकस्मिक, अपूर्ण
Absolute—परम, एकान्त, शुद्ध
Absorption—तन्मयता
Abstract—संक्षिप्त, संक्षेप
Abstruse—गूढ़, दुर्बोध
Absurd—अर्थहीन, बेहूदा
Academy—विद्वत्परिषत्
Account—वर्णन, विवरण
Accurate—शुद्ध, यथार्थ
Acknowledgment—स्वीकृति, प्राप्ति-स्वीकार
Acquire—प्राप्त करना, हासिल करना
Act—अंक, विधान
Action, reaction—क्रिया, -तिक्रिया
Actor—पात्र, अभिनेता
Actual—वास्तविक
Adaptation—अनुकूलन
Additional Secretary—अपर सचिव
Address—पता, भाषण, प्रवचन
Adept—दक्ष, चतुर
Adequate—पर्याप्त
Ad hoc—जरूरती
Adjacent—समीपवर्ती
Adjourn—स्थगित करना, मुल्तवी करना
Adjustment—समायोजन, समाधान
Administration—शासन
Admission—प्रवेश
Adopt—मंजूर करना
Adore—प्रेम, सत्कार करना
Adoption—गोद लेना

Advent—आगमन
Advertisement—विज्ञापन
Advice—सलाह, समाचार, मांग
Advisory Council—सलाहकार समिति
Aerial—हवाई, कल्पित
Aerodrome—हवाई अड्डा
Aesthetic—कला संबन्धी,
Affirm—समर्थन करना
Affirmation—वचन भरना, पुष्टि, प्रतिज्ञा, समर्थन
Affix—प्रत्यय, जोड़ना,
Aged—वृद्ध
Agglutination—संसर्ग, संसृष्टि
Agreement—एकता, समझौता, वायदा
Aim—उद्देश्य, लक्ष्य
Aircraft—हवाई जहाज
Airways—हवाई मार्ग
Alias उपनाम
Alien—परदेसी
Allegiance—वफादारी
Allegory—रूपक
Alliteration—अनुप्रास
Allowances—भत्ते
Allusion—संकेत
Almanac—पत्री, पंचांग, जंत्री
Alma Mater—मातृसंस्था
Alphabet—वर्णमाला, अक्षर
Altruism—परार्थवाद, परार्थिता
Ambiguous—संदिग्ध, अस्पष्ट
Ambition—महत्त्वाकांक्षा
Amenity—सुख-साधन
Amplitude—अग्रांश
Anachronism—कालदोष
Analogous—सदृश, अनुधार्मिक
Analogism—सादृश्यवाद
Analogy—सादृश्य, उपमान, अनुधर्मता
Analyse—विश्लेषण
Analyst—विश्लेषक
Analytic—विश्लेषणात्मक
Anarchism—अराजकवाद
Anarchy—अराजकता
Anatomy—अंगव्यवच्छेद-विद्या
Ancestral—पैतृक
Ancillary powers—पूरक अधिकार
Animate—चेतन
Anomaly—उत्केन्द्रता
Anomalous—अनमेल अनियमित

Answer—उत्तर
Antagonism—विरोध
Antecedent—पूर्वगामी, प्राक्कालिक
Anthropology नृविज्ञान
Anti—विपरीत
Antiquarian—प्राचीनवस्तु-संग्राहक
Antiquity—पुरातनता
Anti thesis—वैषम्य
Apathetic—उदासीन, विरक्त
Aphorism—सूत्र
Apologue—अन्योक्ति, अर्थवाद
Apostrophe—लोपचिह्न
Apparent—स्फुट, स्पष्ट
Appeal—निवेदन, विनय
Appellate jurisdiction—अपील सुनने का अधिकार
Appellation—नाम, उपाधि
Appendix—परिशिष्ट
Applause—प्रशंसा, वाहवाह
Applicant—प्रार्थी, आवेदक
Appointment—नियुक्ति और and dismissal—वियुक्ति
Appreciation—गुणविवेचन
Apprehension—अवगति, भीति
Approbation—अनुमोदन, स्वीकृति
Appropriate—उचित, उपयुक्त, समीचीन, मुनासिब
Approval—स्वीकृति, अनुमति, रजामंदी
Aptitude—झुकाव, योग्यता
Arbitral tribunal—पंचायती अदालत
Arbitrary—स्वेच्छाचारी, निरंकुश
Arbitrate—पंच बनना, पंच फैसला करना
Archaeology—पुरातत्त्व विद्या
Architect—शिल्पकार, निर्माता
Architecture—इमारत कला
Archives—संग्रहालय
Area—रकबा, इलाका
Argue—तर्क करना, विवाद करना
Argument—तर्क, उक्ति
Arrange—सजाना, तरतीब में रखना
Arrangement—प्रबन्ध, व्यवस्था
Art—शिल्प, कला, गुण
Article—लेख, परिच्छेद
Articulate—व्यक्त, स्पष्ट
Artifice—कलाबाजी, उपाय
Artificial—कृत्रिम, बनावटी
Artificer—निर्माता, शिल्पकार

Artisan—शिल्पी
Artistic Skill— कलानैपुण्य
Ascertainment—निर्धारण, मालूम करना
Aspect—रूप, आकार, पहलू
Asperse—बखेरना, कलङ्क, तोहमत, दाग
Aspirant—अभिलाषी
Aspirated—महाप्राण
Ascent—चढ़ाव, उभार, उन्नति
Assent—मंजूरी
Assiduity—धुन, एकाग्रता
Assess—आंकना
Assimilate—पचाना, अनुरूपण
Assets—पूंजी, लेनदारी
Association—संसर्ग, समूह, सम्मिति
Asteric—तारकचिह्न
Astringency—बंधेज, कब्ज
Astrologer—ज्योतिषी
Astrology—(फलित) ज्योतिष
Astronomy—ज्योतिष, खगोल-विद्या
Atheism—नास्तिकता
Atomist—परमाणुवादी
Attachi—सहायक, नायब, एलची
Attentive—सावधान
Attitude—प्रवृत्ति, ढङ्ग
Audit—आयव्यय-जांच, पड़ताल करना
Auriferous—उर्वर, सोने से भरा
Aurist—कान का इलाज करने वाला
Authentic—प्रामाणिक, विश्वसनीय
Authenticate—सही करना
Author—लेखक
Authority—अधिकार, प्रमाण, अधिकारी, सत्ता
Authorise—अधिकार देना
Authoritative—प्रामाणिक
Autobiography—आत्मकथा, मेरी कहानी
Autograph—स्वलेख
Automatic—स्वतोवर्ती
Autonomy—स्वायत्तशासन, स्वप्रबन्धाधिकार
Auxiliary—सहायक, मददगार
Avalanche—बरफ का पहाड़
Average—औसत
Avaricious—लोभी, लालची
Azure—आसमानी, आकाशीय

Backing—सहायता
Babbling—बकवास
Backward Classes—पिछड़ी जमातें
Balance—तुलन, सामञ्जस्य
Ballet—नाच, रहस, जैसे रशियन नाचविशेष
Ballad—गाथा, चारणकाव्या
Ballot Secret—बंद परचियां
Bard—भाट, चारण
Basic—मौलिक
Basis—नींव, आधार
Beacon—दीपसंकेत
Beautiful—सुन्दर, रुचिर
Being—अस्तित्व, हस्ती, सत्ता
Belief—विश्वास, प्रत्यय
Benediction—आशीष, शिव
Benevolence—परोपकारिता, शुभानुध्यान
Bibliography—ग्रन्थ सूची
Bicameral—दोसदनी
Biennial—द्विवार्षिक, दु-बरसी
Bifurcation—दु-शाख
Bigot—कट्टर, धर्मान्ध
Binoculars—दुआँखी, दूरबीन, दूरवीक्षण
Biography—जीवनी, जीवनचरित
Biology—प्राणिविद्या, जीवविद्या
Bisect—दो बराबर टुकड़े करना, द्विभाजन
Blank—रीता, कोरा
Blank Vase—अतुकान्त कविता
Bloom—आभा, प्रभा, विकास
Blossom—फूल
Board—समिति, सभा
Boil—फोड़ा
Bombast—शब्दाडंबर
Bona Fide—विश्वासी, वास्तव, निर्व्याज
Bonny—सुन्दर, चञ्चल
Bonum—सत्, कल्याण
Book-case—छोटी अलमारी
Bookish—किताबी
Book-worm—किताबी कीड़ा
Boon—प्रसाद, वर
Boorish—जङ्गली, पशु वाहीक
Botany—वनस्पति शास्त्र, वृक्ष-विज्ञान
Boudoir—रनवास, अन्तःपुर
Bracket—कोष्ठक
Bouquet—गुलदस्ता, पुष्पगुच्छ
Breath—श्वास

Breathed—अघोष
Breviary—प्रार्थनापुस्तक
Brevity—संक्षेप, लाघव
Brilliant—चमकीला, दीप्त
Broadcast—प्रसारण, व्यास
Broad outline—सामान्य रूप-रेखा
Broil—झगड़ा, दङ्गा, उपद्रव
Budget—बजट, आयव्ययपत्र
Bronchitis—फेफड़े की सूजन; फुफ्फुसशोथ
Bulletin—सूचनापत्र, गजट
Brunette—भूरी, सलोनी, बादामी रङ्ग की स्त्री
Bumptions—अहंकारी
Busy—लग्न, अध्यवसायी
Business—व्यापार, काम
By Authority—अधिकार से
By-Election—उपचुनाव
By-Product—अनुषंगजात
Bye-Laws—उपनियम
By the way—प्रसंगवश
By Word—कहावत
Calculation—गिनना, गणन
Calculous—पथरीला, कङ्करीला
Calligraphy—सुलेख
Calling—धंदे
Candid—स्पष्ट, निष्पक्ष
Candour—स्पष्टता, निष्पक्षता
Canoe—नाव, डोंगा
Canon—नियम, व्यवस्था
Cant—निरर्गल भाषण
Canto—सर्ग
Cantonment—छावनी
Canopy—छत्र, मण्डप
Capacity—शक्ति, क्षमता, योग्यता
Capability—सामर्थ्य, शक्ति, लियाकत
Capital—पूंजी, प्रधान, आवश्यक
Capital expenditure—पूंजीव्यय
Capital punishment—प्राणदंड
Capitalist—पूंजीवादी
Caprice—मौज, सनक,
Caption—शीर्षक
Cardinal—प्रधान, आधार, मुख्य
Cardinal vowel—प्रधान स्वर
Career—जीवन, प्रगति
Caricature—प्रहास, भद्द
Carnal—दैहिक, ऐन्द्रिय
Carol—हर्षगान
Cartoon—व्यंग्य चित्र

Casting vote—जिताऊ वोट
Casuist तर्क प्रवण
Casual—वक्ती, सामयिक, दैवसंयोगी
Catalogue—सूचीपत्र
Cause—कारण, हेतु
Causative—प्रेरणार्थक क्रिया
Celebrate—मनाना
Celebrity—कीर्ति, ख्याति, मान
Central—केंद्रीय
Centrifugal—केंद्रपराक
Centripetal—केंद्रोपाक
Century—शताब्दी, सदी
Cerebral—मूर्धन्य
Certify—प्रमाणित करना
Cess—शुल्क, कर, मुकामी-टैक्स, चन्दा
Cessation—निवृत्ति, विच्छेद
Chairman—सभापति, अध्यक्ष
Chamber of Commerce—वाणिज्य मण्डल
Characteristics - लक्षण विशेषता
Chamber-Counsel परामर्शक वकील, सलाही वकील
Charge - दोषारोपण
Charm - आकर्षण, मन्त्र
Chart—मानचित्र
Charter—सनद, पट्टा, अधिकारपत्र
Chemical—रासायनिक
Chemistry—रसायन शास्त्र
Chief Secretary—प्रधान सचिव
Choice—छांट, चयन
Chorus—टेक, गायक-टोली
Chronicle—कालक्रमानुसार इतिहास
Chronology—काल-निर्णय-विद्या, सिलसिलेवार तारीख, अनुक्रमण
Circular—चक्राकार
Circular letter - परिपत्र
Circulate—प्रचारण, प्रचार करना
Circumstantial—प्रासंगिक, क्रमिक
Civic—नागरिक
Civics—नागरिक शास्त्र
Civil—नागरिक, सरकारी, दीवानी, जानपद
Civil Administration—जानपद-शासन
Civilisation—सभ्यता
Claimant—दावेदार, अधिकारी
Clan—जाति, पंथ

Clandestine — गुप्त, रहस्यात्मक
Classic — प्राचीन-रचना, आदर्श-रचना
Classical — पुराण, प्राचीन, प्रथम कोटी की रचना
Classification · वर्गीकरण
Clause — उपवाक्य, धारा
Climax — पराकोटि, पराकाष्ठा
Code — नियमावली, संहिता
Codex — हस्तलिखित प्राचीन पुस्तक
Cogitate विचार करना
Cognition — ज्ञान
Collaborate — साथ मेहनत करना
Collate — लिखित ग्रन्थों की परीक्षा
Collateral — आनुषंगिक
Collect — संग्रह करना
Colloquial — बोलचाली
Colon — विसर्ग चिह्न(:)
Column — स्तंभ, पीठ
Comedy — सुखान्त नाटक
Comic — प्रहसन, हास्यप्रधान
Commemorate — मनाना, स्मरण करना
Commentary — टीका, टिप्पणी
Commerce — तिजारत
Committee — समिति, कमेटी
Commune — वार्तालाप करना
Communicable — संवेदनीय
Communication — यातायात निवेदन
Communique — विज्ञप्ति, सूचना
Communism — समष्टिवाद, साम्यवाद
Community — फिरका
Compare – तुलन, समता करना
Comparative — तुलनात्मक
Comparison – तुलना, सादृश्य-विचार
Compassion - अनुकंपा
Compatibility — संगति
Compendious — संक्षिप्त, परिमि
Compendium — सार, तत्त्व,
Compensate — क्षति-पूरण, हरजाना
Competent — योग्य, कुशल
Competition — संघर्ष, बराबरी
Complaint – शिकायत, अभियोग
Compile — संकलन
Complex — जटिल, मिश्रित
Complicated — जटिल, पेचीदा
Components — घटकतत्त्व, जुज़

Compound—समास, संयुक्त, यौगिक
Compound sentence—संयुक्त वाक्य
Compromise—समझौता, समाधान
Compulsory—अनिवार्य
Comprehensive—व्यापक
Compute—हिसाब लगाना
Con—रटना
Complement—पूरक, अभिनन्दन
Complimentary—पूरक
Conceit—अभिमान, कल्पना
Conceive—सोचना, विचारना
Concentrate—एकाग्र करना, स्थिर करना
Conception—विचार, धारणा
Concession—रियायत, सुविधा
Concise—संक्षिप्त
Conclude—समापन
Conclusion—समाप्ति, उपसंहार
Concomitant—समन्वित
Concordance—शब्द सूची
Concurrent—सहगामी सहयोगी, दो-तरफी तालिका
Condensation—दृढीकरण, घनी करण
Condition—अवस्था, प्रतिबन्ध, शर्त
Conditioned—प्रतिबद्ध, परिच्छिन्न
Conduct—चलन
Conference—संमेलन, कांफ्रेंस
Confidential—गुप्त,
Confirmation—पक्का करना, संपुष्टि
Confermity—अनुरूपता, अनुकूलता
Confusion—संमोह, भगदड़, घबराहट
Congenial—अनुकूल, योग्य
Congratulation—बधाई
Congruity—सामंजस्य
Conjumet—संश्लिष्ट
Conjunction—समुच्च बोधक
Conjuncture—संयोग
Connection—संबन्ध
Connotation—द्योतकता, लक्षण
Conscience—अन्तरात्मा
Conscious—सचेत, चेतन
Consecutive—क्रमिक, यथाक्रम
Consent—अनुमति

Consequent—फलित, परिणामात्मक

Consequential—नतीजे के तौर पर

Conservative—अनुदार, पुराणानुवर्ती

Consolidation—घनीकरण, एकत्रीकरण

Consonant—व्यञ्जन

Conspicuous—प्रत्यक्ष, स्पष्ट

Constituency—चुनाव का हलका

Constituent—उपादान, अवयव, घटक, विधायक

Constitute—बनाना

Constitution—विधान, घटन

Constitutional—वैध

Constitutionalist—विधानवादी

Constrained—नियंत्रित

Construction—निर्माण, रचना

Constructive—विधायक, बनाऊ

Consultation—परामर्श, मंत्रणा

Contact—संबन्ध, संस्पर्श

Contemplate—ध्यानस्थ, ध्यानीय

Contempt of Court—अदालत का अपमान

Contemporary—समकालिक

Content—संतोष

Contest—विवाद, संघर्ष

Context—प्रसंग, प्रकरण

Contiguity—लगाव

Contiguous—लग्न, लगातार

Contingencies Expenditure—संभावित व्यय

Continuous—सतत, निरन्तर

Contract—ठेका

Contradict—प्रत्याख्यान, काटना

Contradiction in terms—शब्द विरोध

Contrast—विरोध

Contributary Pension—सहायक पैंशन

Contrivance—युक्ति, कौशल

Contribute—लेख लिखना, सहायता देना

Control—नियन्त्रण, रोकथाम

Controversial—विवादास्पद

Controversy—विवाद

Convention—समागम, मर्यादा, रिवाज

Converse—परिवर्तित

Conversion—परिवर्तन, बदलना

Convertible—परिवर्तनीय
Convict—दोषी ठहराना
Co-operation—सहयोग, सहकरण
Co-ordination—तालमेल
Copious—भरपूर
Corollary—फलित, परिणाम
Corpus—लेख संग्रह
Correction—शोधन
Correlation—परस्पर संबन्ध
Correlative—परस्परापेक्ष
Correspondence—पत्र व्यवहार, चिट्ठी-पत्री
Corresponding—जवाबी, प्रतिरूपता
Correspondent—संवाददाता
Corruption—भ्रष्टता, घूसखोरी
Cosmic—विश्व संबन्धी, पार्थिव
Cosmogony—सृष्टिक्रम
Cosmopolitan—उदार, सार्वभौमिक, विश्वजनीन
Cosmos—जगत्, विश्वप्रपंच
Counter-action—प्रतिक्रिया, प्रतीकार, उलट
Counter-attack—प्रत्याक्रमण, जवाबीधावा
Counterpart—प्रतिरूप
Countless—असंख्य
Council—परिषद्, समिति, मंडल सदन
Course—पाठ्यक्रम
Court-martial—फौजी अदालत
Cram—रटना
Creation—सृष्टि, उत्पत्ति
Creative—विधायक, रचनात्मक
Creator—विधाता
Credential—प्रमाणपत्र
Credible—विश्वसनीय, मान्य
Creed—संप्रदाय, धार्मिक-विश्वास
Crisis—संकट, संकटकाल
Criteria—कसौटी
Critic—प्रमाता, समालोचक
Critical—आलोचनात्मक, समीक्षात्मक
Critique—आलोचनात्मक निबन्ध आलोचना-कौशल
Crude—कच्चा, असंस्कृत
Culpable—प्रामादिक
Culture—संस्कृति
Cultural—सांस्कृतिक
Cumulative—प्रवृद्ध, इकट्ठा
Current—चालू, धार

Demerit—दोष
Demobilisation—लाम तोड़ना
Demise—मरण
Democracy—प्रजातन्त्र राज
Demonstrate—प्रदर्शन करना
Demonstrative—उपपादक
Denominate नामकरण
Denominative—नामधातु
Dental—दंत्य
Department—विभाग, महकमा
Dependent—सापेक्ष, निर्भर
Depict—चित्रण, विशद करना
Deputy Secretary—प्रतिसचिव
Derivation—व्युत्पत्ति
Derivative—व्युत्पन्न
Derogate—कमी करना, गिराना
Describe—वर्णन करना
Design—योजना
Destructive– विनाशात्मक
Detail—विस्तार
Determination—निर्णय, निर्धारण
Determinist– व्यवसानवादी, नियतिवादी
Development—विकास,
Device—उपाय
Devolution – उपक्रान्ति
Dexterity—दक्षता, कुशलता
Dialect—बोली, उपभाषा
Dialectal materialism—द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद
Dialectic—तर्कप्रणाली, विवाद-कुशलता
Dialogue—कथोपकथन
Dictation - श्रुतलेख
Diction—शब्दविन्यास, रीति
Dictionary—कोश
Dictum - उक्ति, सिद्धान्त, वचन
Didactics—शिक्षाशास्त्र
Difference—अन्तर, भेद
Difference of opinion—मतभेद
Differentia—भेदचिह्न
Differential—अवकल
Dimension—परिमाण, विस्तार
Diminutive—अल्पार्थक
Diphthong—संयुक्त स्वर
Diploma—उपाधिपत्र
Direction—संचालन, आदेश, देखरेख
Direct—प्रत्यक्ष
Disability—अयोग्यता, असमर्थता

Disciple—शिष्य
Discipline—नियमन, अनुशासन, कायदादारी
Discrepancy—विरोध, असंगति
Discordant—असंगत, बेमेल
Discovery—खोज
Discretion—समझ, विवेक, मरजी
Discrimination—भेदभाव
Discuss—विवाद करना, तर्कवितर्क
Disharmony—विरोध, भिन्नता, असामञ्जस्य
Disinterested—निःस्वार्थ, बेगरज
Disorder—व्यतिक्रम, दुर्व्यवस्था
Disparity—फर्क
Disposition—प्रवृत्ति, मनोवृत्ति
Dispensary—दवाखाना
Dispose of—निपटाना
Disquisition—निबन्ध
Disqualification—अयोग्यता
Disregard—अवज्ञा, उपेक्षा
Dissect—विश्लेषण
Dissent—विपरीत मत
Dissimilar—असम, विषम
Dissimilation—विषमीकरण
Dissonant—कर्णकटु
Dissertation विशद विवरण विशद निबन्ध
Distinct—स्पष्ट, प्रत्यक्ष
Distinction—भेद, महत्ता, विशेषता
Distraction—विक्षेप, विनोद
Distribution—विभाजन, वितरण
Diversity in unity—एकत्व में अनेकत्व
Dividend—बंटावा
Divine—ईश्वरीय, दैवी
Divisible—विभाज्य
Division—भेद, शाखा
Doctrine—मत, सिद्धान्त
Document—प्रामाणिक पत्र, सरकारी कागजात
Dogma—मत, सिद्धान्त
Dogmatism—हठोक्ति, हठधर्मिता
Dominant note—मुख्य स्वर, सार
Donation—दान
Doubt—संदेह, संशय

Draft—पांडुलिपि, मसौदा
Dramatic personage—नाटक के पात्र
Drift—वेग, बहाव
Dual—द्विवचन
Dualism—द्वैतवाद
Duplicate—प्रतिलिपि
Durability—स्थिरता, अक्षयता, पक्कापन
Duration—कार्यकाल, दौरान
Dynamic—गत्यात्मक, प्रगतिशील
Eccentricity—सनक, विषमता
Echo—प्रतिध्वनि
Economic—आर्थिक
Economics—अर्थशास्त्र, संपत्तिशास्त्र
Ecstacy—आनंदातिरेक
Edition—संस्करण, आवृत्ति
Editorial—संपादकीय
Education—शिक्षा
Education technical—शिल्प-शिक्षा
Educative instruction—आचार प्रवण शिक्षा
Efficiency—कुशलता, प्रवीणता
Ego—अहं, आत्मा
Egoism—अहंकार, आत्मवाद
Egotism—अहंकार
Eject—निकालना
Elaborative faculty—विस्तार-शक्ति
Election—चुनाव
Election tribunal—चुनाव-मञ्च
Electoral college—चुनाव-मंडल
Electoral constituency—चुनाव-क्षेत्र
Elegy—शोकगीत
Element—तत्त्व, अंश, मूलवस्तु, उपादान
Elementary—प्रारंभिक, इब्तदाई
Elevation—उन्नति
Elide—लोप
Elocution—वक्तृत्वकला
Eloquence—वक्तृत्वशक्ति
Elucidate—व्याख्या करना, प्रकाश डालना
Emblem—लक्षण, प्रतीक
Embryology—गर्भशास्त्र
Emolument—वेतन
Emotion—भाव, आवेग
Emotional interest—रस

Emotional mood—भाव-प्रवण मनःस्थिति

Emphasis—बल देना

Empirical—व्यावहारिक, प्रयोगसिद्ध

Empower—अधिकार देना

Emulation—स्पर्धा

Enact—अभिनय करना, नियत करना, बनाना

Endeavour—प्रयत्न

Endowment—देन

Energetic—उत्साहपूर्ण, शक्तिशाली

Enlightenment—प्रकाशन, संस्कार, ज्ञानोदय

Enquiry—पूछताछ

Entire—सारा, पूर्ण

Entomology—जीव-विज्ञान, कृमिशास्त्र

Enunciation—उच्चारण, घोषणा, प्रकाशन, व्याख्यान

Environment—परिस्थिति, वातावरण

Envisage—मन में चित्र खींचना

Ephimeral—अस्थायी

Epic—महाकाव्य

Epicurianism—सुखवाद, भोगवाद

Epidemic—संचारी (बीमारी)

Epigraph—शिलालेख

Epitaph—समाधि-लेख

Epithet—विशेषण

Epoch—युगारंभ

Equation—समीकरण

Equilibrium—समता, साम्यावस्था

Equivalent—पर्याय, समान

Equivocation—वाक्छल

Era—युग, संवत्

Erotic—शृङ्गारी

Error—भूल, गलती

Error of commission—काम करने की भूल

Error of omission—काम न करने की भूल

Essence—सार, तत्त्व

Essential—आवश्यक, जरूरी

Estimate—मूल्यांकन, तखमीना

Eternal—सनातन, अविनाशी

Ethics—नीतिशास्त्र

Etymology—व्युत्पत्ति शास्त्री

Evaluation—मूल्य निर्धारण, कीमत आंकना
Evidence—साक्षी
Evolution—विकास
Exaggerate—अत्युक्ति
Excellence—श्रेष्ठता
Exception—अपवाद
Excess—अधिकता
Executive—काजकारी, विधायक
Exchange of thoughts—विचार-विनिमय
Excise—निकासी
Exercise—व्यायाम, अभ्यास
Exeunt—प्रस्थान
Exhaustive—व्यापक, विस्तृत
Existence—सत्ता
Expansion—विस्तार
Ex-parte—एकांगी
Expediency—उपयुक्तता
Expenditure—खर्च
Experiment—प्रयोग
Experimental method—प्रयोगात्मक प्रणाली
Expert—विशेषज्ञ, विशारद
Explanatory—व्याख्यात्मक
Expletive—पूरक
Exploitation—बेजा फायदा उठाना
Explosion—स्फोट, धड़ाका-
Expound—व्याख्या करना
Expression—भावभंगी, अभिव्यंजन, वाक्य
Expressive—द्योतक
Extension—विस्तार, छूट
Extent—सीमा, विस्तार
Extra—अतिरिक्त
Extraordinary—असाधारण, विशेष
Extract—तत्त्व, उद्धरण
Extreme—परम, हद का
Extremity—परमावधि, सीमा
Eye-witness—प्रत्यक्षदर्शी
Fable—काल्पनिक कहानी
Facilitate—सरल बनाना
Fact—तथ्य, घटना
Factor—घटक, खंड
Faculty—मानसिक वृत्ति, विभाग
Fairy tales—कल्पना-प्रधान कहानियां
Faithfully—भक्तिपूर्वक,
Fallacy—हेत्वाभास, भ्रांति

False analogy—मिथ्या उपमान, सादृश्याभास
Familiar—परिचित, अन्तरङ्ग
Fanatic—धर्मान्ध, कट्टरपंथी
Fancy—भावना, कल्पना
Fantastic—तरंगी, विचित्र
Farce—प्रहसन, स्वाँग
Fatal—घातक
Fatalism—भाग्यवाद
Feasible—शक्य, साध्य
Federal—संघीय, मांडलिक
Federation—संघ, मंडल
Feeling—बोध, अनुभूति
Ferry charges—घाट उतराई
Fibre—तंतु, सूत्र
Fictitious—काल्पनिक, कृत्रिम
Figment—मनगढ़ंत
Figurative—आलंकारिक
Figure—अंक, चित्र, अलंकार, मूर्ति
Figure of speech—अलंकार
Final jurisdiction—आखरी सुनवाई का अधिकार
Finance—धन, अर्थ, माल
Financial statement—माली ब्यौरा
Finite—परिमित
Fitness—योग्यता, औचित्य
Flaw—न्यूनता, दोष
Flippant—बकवादी
Florid—आलंकारिक
Fluctuation—चंचलता, उतार-चढ़ाव
Fluent—धारावाही, वाक्पटु
Folio—पृष्ठ, बड़े आकार की पुस्तक
Folk literature—कथा-साहित्य
Folk-lore—जनश्रुति
Forces—सेनाएँ, फौजें
Foreword—प्रस्तावना, उपोद्घात
Form—रूप
Formality—शिष्टाचार
Formula—गुर, विधि, संकेत, सूत्र
Formulate—सूत्र-रूप में वर्णन
Formative suffix—प्रत्यय, रचनात्मक अनुबन्ध
Fortunate—भाग्यशाली
Fragment—अंश, टुकड़ा
Fraction—भिन्न, अंश
Frank—स्पष्ट, निर्व्याज
Freedom—स्वातंत्र्य
Freedom of speech—भाषण-स्वातंत्र्य

Friction—संघर्ष, घर्षण
Front - अग्र, रणाग्र
Function—व्यापार, कार्य
Fundamental—बुनियादी
Futile—असार, व्यर्थ
Garrulous—वाचाल, बकवादी
Gathering - समाज, जमात
Genealogical - वंशपरंपरा-संबन्धी
General idea सामान्य प्रत्यय
Generalisation—अनुगम
General practice—लोकाचार
Generation - पीढ़ी, वंशपरंपरा
Genius —प्रतिभा, प्रतिभावान्
Genus – जाति, वर्ग, गण
Geology - भूविज्ञान
Gesture - संकेत, चेष्टा, इशारा
Glance—दृष्टिपात, झलक
Glimpse—झलक
Glory—शान, गौरव
Gloss—टिप्पणी, टीका
Gnostic - ज्ञानवादी
Governing Body—प्रबन्धक कमेटी, शासक समिति
Grace - लालित्य, दया
Gradual—क्रमिक, उत्तरोत्तर
Grandeur— प्रतिष्ठा, प्रताप, महत्त्व
Grant—अनुदान
Grasp - समझ
Growth – विकास, प्रगति
Guess—अनुमान
Guillotine—मुखबन्ध
Guttural - कंठ्य
Habit—अभ्यास, बान
Habitude—अभ्यास, स्वभाव
Half close—अर्धसंवृत
Half open - अर्ध विवृत
Hallucination—मृगमरीचिका, मतिभ्रम
Harangue— आदेशात्मक भाषण
Harmonic—संगीतमय
Harmonious - समस्वर
Harmony – मेल, संगीत, मधुरस्वर
Harsh— कठोर
Heading —शीर्षक
Headman – मुखिया
Hedonism—सुखवाद
Henoltheism—एकदेववाद

Herald—संवादवाहक, अग्रगामी
Hereditary—वंशपरंपरागत, पैतृक
Heresy—नास्तिकता
Heretic—नास्तिक, धर्मविरोधी
Heterogeneous---विभिन्न
Hiatus---विवत्त, विच्छेद
Homage—अभिवादन
Homily—धर्मोपदेश, धर्मवाक्य
Homogeneous—समानुपाती, एकानुरूप
Homonym—समरूप, किंतु भिन्नार्थक शब्द
Honorary—अवैतनिक
Honour—संमान, प्रतिष्ठा
House—सभा, घर
Human—मानवी
Humane—दयालु
Humanism—मानवशास्त्र
Humanity—मानवता, मानव-समाज
Humility—नम्रता
Humorous—हंसीला
Hymn—भजन, गान, सूक्त
Hyperbole—अत्युक्ति
Hypothesis—अनुमान, कल्पना
Hysteria—उन्माद
Icon—मूर्ति, प्रतिमा
Ideal—आदर्श
Idealism—आदर्शवाद
Identical—समान, एकरूप
Identity—एकरूपता, अभेद
Idiocy—पागलपन, मूढ़ता
Idiom—मुहावरा, लोकोक्ति
Idol—मूर्ति, देवता
Idolator—मूर्तिपूजक
Idyl—ग्रामगीत
Ignorant—अज्ञानी, अनभिज्ञ
Illegal—न्यायविरुद्ध, व्याभिचारिक
Illegible अस्पष्ट
Illegitimate—न्यायविरुद्ध
Illicit—अनुचित
Illiteracy—निरक्षरता
Illogical—तर्क-विरुद्ध
Illusion—माया, विपर्यय
Illustrate - स्पष्ट करना, सचित्र करना
Image—प्रतिच्छाया, प्रतिरूप
Imagination—कल्पना, भावना
Imbecile—दुर्बल, सारहीन

Imitation—अनुकरण, नकल
Immanent—आन्तरीक, व्याप्त
Immediate—साक्षात्, अपरोक्ष
Immense—महान्
Immersion—निमज्जन
Imminence—समीपता
Immolation—बलिदान
Immoral—अनैतिक
Immovable—स्थावर, अचल
Immunities—बरीयतें
Impartiality—समदर्शन
Impeach—दोष लगाना
Impediment—बाधा, विघ्न
Imperative—आदेशक, नियोजक
Imperfect—अपूर्ण
Imperial—राजकीय
Imperishable—अनश्वर, अविनाशी
Implicit—अधिगत, अनुक्त, किंतु ज्ञात
Impracticable—अव्यावहारिक
Impressive—प्रभावोत्पादक
Improve—उन्नति करना
Improvement—प्रगति, सुधार
Impulse—संवेदना
Impulsive—आवेगपूर्ण
Imputation—आरोप, आक्षेप

Inactive—अकर्मण्य
Inanimate—अचेतन
Inattentive—असावधान
Incapable—अयोग्य, अक्षम
Incarnation—अवतार
Incentive—प्रेरक, प्रबोधक
Incessant—सतत, लगातार
Incidental—प्रासंगिक
Incipient—प्रारंभिक, इब्तदाई
Incivility—असभ्यता
Inclusion—समावेश
Incoherence—असंबद्धता
Income tax—आमदनी टैक्स
Incommensurate—असमान, अपर्याप्त
Incompatible—असंगत
Incomprehensible—अबोध्य, दुर्गम
Inconceivable—अचिंत्य
Inconclusive—विवादग्रस्त
Inconsistent—असंगत, विरोधी, बेमेल
Incontestable—निर्विवाद
Inconvenient—असुविधाजनक
Incorporate—मिश्रित, मिलाना
Incorporeal—अशरीरी, आत्मिक

Incorrigible—अशोध्य, असाध्य
Incredible—अविश्वसनीय
Indeclinable—अव्यय
Indefinite—अनिश्चित
Indescribable—अवर्णनीय
Indeterminate—अनिर्णीत, संदिग्ध
Index—सूची
Indicate—सूचन
Indirect—परोक्ष, व्यवहित
Indirect inference—व्यवहितानुमान
Indiscretion—अविवेक
Indisputable—निर्विवाद
Individual—व्यक्ति, वैयक्तिक
Induce—उभाड़ना
Industrial—औद्योगिक
Industry—उद्योगधन्धा
Inalienable—अवियोज्य
Inertia—तमस्, तमोगुण
Infancy—बाल्य, बचपन
Inference—अनुमान नतीजा
Infinitesimal—सूक्ष्मातिसूक्ष्म
Inflection—विभक्ति, रूपचालन
Influential—प्रभावशाली
Informant—विज्ञापक, निवेदक
Ingratitude—कृतघ्नता
Ingredient—उपादान, उपकरण
Inherent—अन्तर्वर्ती, स्वाभाविक
Initiate—दीक्षा देना
Initiation—संस्कार, दीक्षा
Initiative—मूल, सूत्रपात
Inscribe—शिलालेखन
Inscription—शिलालेख
Insight—परिज्ञान, अन्तर्दृष्टि
Insignificant—मामूली, तुच्छ
Insolvent undischarged—दिवालिया जो बरी न किया गया हो
Inspire—हौसला देना, उत्तेजना देना
Inspector—निरीक्षक, सपट्टर
Instigate—उकसाना
Institution संस्था
Instant—आधुनिक, हाल का
Instinct—प्रवृत्ति, अन्तःप्रेरणा
Institute—संस्था, स्थापन
Instruction—हिदायत
Instrument—पट्टा, साधन
Integral—संपूर्ण, आवश्यक भाग
Integrity—पूर्णता, ईमानदारी
Intellect—बुद्धि, ज्ञान

Intelligence – विवेक, बुद्धि
Intelligent – विज्ञ, मनीषी
Intense – गहन, घन
Interest – हित, भलाई, सूद
Interference – हस्तक्षेप
Interior – अन्तर, आन्तरिक
Interlinear – पंक्तियों के बीच लिखा हुआ
Intermediate – अन्तर्वर्ती
Interminable – अनन्त, अटूट
International – अन्तर्राष्ट्रीय अन्तर्देशीय
Interpolate – क्षेपण, मिश्रण
Interpret – व्याख्या करना
Interrogate – प्रश्न करना
Interrogatory – प्रश्नवाचक
Interview – भेंट
Intoxication – मादकता, नशा
Intricate – जटिल, गूढ़
Intrinsic – अन्तर्निहित, असली
Introduction – परिचय, भूमिका
Introspect – चिंतन, मनन
Intuition – अंतर्ज्ञान
Intuitive knowledge – सहज ज्ञान
Invent – आविष्कार करना
Inventory – सूची
Investigate – खोज, परीक्षण
Inverse – विपरीत
Inversion – विपरीतता
Investigation – जांच
Invocation – स्तुति, प्रार्थना
Ironical – व्यंग्यात्मक
Irony – व्यंग, वक्रोक्ति
Irrational – विवेकहीन, विवेक-विरुद्ध
Irregular – अनियमित
Irrelevant – अप्रासंगिक, विषयान्तर
Irrigation – सिंचन
Irrespective – निरपेक्ष
Irritability – चिड़चिड़ापन
Item – मद
Jails and Convict Settlements – कारागार तथा बन्दी बस्ती
Jargon – अनर्गल शब्द
Jealousy – ईर्ष्या
Jestor – विदूषक
Jocular – रसिक
Jocundity – आनन्द
Joint Secretary – संयुक्तसचिव

Jot—नोट करना
Journalism—पत्रकार कला
Jubilation—हर्षोद्गार
Judgment—फैसला, निर्णय
Jurisdiction—दायरा, अधिकार, अमलदारी
Jurist—नियमलेखक, नियमज्ञ
Keen—उत्सुक, तीव्र
Keynote—सार, लेखसार
Kindred—सजातीय, सगोत्रीय
Knotty—गहन, टेढ़ा
Knowledge—ज्ञान
Label—चिप्पी
Labial—ओष्ठ्य
Laboratory—प्रयोगशाला
Laconic—संक्षिप्त
Land survey—भू-मापन
Landscape—रमणीय प्राकृतिक दृश्य
Lapse—अपने आप खत्म होना
Late—स्वर्गीय
Lateral—पार्श्विक
Laud—प्रशंसा, भजन
Laudable—स्तुत्य
Lawful—न्यायसंगत
Lawlessness—अव्यवस्था
Leaflet—ट्रैक्ट
Learning—ज्ञान, विद्या
Lease—पट्टा
Legal—कानूनी
Legal tender—कानूनी मुद्रा
Legend—पौराणिक कथा
Legible—पढ़ने योग्य
Legislation—नियम-निर्माण
Legislative Assembly—विधान-सभा
Legislative Council—विधान-परिषत्
Legitimate—उचित, औरस
Level—तल
Lexicon—कोश
Lexicographer—कोशकार
Liability—देनदारी
Libel—मानहानि (लेख में)
Life-long—जीवन भर
Lightheaded—विचारहीन
Limited company—परिमित संस्था
Lineage—वंश, वंशपरंपरा
Lineal—परंपरागत
Lingual—मूर्धन्य
Linguistic—भाषाविज्ञान

Literacy—साक्षरता
Lithograph—पत्थर छापे का यन्त्र
Lobby—कक्ष
Local—स्थानीय, मुकामी
Locative—सप्तमी विभक्ति, अधिकरण
Logic--तर्कशास्त्र
Logogram--शब्दसंकेत
Loyalty--राजभक्ति
Lullaby--लोरी
Lore—सिद्धान्त, ज्ञान
Lyric—गीत
Lyric poet—गीतिकार
Lyrical poems—गीतिकाव्य
Magnify—बढ़ाना
Maiden speech—पहली वक्तृता
Manager व्यवस्थापक
Mandate—आज्ञा, निर्णय
Manifest—प्रत्यक्ष
Manifestation--अभिव्यक्ति
Manifold—बहुत, अनेक
Man of letters-विद्वान्, साहित्यिक
Manifesto—घोषणापत्र
Manner—ढंग
Manual—गुटका
Manuscript--हस्तलिखित पुस्तक
Map—नकशा, चित्र,
Marrow—सार, तत्त्व, मज्जा
Marvellous—आश्चर्यजनक
Masterpiece—उत्कृष्ट रचना
Material—मूर्त, स्थूल, सामान
Materialism—भौतिकवाद, जड़वाद
Matter of fact—वास्तव, यथार्थ
Maxim—कहावत, लोकोक्ति
Measure--परिमाण
Mechanic—शिल्पी
Mediate—विचाव
Mediocre—सामान्य, मध्यम
Medium—माध्यम
Melodious—सुरीला, मधुर
Melody—संगीत, लय
Memento—स्मारक
Memoir—इतिहास, विवरण
Memorable—स्मरणीय
Memorandum—स्मरणलेख, स्मार पत्र
Memorial—आवेदनपत्र, स्मारक

Memorise—याद करना, रटना
Mentor – संमतिदाता
Merit – गुण
Messenger—दूत, संदेशवाहक
Metmaorphose—रूपान्तरण, कायापलट
Metaphor—उपमा, अलङ्कार
Metaphysics—आत्मज्ञान, अध्यात्मशास्त्र
Method—ढङ्ग, प्रणाली
Methodize – व्यवस्थान
Miniature – सूक्ष्म रूप, छोटी मूर्ति
Minimum—न्यूनतम
Minstrel—गवैया, भाट
Miracle—चमत्कार
Misappropriation—दुरुपयोग
Misleading – भ्रमोत्पादक
Mode – प्रकार, रीति
Model—आदर्श, प्रतिमा
Moderate—मध्यम, नरम
Modification—रूपान्तर
Monetary—आर्थिक
Monism—ब्रह्मवाद
Monopoly—एकाधिकार
Monosyllable—एकाक्षर
Monotheism – अद्वैतवाद
Monotonous - एक सा थकानेवाला
Monotony समानता, एकरूपता
Monumental स्मरणीय
Moot – शास्त्रार्थ
Morality – सदाचार
Morale – नैतिक स्थिति,
Moralize—धर्मोपदेश करना
Morphology—रूपविचार
Motto—सिद्धान्तवाक्य
Museum—अजायबघर
Mutation—परिवर्तन, अस्थिरता
Mysticism—रहस्यवाद
Mythology—पौराणिक कथा
Narrate—वर्णन करना
Narration—वर्णन
Nation—राष्ट्र
Natural instinct—स्वाभाविक प्रवृत्ति
Negligence—उपेक्षा
Neutral—तटस्थ, निष्पक्ष
Nicety—सूक्ष्मता
Nomenclature—परिभाषा
Nominated—नामजद

Non-divisible expenditure—अभाज्य व्यय
Nominative case—कर्ता
Non-recurring expenditure—अनावर्तिव्यय
Notation—अङ्क विद्या
Noteworthy—ध्यान देने योग्य
Notion—विचार, धारणा
Novelty—नई वस्तु
Nucleus—सार, तत्त्व
Numeral—संख्यावाचक
Numismatic—मुद्रासंबन्धी
Numismatics—मुद्राविज्ञान
Objection—आपत्ति, खंडन
Obligation—दायित्व
Oblique—तिर्छा
Observatory—अवलोकनशाला
Observe—निरीक्षक
Obsolete—अप्रचलित
Obstinate—जिद्दी, निर्बन्धी
Oddity—विचित्रता
Ode—गान
Omission—भूलचूक, उपेक्षा
Omnipotent—सर्वशक्तिमान्
Omnipresent—सर्वव्यापक
Omniscience—सर्वज्ञता
Onomatopoetic—अनुकरण मूलक, ध्वन्यात्मक
Opera—गीतिनाट्य
Operation—अमल, चीरफाड़
Operative—क्रियात्मक
Opponent—विरोधी, विपक्षी
Optimism—आशावाद
Option—रुचि, छांट
Optional—ऐच्छिक, वैकल्पिक
Oracle—देववाणी
Oral—मौखिक
Orator—वक्ता
Oratory—भाषणकला
Organ—अवयव
Organic—अवयवी, चेतन
Organise—संघटन
Orgg—धूम-मस्ती
Origin—मूल, उत्पत्ति
Orthodox—कट्टरपंथी, रूढिवादं
Outcome—फल
Outline—रूपरेखा
Outlook—दृष्टिकोण
Pacifism—शांतिवाद
Pagan—मूर्तिपूजक
Pageant—लीला
Palatal—तालव्य

Paleography—लिपिशास्त्र
Panel—नामावली
Pantheism—सर्वेश्वरवाद
Parable—उपमा, दृष्टान्त
Paramount—सर्वोच्च, विशिष्ट
Parody—व्यंग्यलेख
Parse—शब्दान्वय
Particular—विशेष
Particulars—विवरण
Partnership—साझा
Password—संकेत शब्द
Passion—आवेग, आसक्ति
Pastime—मनोरञ्जन, क्रीडा
Pastoral—देहाती
Pathetic—करुण, हृदयस्पर्शी
Patriot—देशभक्त
Patronage—संरक्षण
Pedagogue—शिक्षक
Pedantic—विद्याभिमानी
Pedigree—वंशावली
Penalty—दण्ड
Perceptible—बोध्य, ग्राह्य
Perfection—पूर्णता
Periodic—कालिक
Periodical—पत्रिका
Permanent—स्थिर
Permission—अनुमति
Perpetuate—स्थिर करना
Personage—मान्य व्यक्ति
Personality—व्यक्तित्व
Perspicuous—स्पष्ट
Pervade—व्याप्त होना
Pessimism—निराशावाद
Petition—प्रार्थना पत्र, अरज़ी
Phase—रूप
Phenomenon—दृश्य विषय
Philanthropy—विश्वप्रेम
Philalogy—भाषा-विज्ञान
Phonetic—ध्वनिसंबंधी
Phonetic Law—ध्वनि-नियम
Phraseology—वाक्यरचना
Physics—भौतिक विज्ञान
Physiology—शरीर शास्त्र
Pictorial—चित्रमय
Pictorial poetry—चित्रकाव्य
Picturesque—सुन्दर, रमणीय
Pitch—स्वर
Plan—योजना
Play—नाटक
Pleasantry—हास्य, प्रमोद
Plot—कथा

Poesy—छंदविद्या, काव्यरचना
Poetic faculty—प्रतिभा
Polemic—विवादग्रस्त, शास्त्रार्थ, शास्त्रार्थ कर्ता
Politics—राजनीति
Poll book—निर्वाचन सूची
Portrait—प्रतिकृति
Positive—विध्यात्मक
Possibility—संभावना
Posthumous—मृत्यु के बाद
Postscript—अनुलेख
Preamble—पूर्वपीठिका, प्रस्तावना आमुख
Precedence—अग्रगमन, पहल
Precept—नियम, विधि
Precise—संक्षिप्त
Precision—यथार्थता, नपातुलापन
Predominant—प्रबल
Pre-eminent—सर्वप्रधान, श्रेष्ठ
Preface—भूमिका, प्रस्तावना आमुख
Preference—प्रश्रय, झुकाव
Preference of a charge—इलजाम का लेखा पेश करना
Pregnant—गर्भवती, गूढ़ार्थक
Prejudice—पक्षपात
Preliminary—प्राथमिक, प्रारंभिक
Prelude—प्रारम्भ, मंगलाचरण
Prescribe—निर्धारित करना, व्यवस्था देना
Presentation—उपहार, प्रदर्शन
Presume—अनुमान करना, मान लेना
Presumption—अनुमान
Pretension—बहाना,
Priceless—अमूल्य
Primary—प्रारंभिक, इब्तदाई
Prime—मुख्य
Primeval—आदिकालीन
Primitive—प्राचीन, मौलिक
Privilege—विशेषाधिकार
Prize—इनाम, पारितोषिक
Problem—समस्या
Procedure—पद्धति, कार्यप्रणाली
Proceedings—कार्रवाई
Proclivity—झुकाव
Procreate—उत्पादन
Production—उत्पादन
Productive—उत्पादक
Profession—पेशा
Programme—कार्यक्रम

Progressive—प्रगतिशील,
Progenitor—जनक
Prohibition—निषेध, अवरोधन, मनाही
Proclamation—घोषणा
Prologue—प्रस्तावना, नाटकारंभ
Pronouncement—विज्ञप्ति सूचना
Propagandist—प्रचारक
Propensity—प्रवृत्ति, झुकाव
Prophecy—भविष्यवाणी
Prophet---भविष्यवक्ता
Proportion---अनुपात, निसबत
Proportional---अनुपाती, अनुरूप
Proposition---प्रस्ताव, साध्य
Prorogation---बरखास्त करना
Prosaic---नीरस
Proscribe---ज़ब्त करना
Prosody---छन्दशास्त्र
Prospectus---विवरणपत्रिका, पाठविधि
Protest—विरोध
Providence-परमात्मा, दूरदर्शिता
Provision—इंतजाम, शर्त
Provisional—अल्पकालीन, कामचलाऊ
Proviso—शर्त, बन्धन
Provocation—आवेश, उत्तेजना
Psalm—भजन, स्तोत्र
Pseudonym—कल्पित नाम
Psychology—मनोविज्ञान
Public health department—लोक-स्वास्थ्य-विभाग
Public opinion—लोकमत
Public Service Commission—सरकारी नौकरी कमीशन
Public utterance—सार्वजनिक, भाषण
Public accounts—लोकलेखा, सरकारी खाता
Publicity—प्रकाशन
Pun—वक्रोक्ति
Purport—सार, तत्त्व
Purpose—उद्देश्य, ध्येय
Qualification—योग्यता, गुण
Quality---गुण, स्वभाव
Quantity—परिमाण, मात्रा
Quarto—चौपेजी
Query—प्रश्न, शंका
Quiet—शान्त, चुप
Quota—अंश, भाग
Quotation—उद्धरण, अवतरण

Quotient—भागफल
Race—जाति, नस्ल
Radical—मौलिक
Radical reform—आमूल सुधार, मौलिक सुधार
Ramification—वर्गविभाजन
Rank—पद, श्रेणी
Rant—बकवास
Rapt—लीन
Rare—असाधारण
Ratify—अनुमोदन करना, पोषण
Rational—तर्कपूर्ण, विवेकशील
Reaction—प्रतिक्रिया
Reactionary—प्रतिकारक
Realism—यथार्थवाद, प्रत्यक्षवाद
Reason—तर्क, कारण
Reasonable—उचित
Reasoning—युक्ति, तर्क
Recapitulate—सारकथन, संक्षेप
Reciprocal—पारस्परिक
Recitation—कथन, वर्णन
Recognition—स्वीकृति, पहचान
Recommendation—प्रशंसन, सिफारिश
Reconnaissance—प्रथमपरीक्षण
Reconstruction—पुनर्निर्माण
Rectify—शोधन
Redemption of loan—कर्ज़ा चुकाना
Reference—निर्देश, प्रसंग, प्रकरण
Refined—शुद्ध, संस्कृत
Reflective—भावात्मक
Reformatory—सुधार-संस्था
Refute—खंडन करना
Regulation—कायदा
Regeneration—पुनरुत्पत्ति
Region—क्षित्त, प्रदेश
Rehearsal—पूर्व प्रयोग, पूर्वाभिनय
Rehabilitation—फिर से बसाना
Rejoinder—प्रत्युत्तर
Relevant—संगत, अनुरूप
Reluctant—अनिच्छुक
Remark—विशेष विवरण
Remedy—उपाय
Reminiscence—स्मरण
Remuneration—मेहनताना

Renaissance—नवोत्तन्मेष
Renovation—पुनर्जीवन, पुनरुद्धार
Renoun—ख्याति
Report—संवाद, सूचना, विवरण
Representation—प्रतिनिधान, नुमाइन्दगी
Republic—प्रजातन्त्र
Republican—प्रतिनिधि-शासन-सम्बन्धी
Repute—कीर्ति, यश
Research—खोज, गवेषणा
Reserve—संचय, संग्रह
Resident—निवासी
Residuary powers—शेष अधिकार
Resolution—ठहराव, प्रस्ताव
Resource—युक्ति, साधन
Respite—मोहलत
Response—उत्तर
Responsible—उत्तरदायी
Restoration—पुनःस्थापन
Returns—आय, लेखा
Reveal—प्रकाशित करना, प्रकट करना
Review—आलोचना
Revise—दोहराना
Hevival—जागरण, पुनर्जीवन
Revoke—मंसूख करना
Revolution—क्रांति, विप्लव
Rhapsody—महाकाव्य, ओजपूर्णरचना
Rhetoric—अलंकारशास्त्र
Rhythm—लय
Right—अधिकार, उचित
Rigidity—कठोरता, दृढ़ता
Rite—आचार, संस्कार
Rival—प्रतिस्पर्धी
Romanticism—स्वच्छंदतावाद
Root—धातु, मूल
Rostrum—सभामञ्च
Route—क्रम, मार्ग
Routine—दिनचर्या, कार्यक्रम
Royalty—पारिश्रमिक
Rudiment—मूल, तत्त्व, प्रारंभ
Rumour—जनप्रवाद, उड़ती बात
Rural—ग्राम्य
Sagacious—बुद्धिमान, दूरदर्शी
Salary—वेतन
Salesmanship—विक्रयकला
Salvation—मुक्ति
Sanitation—सफाई

Sarcasm—ताना, कटाक्ष
Satire—व्यंग्य, उपहास, व्यंग्ययुक्त रचना
Satrapy—प्रान्त
Satisfaction—संतोष
Saturn—शनैश्चर, सनीचर
Scan—परीक्षण, छंदमात्रा गिनना
Scene—दृश्य
Sceptic—संशयी, जिसका धार्मिक वस्तुओं में भरोसा न हो
Schedule—सूची, पट्टी
Scheme—योजना
Scholarship—छात्रवृत्ति, विद्वत्ता
Scientific glossary—वैज्ञानिक कोश
Scope—क्षेत्र, अवधि
Script—लिपि, लिखावट
Scripture—धर्मग्रन्थ
Scroll—प्राचीन हस्तलेख, सूची
Scrutinize—परीक्षण, निरीक्षण
Sculptor—शिल्पकार
Seclude—पृथक्करण
Seclusion—निर्जनता, एकान्त
Seal—मुहर
Secondary—गौण, अप्रधान
Secondary education—माध्यमिक शिक्षा
Second rate—सामान्य, दोयम
Secrecy—गुप्ति
Secretariat—सचिवालय
Secretary—अमात्य, सचिव, मंत्री
Sect—मत, संप्रदाय
Section—खंड, धारा
Secular—लौकिक, ऐहिक
Security—सुरक्षा
Sedition—राजद्रोह
Segregation—पार्थक्य,
Select—निर्वाचन, छंटा हुआ
Self-determination—आत्म-निर्णय
Self-sufficiency—आत्मनिर्भरता
Semantics—अर्थविचार
Semblance—आभास
Seminary—विद्यालय
Senior—बड़ा
Sensation—ज्ञान (इंद्रियजन्य)
Sense—समझ, ज्ञान
Sensitive—समझदार, अनुभव वाला
Sentient—चेतन
Sentimental—भावुक, रसिक

Sequence of events घटनाक्रम
Serene—शांति, निर्मल
Serial—क्रमिक
Series—माला
Serious—गंभीर
Session—बैठक, अधिवेशन, इजलास
Severe—गंभीर, तीव्र
Sexual appetitite—कामुकता
Shadow—छाया, परछाईं
Showy—दिखावटी, आडंबरी
Short hand—आशुलिपि
Sign—चिह्न, हस्ताक्षर
Significance—महत्त्व, विशेषता
Simile—उपमा
Similitude—समानता
Simplification—सरल बनाना
Sincere—निर्व्याज, निष्कपट
Situation—स्थिति
Sketchy—अपूर्ण, संक्षिप्त
Slander—अपवाद, अपयश
Slang—गंवारू भाषा
Slavery—दास्य
Snap-shot—भावचित्र
Social intercourse—सामाजिक संसर्ग
Socialism—समाजवाद
Sociologist - समाजशास्त्री
Solemn—गंभीर
Solicitous—प्रार्थी, उत्सुक
Solid—ठोस
Soliloquy—स्वगत भाषण
Song-craft—गानकला
Songster—गायक
Sonnet—गीत
Soothsage—भविष्यवक्ता
Souvenir—स्मृतिचिह्न
Spacious—विस्तीर्ण
Specialist—विशेषज्ञ
Specified—दिखाया, निर्दिष्ट
Specimen—आदर्श, नमूना
Sphere—लोक
Spiritual—आत्मिक, ईश्वरीय
Stable—टिकाउ
Staff—अमला
Spontaneous—स्वतः-प्रवर्ती
Standard—मान
Stanza—श्लोक, मन्त्र
Statistician—अङ्कशास्त्री
Statue—मूर्ति, प्रतिमा
Stenographer—आशुलिपिक
Status - पद

Stipend—वृत्ति
Strain—श्रम
Stress—बल, प्रयत्न
Stricture—विरुद्ध आलोचना
Style—शैली
Sub-division—उपविभाग
Subjective—आत्मलक्षी
Sublime—ऊर्जस्वी, उन्नत
Subordinate—अधीन, आश्रित
Subscribe—ग्राहक बनना, हस्ताक्षर करना
Sub-section—उपधारा
Substance—तत्त्व, सार
Substantiate—सिद्ध करना, प्रमाणित करना
Substitute—प्रतिनिधि
Success—सफलता
Succession—विरासत
Succinct—संक्षेप से वर्णित
Suggestion—निर्देश, सलाह
Suggestive—व्यंजक
Superb—आढ्य, श्रेष्ठ
Superfluous—फोका, अनावश्यक
Superintendent—अधीक्षक
Superiority - श्रेष्ठता
Supernatural—अलौकिक, अद्भुत
Superstition—अन्ध विश्वास
Supplementary—पूरक, परिशिष्ट
Supreme—श्रेष्ठ, परम
Surcharge—अधिक टैक्स
Surrounding—वातावरण
Syllabus—पाठविधि
Symbol—संकेत, प्रतीक
Symbolism—प्रतीकवाद
Symmetry—सुडौलता, सुषमा
Sympathy—सहानुभूति
Syncope—स्वर-लोप
Syndicalism—संघवाद
Synonym—पर्यायवाची
Synopsis—संक्षेप, सार
Syntax—वाक्यविचार, वाक्य-रचना
Synthesis—संश्लेषण
Synthetic—संयोगात्मक, संयुक्त
System—पद्धति, प्रणाली, तरीका
Table—सूची, तालिका
Taciturn—अल्पभाषी
Tactics—युक्ति
Talent—प्रज्ञा, मति
Talkative—वाचाल
Tantamount—समान, तुल्य
Taste—रस, स्वाद

Taunt—ताना, व्यंग्य
Tautology—पुनरुक्ति
Technical—पारिभाषिक, तकनीकी
Technique—कला, विधान
Temerity – अविवेकपूर्वक काम करने की वृत्ति
Temperance—संयम
Tenacious—पक्का, अध्यवसायी
Tendency—झुकाव, प्रवृत्ति
Tender—कोमल
Tension—खींच, मनमुटाव
Terminal-tax – सीमावारी टैक्स
Terminology—पारिभाषिक शब्द
Territory—इलाका
Terror—आतङ्क
Tertiary—तृतीय
Testify—प्रमाणित करना
Testimony—साक्ष्य
Theism—आस्तिकता
Theme—विषय, प्रसंग
Theology—ब्रह्मविद्या धर्मपाठ
Theorem—उपपत्ति सूत्र, प्रमेय
Theoretical—सैद्धान्तिक
Theory—सिद्धान्त, मत
Theosophy—ब्रह्म-विद्या
Thesis—प्रबन्ध
Thoughtful– विचारशील
Token—चिह्न, स्मारक
Tolerance—सहनशीलता
Tome—बड़ा ग्रन्थ
Tone—ध्वनि, राग
Tonic—राग संबन्धी
Topic—विषय, प्रकरण
Total—कुल, योग
Touch—स्पर्श
Tourist—यात्री
Trade—व्यापार
Tradition—परंपरागत ज्ञान
Traffic in human beings—इंसानों का व्यापार
Tragedy—दुःखान्त नाटक
Trained—अभ्यस्त, मंजा हुआ
Tranquillity—शान्ति
Transcendental—अत्युत्तम, पारलौकिक
Transcribe—प्रतिलिपि करना
Transfer—बदली, स्थानांतरण
Transformation—रूपान्तर
Transient—अनित्य, क्षणिक
Transitional period—पारक, परिवर्ती

Transitive—अकर्मक
Translation—अनुवाद
Transliterate—एकलिपि से दूसरी लिपि में लिखना
Transmigration—पुनर्जन्म
Transmit—भेजना, प्रेषण
Transportation for life—काला पानी
Transpose—क्रम-परिवर्तन
Trespass—अतिक्रमण
Tribal—जातीय
Tributary—सहायक
Triplicate तीन बनाना
Typography—मुद्रणकला
Tyrant—अत्याचारी, आततायी
Ultimate—अन्तिम
Ultimo—गतमास
Umpire—मध्यस्थ
Unanimity—ऐकमत्य
Unanimous—सर्वसंमत
Unbalanced—असंयत, डिगा हुआ
Unbiased—पक्षपात-रहित
Uncommon—अपूर्व, असामान्य
Unconditional—शर्तरहित, प्रतिबन्धरहित
Unconstitutional—अवैध
Undeniable—अतिषेध्य, जिसका खंडन न किया जा सके
Undermentioned—निम्नलिखित
Under-rate—कम कीमत आंकना
Under-Secretary—उपसचिव
Undertaking—हाथ में लेना, करने का वचन
Unemployment—बेकारी
Unequivocal—स्पष्ट, असंदिग्ध
Uneven—असमान
Uniform—सरूप,
Union—संघ
Unique—अद्वितीय
Unit—इकाई
Unitary—इकाई-संबन्धी
Unit of appropriation—नियोजन-इकाई
Unity—एकता
Universal—सार्वजनिक
Universalism—विश्ववाद
Universe—विश्व
Unlimited—अपरिमित
Unproductive—अनुत्पादक
Unqualified—अयोग्य
Unstable—अस्थायी

Unusual—असाधारण
Unworldly – असांसारिक
Upheaval – विप्लव
Urban – नागरिक, शिष्ट
Urgent – आवश्यक
Usage – व्यवहार
Utilitarian – उपयोगितावादी
Utopia—काल्पनिक सुखलोक
Utterly—नितान्त, बिलकुल
Utterance— उच्चारण
Vacancy—खाली जगह, रिक्तपद
Vacillation – अस्थिरता
Vagary—लहर, आवेग
Vain – व्यर्थ
Valid—संगत, वैध
Validation—वैधकरण
Vanity—अहंकार
Variety—विविधता, भिन्नता
Vast—महान्, विपुल
Vehement—प्रचंड
Verbiage—शब्द-बाहुल्य
Verbose—शब्द-प्रचुर,
Verdict—निर्णय
Verify—प्रमाणित करना
Veritable—यथार्थ, सत्य
Verity—सत्य
Vernal—वासंती
Versatile—परिवर्ती, बहुज्ञानी
Verse—कविता
Version—पाठ, वक्तव्य
Veterinaιy department—पशु-चिकित्सा-विभाग
Veto—निषेध
Vice—अवगुण
Vigous—ओज
Vigorous—ओजपूर्ण
Villain—दुष्ट, नीच
Virtue—गुण, सदाचार
Visible—प्रत्यक्ष
Vision—दृष्टि, आभास
Visual—चाक्षुष, दृष्टि-संबन्धी
Vital—आन्तरिक, जीवन-सम्बन्धी
Vitiated—दूषित
Vivacious—सजीव
Vivid—विशद
Vocation—धन्धा
Voiced—घोष
Void—खाली, निःसत्व
Volition—इच्छाशक्ति
Vote—मत
Volunteer—स्वयंसेवक
Vulgar—अशिष्ट

Wake—जागरण
Ward—आश्रित
Warning—चेतावनी
Warrant—आज्ञापत्र
Wave—तरंग
Wireless—बेतार
Weak—क्षीण, निर्बल
Well-to-do—सुसंपन्न
Whim—तरंग, मौज
Wild—उन्मत्त, असभ्य
Wisdom—ज्ञान, पांडित्य
Wise—चतुर
Witted—विवेकी
Worldly—भौतिक, व्यावहारिक
Worth—मूल्य, योग्यता
Writ—लेख, आज्ञापत्र
Yearn—प्रबल इच्छा करना
Yield—झुकना, देना
Yoke—जुआ, भार
Youngster—किशोर
Zeal—उत्साह, ओज
Zenith—पराकोटि, पराकाष्ठा
Zest—अभिरुचि
Zone—मंडल, चक्र
Zoologist—प्राणिविद्या-विशारद